ISSN : 2348-2656
चौदहवां अंक

पूसा सुरभि

अक्टूबर, 2019–मार्च, 2020

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली–110012

ISSN : 2348-2656

चौदहवां अंक

पूसा सुरभि

अक्टूबर, 2019 - मार्च, 2020

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली-110012

पूसा सुरभि

अक्टूबर, 2019 - मार्च, 2020

संरक्षक एवं अध्यक्ष

डॉ. अशोक कुमार सिंह

निदेशक

संपादक

केशव देव

उप निदेशक (राजभाषा)

संपादन मंडल

डॉ. दिनेश कुमार, प्रधान वैज्ञानिक, सस्य विज्ञान संभाग

डॉ राम रोशन शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग

राजेन्द्र शर्मा, मुख्य तकनीकी अधिकारी, कृषि ज्ञान प्रबंधन इकाई

सुनीता, सहायक निदेशक (राजभाषा)

संपर्क सूत्र

उप निदेशक (राजभाषा)

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

दूरभाष: 011-25842451

ISSN - 2348-2656

आवश्यक सूचना

इस अंक में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों/आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है।

मुद्रण: दिसंबर, 2020

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली के लिए हिंदी अनुभाग द्वारा प्रकाशित एवं

मै. एम एस प्रिंटर्स, सी-108/1 बैक साइड नारायणा इंडस्ट्रीयल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110028

फोन: 7838075335, ईमेल: msprinter1991@gmail.com

आमुख

भारत देश की मुख्य आबादी गांवों में रहती है और अपनी आजीविका के लिए वह प्राय: कृषि पर ही निर्भर है। कृषि के विविध कार्यों में मुख्य रूप से कृषकों एवं ग्रामीण श्रमिकों का योगदान होता है। इन्हीं कृषकों ने देश को खाद्यान में आत्मनिर्भरता प्रदान करने में अपनी अहम् भूमिका निभाई है। देश इसके लिए हमेशा इनका ऋणी रहेगा। आज आवश्यकता इस बात की है कि किसानों और ग्रामीणों को आत्मनिर्भर कैसे बनाया जाए, ताकि उनका जीवन सुख एवं समृद्धि से परिपूर्ण हो सके। इसके लिए उनकी कृषि आय में वृद्धि करना नितांत आवश्यक हो जाता है। आय वृद्धि के लिए सबसे महत्वपूर्ण है कि किसानों को उनके कृषि उत्पाद का लाभकारी मूल्य प्राप्त हों, रोज़गार के अवसरों में बढ़ोतरी हो और इसके अतिरिक्त उन्हें शिक्षित भी किया जाए। इस दिशा में कृषि उत्पाद को बाजार उपलब्ध कराने के लिए न्याय पंचायत स्तर पर भी गांव बाजार हाट विकसित करने की आवश्यकता है।

जलवायु परिवर्तन से कृषकों की आय, फसल उत्पादन एवं प्राकृतिक संसाधनों पर प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की आशंका है। अब प्रश्न उठता है इन विषम परिस्तिथियों में प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित रखते हुए कृषि आय को किस प्रकार बढाया जाए? अतः उपर्युक्त परिस्थिति में आय वृद्धि के लिए अनेक विकल्पों में से एक है समेकित कृषि प्रणाली, जो इस दिशा में अपना विशेष योगदान दे सकती है। इस प्रणाली में सस्य, फल एवं सब्जी फसलों के उत्पादन के साथ-साथ किन्हीं दो अथवा उससे अधिक उपक्रमों/उद्यमों को समाहित किया जा सकता है। ये संभावित उपक्रम पशुधन, बायोगैस संयंत्र, मुर्गी पालन, बत्तख पालन, सूअर पालन, रेशम कीट पालन, मधुमक्खी पालन, बकरी पालन, भेड़ पालन, मछली पालन, मशरूम उत्पादन और कृषि-वानिकी आदि हैं। साथ ही गांव अथवा प्रक्षेत्र स्तर पर खाद्य प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन को अपनाया जाना चाहिए। इन सब के माध्यमों से कृषकों एवं अन्य ग्रामीणों की आय और आत्मनिर्भरता दोनों के बढ़ने की आशा की जा सकती है।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिकगण कृषकों की आय और आत्मनिर्भरता हेतु सदैव प्रयासरत हैं। इस हेतु वे लगातार नवीन अनुसंधानों की खोज में लगे हुए हैं और अपनी खोज को भारत सरकार की राजभाषा हिंदी के माध्यम से किसानोपयोगी विविध कृषि साहित्य उपलब्ध करवा रहे हैं। इसी क्रम में संस्थान की गृह पत्रिका **"पूसा सुरभि"** का चौदहवां अंक आपके सम्मुख है। पत्रिका में प्रकाशित सामग्री से किसान व जन सामान्य निश्चित ही लाभ उठाएंगें। पत्रिका के नियमित प्रकाशन हेतु उप निदेशक (राजभाषा) श्री केशव देव एवं सुश्री सुनीता सहायक निदेशक (राजभाषा) बधाई के पात्र हैं। पत्रिका को आकर्षक बनाने व उत्कृष्ट संपादन के लिए संपादन मंडल के सदस्य डॉ दिनेश कुमार, प्रधान वैज्ञानिक डॉ राम रोशन शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, एवं श्री राजेंद्र शर्मा, मुख्य तकनीकी अधिकारी को भी बधाई। साथ ही पत्रिका में सम्मिलित लेखों के लेखकों के प्रति भी आभार, जिनके द्वारा उपलब्ध कराई गई सामग्री से यह प्रकाशन संपन्न हुआ।

(अशोक कुमार सिंह)
निदेशक

संपादकीय

भारत भाषाई विविधताओं में एकता वाला का देश है जिसमें अनेक भाषा व बोलियां प्रचलन में हैं, जो एक दूसरे की सहोदरा हैं। किंतु उनमें हिंदी अत्यंत सरल, सहज व सर्वग्राही भाषा है। इसमें देश को एक सूत्र में बांधने की अद्‌भुत क्षमता है, इन्हीं कारणों से देश की संविधान सभा ने इसको संघ के कामकाज के लिए राजभाषा के रूप में स्वीकार किया था। देश में वैज्ञानिकों तथा अनुसंधानकर्ताओं द्‌वारा किये जा रहे अनुसंधानों से प्राप्त उन्नत किस्मों व तकनीकों की जानकारी किसान तथा आमजन तक उनकी भाषा में सहज व सरल रूप से पहुंचाने की नितांत आवश्यकता तो प्रारंभ से ही रही है और आज समय की भी यही मांग है कि अनुसंधानों के माध्यम से एकत्र ज्ञान जितनी सरल व सहज भाषा में किसानों और आमजन तक पहुंचेगा, वह किसान और विज्ञान दोनों के लिए हितकर होगा।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान का हमेशा से ही यह ध्येय रहा कि संस्थान में हो रहे अनुसंधानों को किसानों और आमजन तक उनकी भाषा में उपलब्ध कराया जाए। इसके लिए राजभाषा हिंदी का स्थान सर्वोपरि है। संस्थान की अनुसंधानिक जानकारी को किसानों और आमजन तक पहुंचाने में संस्थान की गृह पत्रिका पूसा सुरभि अपनी अहम भूमिका निभा रही है। पत्रिका का यह अंक विविध उपयोगी जानकारियों से भरा है। इसमें जहां एक ओर लोकप्रिय वैज्ञानिक तकनीकी किसानोपयोगी विशिष्ट जानकारियां हैं, वहीं दूसरी ओर संस्थान व इसके क्षेत्रीय केंद्रों में आयोजित विभिन्न राजभाषा की गतिविधियों एवं अन्य उपयोगी जानकारियों को समाहित किया गया है। पिछले अंक की तरह पत्रिका की अवधि के बीच में किसानों द्वारा किए जाने वाले प्रमुख कृषि कार्यों की जानकारी को इस अंक में भी उपलब्ध कराया गया है। इसके साथ ही अंक के प्रारंभ में पिछले अंकों की भांति कृषि जगत की महान हस्तियों के जीवनवृत्त की कड़ी में एक नई हस्ती प्रोफेसर वीरेन्द्र लाल चोपड़ा, महान शिक्षक, कृषि वैज्ञानिक, शिक्षाविद एवं संस्थान निर्माता के जीवनवृत्त पर लघु प्रकाश डाला गया है।

मैं संस्थान के निदेशक महोदय एवं संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ, जिनके पत्रिका के प्रकाशन की सहर्ष स्वीकृति व उत्कृष्ट मार्गदर्शन से पत्रिका का यह 14वां अंक आपके समक्ष है। मैं पत्रिका के लिए यथा समय सामग्री उपलब्ध करवाने के लिए सभी लेखकों को भी धन्यवाद देने के साथ संपादन मंडल के सभी सदस्यगण डॉ दिनेश कुमार, प्रधान वैज्ञानिक, डॉ राम रोशन शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, श्री राजेंद्र शर्मा, मुख्य तकनीकी अधिकारी एवं सुश्री सुनीता सहायक निदेशक (राजभाषा) के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ, जिनके सहयोग से इस अंक का प्रकाशन सफल हुआ। सुधी पाठकों से आशा है कि वे पत्रिका में दी गई जानकारी का लाभ उठाते हुए इसको और अधिक रोचक व उपयोगी बनाने हेतु अपनी राय व्यक्त करेंगे।

(केशव देव)
उप निदेशक (राजभाषा)

विषय सूची

आमुख (iii)

संपादकीय (v)

तकनीकी खंड...

1. प्रोफेसर वीरेंद्र लाल चोपड़ा: महान शिक्षक, कृषि वैज्ञानिक, शिक्षाविद एवं संस्थान निर्माता 3

   - सुमेरपाल सिंह एवं राम कुमार शर्मा

2. खेती की वैकल्पिक प्रौद्योगिकियां 6

   - रणबीर सिंह, फार्म संचालन सेवा इकाई

3. गेहूं की रोग प्रतिरोधी किस्मों का खाद्यान्न सुरक्षा में आत्म निर्भरता के लिए 11

   - राम चरण मथुरिया, वैभव कुमार सिंह, मलक्षान सिंह गुर्जर, कौशल किशोर सावरिया, चंद्रेश चंदेल, रॉबिन गोगोई, महेंद्र सिंह सहारण एवं रश्मि अग्रवाल

4. टमाटर के प्रमुख रोग एवं उनका प्रबंधन 17

   - अर्चना उदय सिंह, राजेन्द्र शर्मा, रमेश चंद एवं सुभाष चंद

5. अधिक आय के लिए गेहूं में खरबूजे की रिले खेती 23

   - सुरेश चंद राणा, पी.बी. सिंह एवं विनोद कुमार पंडिता

6. अखरोट की उन्नत खेती 26

   - के.के. प्रामाणिक, ए.के.शुक्ला, मधु पटियाल एवं संतोष वाटपाडें

7. कृषि में आत्म निर्भरता एवं संसाधन संरक्षण हेतु आधुनिक कृषि मशीनों का प्रयोग 29

   - आर.आर. राणा, रणबीर सिंह, सुरेंद्र कुमार, अशोक दीक्षित, राजकुमार एवं दिनेश टाक

8. आम का मूल्यवर्धन 35

   - राम रोशन शर्मा

9. फलों के प्रमुख रोग एवं उनका निदान 40

   - अर्चना उदय सिंह

10. अक्टूबर से मार्च माह के मध्य किए जाने वाले प्रमुख कृषि कार्यों का विवरण 45

    - दिनेश कुमार

विविधा...

1. खाद्य एवं पोषण सुरक्षा: कुपोषण से सुपोषण की ओर 61

   - निशी शर्मा, प्रतिभा जोशी, गिरिजेश सिंह महरा, जे.पी.एस. डबास एवं पुनीता पी.

2. स्पिरुलिना: प्रोटीन एवं पोषण का वैकल्पिक स्त्रोत 69

   - शालिनी गौड़ रूद्रा, दीपक कुमार कोली, सुनील पब्बी, ज्ञानेंद्र सिंह

3. पर्यावरण संरक्षण में एवं किसानों की सुरक्षा के लिए पीड़कनाशियों का सुरक्षित प्रयोग 73

   - रेनु सिंह एवं रणबीर सिंह

4. रोजगारोन्मुखी कृषि के नए आयाम 77

- रणबीर सिंह

5. ऐसे करें आलू का मूल्यवर्धन 81

- अल्का जोशी

6. गुलाब से तैयार करें बहुउपयोगी एवं व्यावसायिक उत्पाद 84

- नामिता, एम.के. सिंह, सपना पंवर एवं एस.एस. सिंधु

7. गेंदे : आजीविका के लिए एक व्यवसायिक पुष्पीय फसल 89

- सपना पंवर, कॅवर पाल सिंह, नमिता एवं रीता भाटिया डे

8. शून्य लागत प्राकृतिक खेती- एक भ्रामक, अदृढ़ एवं अपरिपक्व विचार 95

- दिनेश कुमार

9. सफलता की कहानी : अभिषेक धामा 98

- जे. पी. एस. डबास

राजभाषा खड़...

1. भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान: राजभाषा प्रगति रिपोर्ट 2019-20 104

2. पुरस्कार व सम्मान 110

तकनीकी खंड...

प्रोफेसर वीरेंद्र लाल चोपड़ा: महान शिक्षक, कृषि वैज्ञानिक, शिक्षाविद एवं संस्थान निर्माता

सुमेरपाल सिंह एवं राम कुमार शर्मा

आनुवंशिकी संभाग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

प्रख्यात कृषि वैज्ञानिक प्रोफेसर वीरेंद्र लाल चोपड़ा का जन्म रावल पिंडी (पश्चिमी पंजाब) के पास अधवाल गांव में जो वर्तमान में पाकिस्तान में है, 9 अगस्त 1936 को हुआ था। उनके पिता का नाम श्री हरबंस लाल चोपड़ा एवं माता का नाम श्रीमती सुखवंती चोपड़ा था। सन 1947 में देश के विभाजन के समय उनके माता-पिता को दिल्ली के लिए प्रस्थान करना पड़ा। उस समय उनकी आयु मात्र 11 वर्ष की थी। उनके पिता एक शिक्षक थे। जो बाद में दिल्ली के रामजस स्कूल के प्रधानाचार्य भी बने।

शिक्षा

आपकी प्रारंभिक शिक्षा रामजस स्कूल दिल्ली में हुई। आपने वर्ष 1955 में सेंट्रल कॉलेज ऑफ़ एग्रीकल्चर (जो दिल्ली विश्वविद्यालय के अंतर्गत था) से कृषि स्नातक की उपाधि प्राप्त की। प्रोफेसर चोपड़ा ने 1955 से 1957 की अवधि के दौरान भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन के साथ वनस्पति संभाग में एसोसिएटशिप की एवं 1957 में आनुवंशिकी विषय में स्नातकोत्तर की उपाधि प्राप्त की। इसके बाद उन्हें "वरिष्ठ हम्बोल्ट छात्रवृत्ति" प्राप्त हुई एवं उन्होंने कोलोन विश्वविद्यालय, जर्मनी के आनुवंशिकी संस्थान में अध्ययन किया। जर्मनी से लौटने के बाद डॉ. चोपड़ा ने भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में वनस्पति संभाग (वर्तमान में आनुवंशिकी संभाग) में प्रोफेसर एम. एस. स्वामीनाथन के नेतृत्व में कोशिकानुवंशिकी के शोध कार्यो में अपना योगदान दिया। 1950 से 1960 के दशक में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में कोशिकानुवंशिकी अनुसंधान विश्व में सर्वोत्तम माना जाता था। वर्ष 1964 में प्रोफेसर चोपड़ा को चार्लोटे औरबच (Charlotte Auerbach) (प्रख्यात माइक्रोबियल एवं उत्परिवर्तन आनुवंशिकीविद्) एडिनबर्ग, स्कॉटलैंड के मार्गदर्शन में पी.एच.डी. करने का स्वर्णिम मौका मिला। उन्होंने वर्ष 1967 में एडिनबर्ग विश्वविद्यालय से आनुवंशिकी विषय में पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। इसके बाद प्रोफेसर चोपड़ा ने भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के आनुवंशिकी संभाग में वापस आकर अपना शोध कार्य प्रारंभ किया।

महत्वपूर्ण योगदान

प्रोफेसर चोपड़ा एक समर्पित अनुसंधानकर्ता थे। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के महानिदेशक के पद पर होते हुए भी उन्होंने अपने अनुसंधान एवं शिक्षा के कार्य को प्राथमिकता दी। आपके अनुसंधान का एरिया माइक्रोबियल आनुवंशिकी, ड्रोसोफिला आनुवंशिकी, कोशिकानुवंशिकी, गेहूं आनुवंशिकी, उत्तक संवर्धन, जेनेटिक इंजीनियरिंग आदि रहे हैं। आप मौलिक एवं व्यवहारिक दोनों ही प्रकार के अनुसंधान क्षेत्रों में अग्रणीय रहे। आपने एवं डॉ आर. पी. शर्मा ने विंगलैस म्युटेंट ऑफ़ ड्रोसोफिला की खोज की। यह खोज डेवलपमेंटल जेनेटिक्स में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। आपने डॉ आर. के. कटियार के साथ मिलकर सरसों की किस्म "पूसा जय किसान" को विकसित किया। यह "सोमाक्लोनल ब्रीडिंग एप्रोच" से विकसित होने वाली विश्व की प्रथम किस्म है। यह किस्म अभी भी किसानों में काफी लोकप्रिय है। आपके शोध समूह द्वारा विकसित कोशिकाद्रव्यी नर बंध्यता प्रणाली ने सरसों में संकर प्रजनन का आधार तैयार किया। आपने वर्ष 1983 में भारतीय कृषि अनुसंधान

संस्थान में कृषि जैव प्रौद्योगिकी संभाग की स्थापना कर देश में कृषि जैव प्रौद्योगिकी की आधारशिला रखी। यह संभाग वर्तमान में राष्ट्रीय पादप जैव प्रौद्योगिकी संस्थान का रूप ले चुका है।

पदवी एवं प्रकाशन

वर्ष 1979 में आप भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के निदेशक बने लेकिन एक वर्ष के बाद ही आप शैक्षणिक कार्यों में पुनः लौट आए। वर्ष 1980 में आपने आनुवंशिकी संभाग में प्राध्यापक के रूप में कार्यभार संभाला एवं 1985 तक प्राध्यापक के रूप में कार्य किया। आप आनुवंशिकी संभाग के अध्यक्ष भी रहे। इसके बाद आप राष्ट्रीय पादप जैव प्रौद्योगिकी संस्थान में प्रोफेसर ऑफ़ एमिनेंस एवं निदेशक बने। आपने 1986 से 1990 की अवधि के दौरान भारत के प्रधान मंत्री की "वैज्ञानिक सलाहकार समिति" के सदस्य के रूप में भी काम किया। प्रोफेसर चोपड़ा वर्ष 1990 में 15 माह के लिए यू. एन.एफ.ए.ओ. की तरफ से मुख्य तकनीकी सलाहकार के रूप में विएतनाम गए एवं हनोई में "कृषि आनुवंशिकी संस्थान" की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। आप 1992 में महानिदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद एवं सचिव, कृषि अनुसंधान एवं शिक्षा विभाग नियुक्त हुए। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद से सेवा निवृत्त होने के बाद 1994 में आप बी. पी. पाल नेशनल प्रोफेसर चुने गए। प्रोफेसर चोपड़ा को सी.जी.आई.ए.आर. की विज्ञान परिषद का सदस्य भी चुना गया। आप भारत के नीति आयोग के सदस्य भी रहे। आपने वर्ष 2012-2017 की अवधि के दौरान केंद्रीय विश्वविद्यालय, केरल के कुलपति के रूप में शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया। आप केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, इंफाल के कुलपति भी रहे। आपने दस से अधिक पुस्तकों को संपादित किया एवं सत्रह पुस्तक के अध्याय लिखे। आप इंडियन जर्नल ऑफ़ सेरीकल्चर के मुख्य संपादक एवं इन्सा प्रकाशन के संपादक (1987-90) रहे। इसके अतिरिक्त प्रोफेसर चोपड़ा प्लांट ब्रीडिंग, यूफायटिका, करंट साइंस एवं इंडियन जर्नल ऑफ़ एक्सपेरिमेंटल बायोलॉजी आदि के संपादक मंडल के सदस्य भी रहे। आपने आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन से संबंधित कई पुस्तकों एवं लेखों का प्रकाशन किया। जिनमें प्लांट ब्रीडिंग:थ्योरी एंड प्रैक्टिस, हैंडबुक ऑफ़ इंडस्ट्रियल क्रॉप्स, सर्च फॉर न्यू जींस, अप्प्रोचेज़ फॉर इंकॉर्पोरेटिंग ड्राउट एंड सैलिनिटी रेसिस्टेंस इन क्रॉप प्लांट्स एवं क्रॉप ब्रीडिंग आदि प्रमुख हैं।

पुरस्कार एवं सम्मान

आप एक अदभुत एवं लोकप्रिय शिक्षक थे। आपकी शिक्षा में सिद्धांत एवं व्यवहारिकता दोनों का मिश्रण था। आप एक प्रसिद्ध आनुवंशिकीविद् एवं महान शिक्षक होने के साथ-साथ एक महान संस्थान निर्माता भी थे। "राष्ट्रीय कृषि विज्ञान अकादमी" एवं "अंतर्राष्ट्रीय आनुवंशिकी कांग्रेस ट्रस्ट" की स्थापना में आपका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। प्रोफेसर चोपड़ा राष्ट्रीय कृषि विज्ञान अकादमी की आधिकारिक परिषद के संस्थापक सदस्य थे। आपने इस अकादमी की सेवा सचिव, उपाध्यक्ष एवं अध्यक्ष के रूप में की। आप पहले भारतीय वैज्ञानिक थे जिनको "अंतरर्राष्ट्रीय आनुवंशिकी कांग्रेस" का 1983 से 1988 की अवधि के लिए अध्यक्ष चुना गया। ये आपकी अंतर्राष्ट्रीय ख्याति का परिचायक है। प्रोफेसर चोपड़ा अनेक बोर्ड के सदस्य रहे। जिनमें गुजरात स्टेट फर्टिलाइज़र्स केमिकल रिसर्च फाउंडेशन, टी रिसर्च एसोसिएशन, अंतरराष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान, अर्ध-शुष्क उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों के लिए अंतरराष्ट्रीय फसल अनुसंधान संस्थान एवं अंतरर्राष्ट्रीय मक्का और गेहूं सुधार केंद्र आदि प्रमुख हैं। आप बायोडायवर्सिटी इंटरनेशनल के उपाध्यक्ष भी रहे हैं।

आपने एम.एस.एस. रिसर्च फाउंडेशन की स्थापना में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी और लगभग एक दशक तक इसके ट्रस्टी रहे।

आप नेशनल अकादमी ऑफ़ साइंसेज इंडिया (इलाहाबाद), इंडियन नेशनल साइंस अकादमी (नई दिल्ली), इंडियन अकादमी ऑफ़ साइंसेज (बंगलुरु), नेशनल अकादमी ऑफ़ एग्रीकल्चरल साइंसेज (नई दिल्ली), थर्ड वर्ल्ड अकादमी ऑफ़ साइंसेज, दी वर्ल्ड अकादमी ऑफ़ साइंसेज (इटली) एवं यूरोपियन अकादमी ऑफ़ साइंस, आर्ट्स एंड हुमैनीटीस (पेरिस) आदि के फेलो रहे हैं। देश के विभिन्न आठ विश्वविद्यालयों द्वारा आपको सम्मानार्थ डॉक्टरेट उपाधि से सम्मानित किया गया है। जिनमें चंद्रशेखर आज़ाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली, नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, फैज़ाबाद, राजेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, बिहार, पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना, उत्तर बंगा कृषि विश्वविद्यालय, वेस्ट बंगाल एवं गोविंद बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर, उत्तराखंड आदि प्रमुख है। भारत सरकार ने 1985 में प्रोफेसर चोपड़ा को पदम भूषण से सम्मानित किया। इसके अतिरिक्त आपको कई महत्वपूर्ण पुरस्कारों जैसे बोरलॉग अवार्ड 1983, आर्यभट्ट मैडल ऑफ़ आई.एन.एस.ए., बी. पी. पॉल अवार्ड ऑफ़ एन.ए.ए.एस., एफ.ए.ओ. फ़ूड डे अवार्ड, कृषि शिरोमणि सम्मान, महिंद्रा एंड महिंद्रा लिमिटेड, फिक्की अवार्ड 1987 एवं वातुमुल्ल फाउंडेशन, (यू.एस.ए.) के सुम्मुस मैडल 1987 से सम्मानित किया गया। आप विभिन्न वैज्ञानिक सोसाइटीज के अध्यक्ष रहे, जैसे इंडियन सोसाइटी ऑफ़ जेनेटिक्स एंड प्लांट ब्रीडिंग, सोसाइटी ऑफ़ प्लांट बायोकेमिस्ट्री एंड बायोटेक्नोलॉजी एवं इंडियन सोसाइटी ऑफ़ आयलसीड रिसर्च। प्रोफेसर चोपड़ा विभिन्न राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय शोध पत्रिकाओं के संपादक मंडल के सदस्य भी रहे।

आपका जीवन सभी शिक्षकों, कृषि वैज्ञानिकों, नीति निर्माताओं एवं छात्रों के लिए अनुकरणीय एवं प्रेरणा का स्रोत हैं। प्रोफेसर चोपड़ा जो एक उच्च कोटि के अनुसंधानकर्ता एवं विलक्षण शिक्षक थे, 20 अप्रैल, 2020 को पंचतत्व में विलीन हो गए। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान आपकी कर्मभूमि रहा है। संस्थान के सभी अधिकारी, कर्मचारी एवं छात्र, कृषि विज्ञान, आनुवंशिकी, पादप प्रजनन, जैव प्रौद्योगिकी, शिक्षा एवं नीतिगत योगदान के लिए आपका आभार व्यक्त करते हैं एवं आपको भाव-भीनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। आपका पूरा जीवन सादगी, दया एवं सहानुभूति से परिपूर्ण था। उच्च पद पाने के बावजूद भी आपका व्यवहार सभी के प्रति बहुत विनम्र एवं सहयोगपूर्ण था। आपका विलक्षण व्यक्तित्व आने वाली पीढ़ियों को सदैव प्रेरणा देता रहेगा।

कष्ट ही तो वह प्रेरक शक्ति है जो मनुष्य को कसौटी पर परखती है और आगे बढ़ाती है।

- सावरकर

खेती की वैकल्पिक प्रौद्योगिकियां

रणबीर सिंह

फार्म संचालन सेवा इकाई,
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान सस्थांन, नई दिल्ली 110 012

भारत विश्व में जनसंख्या की दृष्टि से दूसरे स्थान पर है। भारत में दिन-प्रतिदिन जनसंख्या बढ़ती जा रही है और कृषि योग्य भूमि सिकुड़ती जा रही है। बढ़ती जनसंख्या का पेट भरने की चुनौती हमारे सामने खड़ी है। वर्ष 2030 तक हमारी जनसंख्या वर्तमान जनसंख्या से 25 प्रतिशत अधिक हो जाएगी, जबकि खेती के लिए उतनी ही भूमि उपलब्ध रहेगी। वर्ष 2025 में हमें 30.10 करोड़ टन खाद्यान्नों की आवश्यकता होगी, क्योंकि कृषि क्षेत्र में बहुत बढ़ाना संभव नही है। पिछले कुछ दशकों से भारत में जोत जाने वाले खेतों का क्षेत्रफल 14 करोड़ हेक्टेयर पर लगभग स्थिर बना हुआ है। इसका अर्थ है कि कृषि योग्य भूमि में वृद्धि की कम संभावना है जिसके परिणामरूप वर्तमान उत्पादन प्रणालियों को ही प्रखर बनाना होगा, जो कि एकमात्र संभावना है। संपूर्ण जनसंख्या के भरण-पोषण के लिए खेती योग्य भूमि कम पड़ रही है तो खेती की भूमि को पूरा करने के लिए शुरुआत हो गई है, वर्टिकल खेती, हाइड्रोपोनिक्स एवं एरोपोक्सि खेती की। भारत में पिछले कुछ वर्षो में उक्त तकनीकियों का सूत्रपात हुआ है। इस लेख में ऐसी ही कुछ वैकल्पिक प्रौद्योगिकियों का वर्णन किया गया है।

1. खड़ी खेती (वर्टिकल खेती)

वर्टिकल खेती को सामान्य भाषा में खड़ी खेती भी कह सकते हैं। इस प्रकार की वर्टिकल फार्मिंग में उगाई गई सब्जियां और फल खेतों की तुलना में अधिक पोषक और ताजे होते हैं। अगर ये खेती छत पर की जाती है तो इसके लिए तापमान को नियंत्रित करना होगा। वर्टिकल खेती बहुत ही सकारात्मक है जिसमें लोग अपनी छतों पर भी अपने उपयोग हेतु सब्जियां पैदा कर सकेंगे। इसके लिए न तो मिट्टी की आवश्यकता होगी और न ही तेज

धूप की। इसके अंतर्गत टमाटर, चिली, फूलगोभी, ब्रोकली, चीनी कैबेज, पोकचाई बेसिल, रेड कैबेज आदि को उगाया जा सकता है। खड़ी खेती या वर्टिकल फार्मिंग के माध्यम से कम भूमि में अधिक उत्पादन का सफल प्रयोग किया जा रहा है। इसमें सबसे अच्छी बात यह भी हैं कि इसमें रासायनिक उर्वरक और कीटनाशक दवाओं का उपयोग नहीं होता। इससे कम भूमि वाले खेतीहर किसान को अधिक लाभ मिल सकता है। खड़ी खेती के माध्यम से किसान की आय भी बढ़ाई जा सकती है।

खड़ी खेती की प्रक्रियाः खड़ी खेती या वर्टिकल फार्मिंग में एक बहु-सतही ढांचा तैयार किया जाता है। इस ढांचे के सबसे निचले हिस्से में जल से भरा टैंक रख दिया जाता है। टैंक के ऊपरी खानों में पौधों के छोटे-छोटे गमले रखे जाते हैं। पाइप के द्वारा इन गमलों में उचित मात्रा में जल पहुंचाया जाता है जिसमें पोषक तत्व मिले होते हैं जो पौधों को शीघ्र बढ़ने में सहायता करते हैं। एलइडी बल्ब के द्वारा कृत्रिम प्रकाश बनाया जाता है। वर्टिकल तकनीकी खेती में मिट्टी की आवश्यकता नहीं होती। यह

खुले वातावरण में हो सकती हैं। इसमें मकानों एवं भवनों की दीवारों का उपयोग कुछ फसलों के पौधे उगाने के लिए किया जा सकता है।

खड़ी खेती के लाभ

- बढ़ती जनसंख्या और कम होती कृषि योग्य भूमि भविष्य की एक बहुत बड़ी समस्या होगी। आने वाले समय में खेती योग्य भूमि बहुत कम होगी। ऐसे समय में वर्टीकल खेती या खड़ी खेती ही हमारी इस समस्या का समाधान कर सकती है।
- खड़ी खेती के माध्यम से कम भूमि में अधिक उत्पादन किया जा सकता है।
- खड़ी खेती में बनावटी प्रकाश और पर्यावरण का निर्माण किया जाता है, जिसके कारण मौसम संबंधी समस्याओं से संरक्षण प्राप्त होता है।
- परंपरागत खेती में कई प्रकार के रासायनिक उर्वरकों और खतरनाक कीटनाशक दवाओं का उपयोग होता है जिससे तरह-तरह की बीमारियां फैलती हैं। खड़ी खेती में रासायनिक उर्वरक और कीटनाशक दवाओं का उपयोग नहीं होता है और इसमें उत्पादित सामान स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होता है।
- कड़ी भूमि के कारण से जब कम भूमि में उत्पादन अधिक होगा तो किसानों की आय बढ़ेगी और उनके जीवन स्तर में सुधार आएगा।
- इस प्रकार की खेती में जल की आवश्यकता बहुत कम होती है। कम वर्षा वाले स्थानों के लिए खड़ी खेती एक सही विकल्प हो सकता है।
- खड़ी खेती में मजदूरों की आवश्यकता कम होती है क्योंकि यह स्वचालित प्राविधि पर आधारित खेती है।
- वर्ष भर फूल वाली फसलें तथा आलू, टमाटर और पत्तेदार सब्जियां इत्यादि उगाई जा सकती हैं।
- यदि आप कृषि व्यवसाय के बारे में सोच रहे हैं तो खड़ी खेती आपके लिए एक विकल्प हो सकता है। अभी भारत में बहुत कम लोग इसके बारे में जानते हैं और कुछ लोग खड़ी खेती से करोड़ों रुपये कमा चुके हैं।
- यह खेती में अनुसंधान का नया विषय एवं आय का स्रोत भी है।

भारत में खड़ी खेती का भविष्य : खड़ी खेती भारत में एक नई पहल है, कुछ कृषि विश्वविद्यालयों में इन पर अनुसंधान चल रहा है और कुछ या बहुत कम व्यावसायिक खड़ी खेती कर रहे हैं। इस प्रकार की खेती को एक व्यवसाय के रूप में भी देखा जाता है। इस प्रकार की खेती करने के लिए खड़ी खेती की तकनीकी ज्ञान का होना आवश्यक है। विश्व में शहरों का विस्तार तेज होने से परिनगरीय खेती का प्रचलन बढ़ता जा रहा है। छतों पर या पार्किंग स्थान में या फिर कहीं भी उपलब्ध सीमित स्थान का उपयोग अब सब्जियों की खेती में किया जा रहा है। ऐसा एक खास तकनीक के उपयोग से संभव होता है। छोटी जोतों को आर्थिक रूप से लाभदायक बनाने की संकल्पना इन जोतों में उपलब्ध उध्वाधर स्थान के सर्वोत्तम उपयोग पर आधारित है। ऐसी खेती में उध्वाधर स्थान सीमित रहता है और उसमें किसी भी प्रकार की वृद्धि नहीं की जा सकती है, परन्तु इन्हीं खेती में उपलब्ध उध्वाधर स्थान का प्रयोग करके उसी खेती से अच्छी आमदनी प्राप्त की जा सकती है। ऐसी खेती के लिए उध्वाधर स्थान का प्रयोग करने के लिये बांस, लकड़ी या सीमेंट के पोल का प्रयोग किया जाता है।

2. बिना मृदा के खेती (हाइड्रोपोनिक्स)

इस प्रकार की खेती में मृदा का प्रयोग नहीं होता है। इससे पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्वों को जल के

सहारे सीधे पौधों की जड़ों तक पहुंचाया जाता है। तकनीक की भाषा में इसे हाइड्रोपोनिक्स कहा जाता है।

हाइड्रोपोनिक्स लेटिन शब्द की उत्पत्ति दो शब्दों 'हाइड्रो' तथा 'पोनोस' से हुई है। जिसमें 'हाइड्रो' का अर्थ है 'पानी' और 'पोनोस' का अर्थ है 'कार्य'। बिना मिट्टी के पौधों को एक चिन्हित माध्यम में जहां प्रकाश, तापमान और पोषक तत्व नियंत्रित मात्रा हो में उगाने के विज्ञान को 'हाइड्रोपोनिक' कहते हैं। हाइड्रोपोनिक्स एक ऐसी तकनीक है, जिसमें फसलों को बिना खेत में लगाए केवल पानी और पोषक तत्वों से उगाया जाता है। मिट्टी में पोधों की वृद्धि के लिए जो प्राकृतिक तत्व आवश्यक होते हैं, उन्हीं पोषक तत्वों का उपयोग हाइड्रोपोनिक्स में भी किया जाता है। इसमें लाभ यह है कि पौधों का विकास खरपतवार या मृदा जनित कीट और रोगों के द्वारा बाधित नहीं होता है। किसान इसे तकनीक से खीरा, टमाटर, पालक, गोभी, शिमला मिर्च जैसी सब्जियां उगा सकते हैं। इसके अतिरिक्त चारे वाली फसलों को नियंत्रित वातावरण में 15 से 20 डिग्री सेल्सियस तापमान पर लगभग 80 से 85 प्रतिशत आर्द्रता में उगाया जा सकता है। इस तकनीक को अपनाने हेतु स्वच्छ जल का स्रोत, सही स्थान, तैयार उर्वरक, प्रणाली के लिए दैनिक ध्यान देने का समय, बागवानी का ज्ञान होना अनिवार्य होते है।

हाइड्रोपोनिक्स विधि की विशेषताएं

- स्वच्छ एवं पर्यावरण युक्त खेती।
- बहुत ही कम सिंचाई जल की अवश्यकता जल और जल में घुले पोषक तत्वों का पुनर्चक्रण से लगातार उपयोग।
- थोड़ी मेहनत से ज्यादा लाभ।
- फसल की लागत में कमी।
- खरपतवारों से रोकथाम से निराई-गुड़ाई के श्रम से मुक्ति।
- फसल के अनुकूल वातावरण न हो वहां पर भी इस विधि से फसल ली जा सकती है।

बिना मृदा के पौधों को कैसे उगाएं?

इसके लिए लोहे के मजबूत एंगल से 'वी' आकार का एक ढांचा तैयार किया जाता है जो डेढ़ फीट जमीन में गढ़ा हुआ और जमीन से छह फुट ऊंचा रहता है। इस 'वी' शेप वाले ढांचे के दोनों ओर 6-6 मीटर लंबाई एवं 10 सें. मी. व्यास वाले तीन-तीन पीवीसी पाइप आमने-सामने लगाए जाते हैं। इन पाइपों पर तीस सें.मी. के अंतराल पर साढ़े सात सें.मी. व्यास के छेद किए जाते हैं। इन पाइपों के बंद सिरे की ओर कम से कम 100 लीटर क्षमता की पानी की टंकी जमीन में रखी जाती है जिससे पौधों के लिए पाइपों में जलापूर्ति की जाती है। इन मोटे पाइपों के निचले सिरों पर कीप को पतले पाइपों से जोड़ा जाता है जो अतिरिक्त जल को पुनः पानी की टंकी में पहुंचा देता है।

ध्यान रखने योग्य बातें: इस प्रणाली को संचालित करने के लिए बिजली आवश्यक होती है। विद्युत आपूर्ति अवरूद्ध होने पर पौधों की जड़ें सूखने का डर रहता है।

हाइड्रोपोनिक्स के लाभ

हाइड्रोपोनिक्स प्रणाली के बेहतर विकास को सुनिश्चित करता है, साथ ही मिट्टी आधारित बागवानी की तुलना में 95 प्रतिशत कम पानी का उपयोग होता है। इसके द्वारा उच्च गुणवत्ता और उपज के पौधे बड़ी संख्या में उगाएं जा सकते हैं। अन्य लाभ इस प्रकार हैं-

- थोड़ा घना रोपण, उपलब्ध स्थान की अधिक से अधिक उपयोग की अनुमति देता है।
- उत्पाद बेहतर दिखता है और लंबे समय तक टिकता है।
- गर्म पारिस्थितियां में पानी के लिए तनाव कम होता है।
- जानवरों के द्वारा नुकसान पहुंचने एवं प्राकृतिक आपदाओं जैसे बाढ़, सूखा, अत्यधिक गर्मी या ठंड से होने वाली समस्याओं से मुक्त होता है।
- गैर कृषि योग्य भूमि वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त होता है।
- पौधे बहुत कम समय में परिपक्वता तक पहुंच जाते हैं।
- मृदा कीट और रोगों में काफी कमी आ जाती है।
- हाइड्रोपोनिक्स उद्यान को कम रख-रखाव तथा कम मजदूरों की आवश्यकता होती है।

भारत में हाइड्रोपोनिक्स खेती का भविष्य

अभी भी भारत में हाइड्रोपोनिक पौधों को उगाने के अन्य तरीकों की तुलना में कम ही लोकप्रिय है। बढ़ती आबादी, खेती योग्य जमीन की कमी, जलवायु परिवर्तन, पानी की कमी और पानी की बिगड़ती गुणवत्ता सभी मिलकर किसानों को बागवानी के वैकल्पिक तरीकों की ओर रुख करने के लिए प्रोत्साहित कर रहे हैं। हाइड्रोपोनिक्स प्रौद्योगिकी के द्वारा कुशलतापूर्वक रेगिस्तान, बंजर जमीन, पहाड़ी क्षेत्रों, शहरी छतों और ठोस जमीन पर भी फसल उत्पादन किया जा सकता है। अधिक आबादी वाले क्षेत्रों में जहां जमीन की कीमतें आसमान छूने के कारण परंपरागत कृषि असंभव सी हो गई है, वहां भी स्थानीय स्तर पर हाइड्रोपोनिक्स प्रौद्योगिकी के द्वारा उच्च मूल्य वाली फसलों जैसे ताजा हरा सलाद, जड़ी-बूटियों और कटे तथा गुलदस्ता वाले फूलों को उगाया जा सकता है। यह तकनीक विभिन्न प्रकार के पौधों को उगाने के लिए आदर्श स्थिति उपलब्ध कराती है। विशेष प्रकार के पौधे जैसे टमाटर, खीरा, बैंगनी, ब्रोकोली, भिंडी, काली और सफेद मिर्च, पत्तेदार सब्जियां तथा मौसमी फूल इत्यादि, पर अधिकतम लाभ के लिए फसलों का चुनाव समय और बाजार को ध्यान में रखकर करना चाहिए।

3. एरोपॉनिक्स (Aeroponics)

इस विधि को केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला ने आलू का बीज उत्पादन करने हेतु किया है। इस विधि में टिश्यू कल्चर (ऊतक संवर्धन) से प्राप्त पौधे को खेत

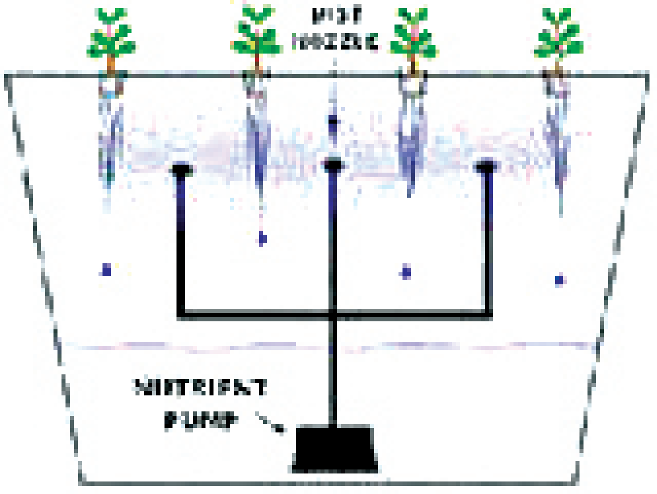

में मिट्टी रहित सिस्टम में लगाया जाता है। इस प्रणाली में पौधों की जड़ें अंधेरे डिब्बों में हवा में ही लटकती हैं और पौधे डिब्बों के ऊपर सीधी सूर्य की रोशनी में फलते-फूलते हैं। विशेष प्रकार की नोजलों से पौधों की जड़ों के ऊपर एक निश्चित अंतराल के बाद सभी आवश्यक तत्वों से युक्त घोल की महीन फुहार होती रहती है। यह घोल एक टंकी में से लिया जाता है और जड़ों के ऊपर स्प्रे होकर बाद में विभिन्न नालियों में से होता हुआ वापिस उसी टंकी में चला जाता है। यह प्रक्रिया दिन-रात लगातार चलती रहती है जब तक फसल की आखिरी कटाई नहीं हो जाती है।

एरोपॉनिक्स तकनीक से आलू का बीज उत्पादन

एरोपोनिक्स एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से बिना मिट्टी व संचय माध्यम के वायु कुहांसे के वातावरण में पौधे पैदा किए जाते हैं। इस प्रक्रिया में पौधे की जड़ें प्रकाश रहित संपूर्ण अंधकार में सील्ड बक्से या कनस्तर में बढ़ती हैं और यहां जड़ों को पोषक तत्व कुहांसे के रूप में प्राप्त होते हैं। इस प्रणाली में पोषक घोल प्रयोग किया जाता है और आवश्यकतानुसार इसकी देखरेख व संशोधन किया जा सकता है। पौधे का ऊपरी भाग खुली हवा व प्रकाश में रहता है।

एरोपॉनिक्स प्रणाली की रचना

एरोपोनिक्स प्रणाली को हमेशा ग्रीनहाउस या 40 मैश के नेट हाउस में स्थापित किया जाता है। ऐसा करने से आलू के पौधे सफेद मक्खी, चेंपा एवं अन्य कीड़ों से सुरक्षित रहते हैं तथा विभिन्न प्रकार के रोगों से बचाव होता है। इस विधि में मुख्य यंत्र एवं हिस्से निम्न प्रकार हैं-

पोषक घोल टंकी: इस विधि में फसलों के लिए अनिवार्य सभी तत्वयुक्त पानी का घोल बनाकर एक टंकी में डाला जाता है। यह टंकी प्लास्टिक, कंकरीट अथवा किसी भी ऐसी सामग्री से बनाई जाती है जिस पर विभिन्न रसायनों का कोई असर न हो। इस टंकी का आकार कुल पौधों की संख्या पर निर्भर करता है। पोषक घोल को ठंडा-गर्म करने का प्रावधान भी होना आवश्यक है।

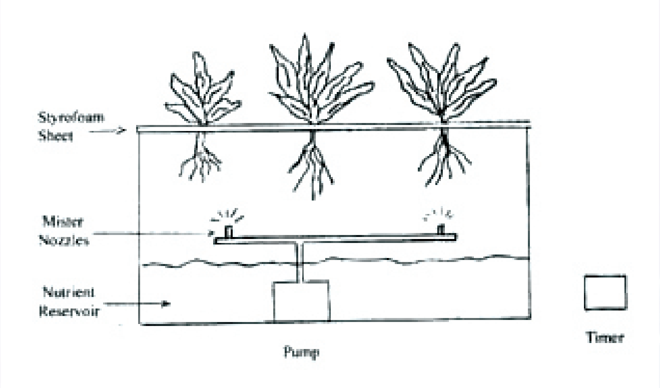

पंप: विभिन्न प्रकार के पंप पोषक घोल को टंकी में से उठाकर नोजलों तक पहुंचाने का काम करते हैं और ये स्व-चालित बिजली उपकरणों से चलाए जाते हैं। घोल की सफाई के लिए 100 मैश का फिल्टर लगाना भी अति आवश्यक है, जिससे नोजलों के सुराख बंद नहीं होते। पंप का चुनाव नोजलों के डिजाइन एवं गिनती को ध्यान में रखकर किया जाता है।

नोजल: एरोपॉनिक्स प्रणाली में नोजलें सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। उच्च दबाव से नोजलों द्वारा तत्वयुक्त पानी की पौधों की जड़ों के ऊपर महीन धुंधनुमा फुहार की जाती है, जिससे पौधे को खुराक लगातार मिलती रहती है।

ग्रो बॉक्स: ये बक्से इस तरह से बनाए जाते हैं कि इनकी छत में टिश्यु कल्चर से लिए गए पौधों की रोपाई की जाती है और नोजलें इन्हीं बक्सों के अंदर लगाई जाती हैं। इनके अंदर पूर्णतः अंधेरा होने के कारण अंदर जड़ें और आलू बनते हैं और ऊपरी भाग में सूर्य की रोशनी में पौधे बढ़ते हैं। ग्रो बॉक्स को सिर्फ आलू की तुड़ाई या निरीक्षण के समय ही खोला जाता है।

बिजली उपकरण: विभिन्न बिजली उपकरणों से पूरे एरोपोनिक्स प्रणाली एवं ग्रीन हाउस को स्व-चालित बनाया जाता है ताकि यह अपने आप दिन-रात चलता रहें।

एरोपनिक्स के लाभ

- इस विधि में फसलें बिना मिट्टी के उगाई जाती है। इस लिए फसल मिट्टी से होने वाले रोगों से बची रहती है और उच्च गुणवत्ता का बीज पैदा किया जा सकता है।
- टिश्यु कल्चर से लिया पौधा मिट्टी के मुकाबले संख्या में 5 से 7 गुना अधिक आलू बीज पैदा करता है और आकार भी लगभग एक जैसा ही होता है।
- पानी की खपत मिट्टी की तुलना में सिर्फ 5 से 10 प्रतिशत और पोषक तत्वों की 20 से 25 प्रतिशत ही होती है।
- इस विधि से बीजोत्पादन उन क्षेत्रों में भी किया जा सकता है जहां पर जुताई योग्य जमीन उपलब्ध नहीं है और पानी की उपलब्धता भी बहुत कम है।
- इस विधि से साल में दो फसलें पैदा की जा सकती हैं।
- बीज का आकार छोटा होने के कारण परिवहन में बहुत कम खर्च आता है।
- प्रति कंद उत्पादन लागत अन्य विधियों की तुलना में अपेक्षाकृत 5 से 6 गुना कम आती है। आज आवश्यकता इस बात की है कि भारतीय कृषि को एक प्रौद्योगिकी के रूप में विकसित किया जाए और इसके लिए अभिनव कृषि तकनीकों को अपनाया जाए। यह कृषि की एक आधुनिक नवीन अवधारणा है कि भारतीय कृषि में नव प्रयोगों की शुरूआत की जाए।

गेहूं की रोग प्रतिरोधी किस्मों का खाद्यान्न सुरक्षा में आत्मनिर्भरता के लिए

राम चरण मथुरिया, वैभव कुमार सिंह, मलक्षान सिंह गुर्जर, कौशल किशोर सावरिया, चंद्रेश चंदेल, रॉबिन गोगोई, महेंद्र सिंह सहारण एवं रश्मि अग्रवाल

पादप रोग विज्ञान संभाग

भा.कृ.अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

देश की खाद्यान्न सुरक्षा में गेहूं का महत्वपूर्ण योगदान है। यह फसल खाद्य सुरक्षा के साथ-साथ पोषण सुरक्षा भी प्रदान करती है। गेहूं (ट्रिटिकम ऐस्टीवम) विश्व व्यापी खाद्यान्न फसल है जो विश्व के 44 देशों में लगभग 230 मिलियन हैक्टर भूमि में एक बहुउपयोगी धान्य फसल के रूप में उगाई जाती है तथा विश्व के 94 देशों में लगभग 5 अरब से अधिक जनसंख्या के लिए भोजन में 21 प्रतिशत कैलोरी प्रदान करती है। भारत में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान ने अपने लगभग 115 वर्ष के इतिहास में इस देश की प्रगति में उल्लेखनीय भूमिका निभाई है। स्वंतत्रता के बाद देश में गेहूं, चावल मक्का, जौ इत्यादि अनाज वाली फसलों के विकास में ऐतिहासिक उपलब्धियां हासिल कर हरित क्रांति का जन्म हुआ जिसके परिणाम स्वरूप हम अनाज के आयातकर्ता के स्थान पर न केवल आत्मनिर्भर हुए वरन कुछ कृषि जिन्सों के उत्पादन के मामले में हम विश्व में पहले या दूसरे स्थान पर हैं।

बौने गेहूं के आगमन के परिणाम स्वरूप देश में हरित क्रांति का जन्म हुआ और गेहूं के उत्पादन में हमारे देश ने ऐतिहासिक उपलब्धि हासिल की है। जिसकी ख्याति संसार भर में हुई है। वर्ष 2018-2019 में गेहूं का उत्पादन 102.19 मिलियन टन हुआ है जो अभी तक का उच्च रिकार्ड रहा है। गेहूं की उत्पादकता जो कि वर्ष 1964-65 में 913 कि.ग्रा./हेक्टेयर थी वो 2018-19 में 3507 कि.ग्रा./हेक्टेयर तक बढ़ गई। गेहूं की उत्पादकता में प्रमुख वृद्धि हरियाणा, पंजाब, व उत्तर प्रदेश राज्य में देखी गई है। भारत की बढ़ती हुई आबादी को मद्देनजर रखते हुए वर्ष 2050 में लगभग 140 मिलियन टन के बीच गेहूं की मांग का अनुमान लगाया गया है। भारत में गेहूं की औसत उपज अभी भी अन्य देशों की तुलना में काफी कम है तथा उत्पादकता वृद्धि में गिरावट एक चिंता का विषय बनता जा रहा है।

गेहूं की फसल में अनेक रोग लगते हैं जिनमें गेरुई (रतुआ) : धारीदार, पर्ण एवं तना गेरूआ, पर्ण, झुलसा, श्लथ कंड एवं करनाल बंट आर्थिक रूप से अधिक महत्वपूर्ण हैं। चूर्णी फफूंद, हैड स्कैब, हिल बंट, एवं ध्वज-कंड का महत्व क्षेत्रीय स्तर पर है। यद्यपि तीनों ही प्रकार के रतुआ रोग हमारे देश के विभिन्न क्षेत्रों में गेहूं के उत्पादन को प्रभावित करते हैं किंतु विगत वर्षों में पट्टी या पीला रतुआ विशेष रूप से उत्तर-पश्चिमी मैदानी क्षेत्र के साथ-साथ उत्तरी पर्वतीय क्षेत्र में अनुकूल वातावरण (कम तापमान और उच्च नमी) होने के कारण अधिक महत्वपूर्ण हो गया है तथा इन क्षेत्रों के लिए एक संभावित खतरा बना हुआ है। पीला रतुआ रोग, तना तथा पत्ती रतुआ से अधिक विनाशकारी सिद्ध हुआ है।

गुणवत्तायुक्त बीज का चयन

गेहूं के बीज के उचित अंकुरण क्षेत्रीय अनुकूलता एवं समय विशेष के अनुसार प्रजाति का चयन करना चाहिए तथा बीज स्वस्थ साफ एवं खरपतवार रहित होना चाहिए। कटे फटे एवं सिकुड़े बीज निकाल देने चाहिए। सिंचित क्षेत्रों में समय से बुवाई के लिए 100 कि.ग्रा./हेक्टेयर सिंचित अवस्था में देर से बुवाई के लिए 125 कि.ग्रा./हेक्टेयर तथा क्षारीय मृदाओं के लिए 125 कि.ग्रा./हेक्टेयर, मेंड़ पर बुवाई के लिए 75 कि.ग्रा./हेक्टेयर होनी चाहिए। यदि दानों का आकार छोटा या बड़ा हो, तो उसी अनुपात में बीज दर बढ़ाई या घटाई जा सकती है। हमेशा प्रमाणित बीजों का ही प्रयोग करना चाहिए और 3-4 साल बाद प्रजाति को बदल देना चाहिए बीज जनित रोगों से बचाव के लिए वीटावेक्स या बाविस्टिन की मात्रा 2.5 ग्राम/

कि.ग्रा. के दर से उपचारित करना चाहिए। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान ने गेहूं की कुछ मुख्य प्रजातियों का विकास किया है (सारणी-1) जो भौगोलिक दृष्टि से गेहूं उत्पादन क्षेत्र के 6 विभिन्न क्षेत्रों में कुछ खास किस्मों एवं आधुनिक तकनीकी को अपनाकर किसान कम लागत में गेहूं का अधिकतम उत्पादन ले सकते है।

सारणी 1.

क्षेत्र	उन्नत प्रजातियां
प्रायद्विपीय क्षेत्र	एच डी 2781, आदित्य, एच डी 3090 पूसा, अमूल्य, एच आई 8663, एच डी 2967, एच डी 2932, एच डी 2833, एच डी 2781, एच आई 8663, एच आई 8805, एच आई 8802, एच आई 1605
उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्र	एच डी 3086, पूसा गौतमी, एच डी 3059, पूसा पछेती, एच डी 3043, एच डी 2967, एच डी 3226, एच आई 1628
उत्तर पूर्वी मैदानी क्षेत्र	एच आई 1563, एच डी 2985, पूसा वसंत, एच डी 2888, पूसा गेहूं 107, एच डी 2824, पूर्वा, एच डी 2733, एच डी 2643 गंगाद्ध, एच पी 1744, राजेश्वरी, एच पी 1761, जगदीश, एच पी 1731, राजलक्ष्मी, एच पी 1633, सोनाली, एच डब्ल्यू 2045, कौशाम्बी एच डी 3086, एच डी 3249, एच डी 2967, एच डी 3118
उत्तरी पर्वतीय क्षेत्र	पूसा सुकेती, एस एस 490; पूसा बेकर, एच एस 375, हिमगिरी एच एस 420, शिवालिक, एच एस 295, एच एस 277, एच एस 542, एच एस 562
दक्षिण पर्वतीय क्षेत्र	पूएच डब्ल्यू 5216, एच डब्ल्यू 5207, पूसा नवगिरी
मध्य क्षेत्र	एच आई 8381, मालवश्रीद्ध विदिशाद्ध, एच डब्ल्यू 2004, अमर, एच डी 2781, आदित्य, , एच आई 1418, नवीन चंदौसी, एच आई 1479, स्वर्णा, एच आई 1500, अम्रिताद्ध, एच आई 8627, एच डी 2864, एच डी 2932, एच आई 8627, एच आई 1531, हर्षिता

रोग एवं नियंत्रणः

गेहूं की फसल में पादप रोग कारक जिनमें अजैविक कारक (खनिज तत्वों की कमी अथवा अधिकता होना, मौसम परिवर्तन, कम अथवा अधिक तापमान, प्रतिकूल ऑक्सीजन, वायु प्रदूषण) तथा जैविक कारक (फंफूद/कवक, जीवाणु, विषाणु, माईकोप्लाज्मा, सूत्रकृमि, कीट पतंगे एवं उच्च पादप परजीवी) उत्पादकता को प्रभावित करते हैं। गेहूं के कुछ मुख्य रोगों के लक्षण एवं नियंत्रण का विवरण नीचे दिया गया है।

रतुआ :

गेहूं की फसल को जैविक कारकों द्वारा काफी नुकसान पहुंचाया जाता है। गेहूं की फसल को दुष्प्रभावित करने वाले विभिन्न जैविक कारकों में, रतुआ रोग जो एक कवक द्वारा होता है, सबसे अधिक विनाशकारी तथा ऐतिहासिक महामारी के कारण के लिए महत्वपूर्ण है। रतुआ से होने वाली क्षति को कम कर गेहूं के उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है। हमारे देश में तीन अलग तरह के रतु, पट्टी या पीला रतुआ, पत्ती या भूरा रतुआ एवं तना या काला रतुआ, गेहूं में रोग उत्पन्न करते हैं। इन तीनो रतुओं का महत्व क्षेत्र विशेष पर आधारित होता है।

पीला/धारीदार रतुआ :

यद्यपि तीनों ही प्रकार के रतु, हमारे देश के विभिन्न क्षेत्रों में गेहूं में रोग उत्पन्न करते हैं किंतु विगत वर्षों में पट्टी या पीला रतुआ, विशेष रूप से उत्तर-पश्चिमी मैदानी क्षेत्र के साथ-साथ उत्तरी पर्वतीय क्षेत्र में, अनुकूल वातावरण (कम तापमान और उच्च नमी) मिलने के

कारण अधिक महत्वपूर्ण हो गया है तथा इन क्षेत्रों के लिए एक संभावित खतरा बना हुआ है। पीला रतुआ रोग, तना तथा पत्ती रतुआ से अधिक विनाशकारी होता हैं। पीला रतुआ, संक्रमण और रोग लक्षण प्रकट होने के लिए कम तापमान पसंद करता है। इसलिए यह रोग दिसंबर एवं जनवरी के महीने में देश के उत्तर-पश्चिमी मैदानी भागों एवं पर्वतीय भागों में अधिक कोहरा एवं ठंड होने कारण उत्पन्न होता है तथा फसल को काफी हानि पहुंचाता हैं। जिससे उपज में भारी कमी आ सकती है।

चित्र 1. पीला रतुआ

लक्षण एवं हानि : इस रोग के लक्षण पत्तियों की शिराओं के साथ-साथ चलने वाले धब्बों की पीले रंग की धारियों के रूप में दिखाई पड़ते है। पौधे के तने, पर्णाच्छद एवं बाली पर भी ऐसे धब्बे दिखाई पड़ सकते हैं। जिनमें पिसी हुई हल्दी जैसा पीला चूर्ण निकलता है। रोग से प्रभावित पत्तियां शीघ्र पककर सूख जाती है। इस रोग का प्रकोप अधिक ठंड और नमी वाले मौसम में बहुत ही अधिक होता है।

रोग प्रबंधन

- विभिन्न जलवायु क्षेत्रों के लिए अनुमोदित पीला रतुआ रोगरोधी किस्मों का चुनाव करें।
- रतुआ निरोधक किस्में 4-5 वर्ष के बाद रोगग्राही बन जाती हैं। ऐसी स्थिति रतुआ कवकों में परिवर्तन होने पर आती है इसलिए नवीनतम सहनशील किस्मों को प्रयोग में लाएं।
- नाइट्रोजन प्रधान उर्वरकों की अत्यधिक मात्रा रतुआ रोगों को बढ़ाने में सहायक होती है। इसलिए उर्वरकों के संतुलित अनुपात में पोटाश की उचित मात्रा का प्रयोग करें।
- इस बीमारी के नियंत्रण के लिए प्रोपेकोनाजोल (टिल्ट 25 ई सी) के 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

भूरा रतुआ/पत्ती रतुआ

यह रोग भारत में जहां गेहूं बोया जाता है वहां देखने को मिलता है। पत्तियों पर फैले अंडाकार, भूरे रंग के धब्बों के रूप में दिखाई पड़ते हैं।

चित्र 2. भूरा रतुआ

लक्षण एवं हानि

पत्तियों पर चमकीले नारंगी रंग तथा आलपिन के सिर के समान (पिन हैड) धब्बें बनते हैं जो पत्तियों की सतह पर बिखरे रहते हैं तथा आपस में एक-दूसरे से मिले नहीं होते। इस रोग में धब्बों का आकार पीले रतुआ के धब्बों की अपेक्षा कुछ बड़ा होता है। यह रोग पीले रतुआ की तुलना में अधिक गर्म मौसम सहने में समर्थ होता है।

रोग प्रबंधन

- भूरा रतुआ निरोधक किस्मों का चुनाव करें।
- प्रोपेकोनाजोल (टिल्ट 25 ई सी) के 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करके इस रोग को नियंत्रित किया जा सकता है।

काला/तना रतुआ

इस रोग का प्रकोप मुख्य रूप से मध्य एवं दक्षिण भारत में अधिक होता है। यह रोग पत्तियों एवं तने पर गहरे भूरे रंग के लंबे धब्बों के रूप में आता है। पौधे की बाली पर भी धब्बें उत्पन्न हो सकते हैं। काले रतुए का उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्रों में प्रकोप बहुत कम व कहीं-कहीं दिखाई देता है।

चित्र 3. काला रतुआ

लक्षण एवं हानि

इस रोग का प्रकोप तापमान बढ़ने पर पीले तथा भूरे रतुआ के बाद शुरू होता है। गहरे भूरे काले रंग के धब्बे तने, पत्तों और पत्तों के आवरणों पर दिखाई देते हैं जो बाद में फट जाते हैं। रोग की उग्र अवस्था में पौधों का आकार घट जाता है।

रोग प्रबंधन

- अनुमोदित किस्में लगाएं।
- फसल में बीमारी का पहला लक्षण प्रकट होते ही टिल्ट 25 ई.सी. के 0.1 प्रतिशत घोल (1 मि.ली./लीटर पानी) का छिड़काव 15 दिन के अतंराल पर करें।

कंडवा रोग/खुली कंगियारी

इस कंडवा रोग का प्रकोप गेहूं की फसल में समस्त देश में पाया जाता है। इसका प्रभाव आद्रता एवं अर्ध आद्रता वाले क्षेत्रों में अधिक होता है। इससे होने वाली हानि प्रति वर्ष कम या अधिक होती रहती है। उत्तरी भारत में वातावरण परिस्थितियां अनूकूल होने के कारण इस रोग का प्रभाव अधिक पाया जाता है।

चित्र 4. कंडवा रोग

लक्षण एवं हानि

इस रोग के लक्षण बाली निकलने के बाद ही दिखाई देते हैं इस रोग से प्रभावित पौधों का संपूर्ण पुष्पक्रम, कवक में क्लेमाइडोस्पार्स से बने काले चूर्ण में परिवर्तित हो जाता है जिससे रोग ग्रसित पौधे काली बालियां पैदा करते हैं। रोगी पौधों की बालियां काले चूर्ण का रूप ले लेती हैं और उनमें दानें नहीं बनते हैं। बाद में काला चूर्ण हवा में उड़ जाता है और केवल डंडी रह जाती है। कभी-कभी ऐसी बालियां भी बनती हैं, जो केवल आंशिक रूप से काले चूर्ण में बदल जाती हैं।

रोग प्रबंधन

- बुवाई से पहले बीज का उपचार फफूंद नाशक रसायन जैसे वाइटावैक्स अथवा बाविस्टिन 50

डब्ल्यू पी 2.5 ग्रा. अथवा रेक्सीन 0.1 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।

- रोग ग्रस्त बालियों को निकाल कर खेत से दूर मिट्टी में दबा दें।

पहाड़ी बंट

लक्षण एवं हानि

रोगग्रस्त पौधों की बालियों के दानों से काला चिपचिपा लेई सा पदार्थ निकलता है। दाने पकने पर काला पदार्थ चूर्ण में बदल जाता है। रोगी दानों से प्रायः सड़ी मछली जैसी दुर्गंध आती है जिसमें इस रोग की आसानी से पहचान हो जाती है। रोगी बालियां देखने में खुली-खुली दिखाई पड़ती हैं।

चित्र 5. पहाड़ी बंट

रोग प्रबंधन

- स्वस्थ एवं प्रमाणित बीज का प्रयोग करें।
- बीज को वाइटावैक्स अथवा बाविस्टिन की 2.5 ग्राम मात्रा/कि.ग्रा. बीज को उपचारित करने के लिए पर्याप्त होती है।

करनाल बंट

करनाल बंट का प्रकोप भारत में हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, जम्मू, मध्य-प्रदेश, बिहार और पश्चिमी बंगाल में पाया जाता है।

चित्र 6. करनाल बंट

लक्षण एवं हानि

इस रोग में गहाई के बाद निकले दानों में बीज की दरार के साथ-साथ गहरे भूरे रंग के बीजाणु समूह देखे जा सकते हैं। रोगग्रस्त दाने आंशिक रूप से काले चूर्ण में बदल जाते हैं। संक्रमित गेहूं के बीज से सड़ी हुई मछली की बदबू आती है। संक्रमण अधिक गंभीर होने पर पूरा दाना खोखला हो जाता है।

रोग प्रबंधन

- रोग सहिष्णु किस्मों का प्रयोग करें।
- स्वस्थ एवं प्रमाणित बीज का प्रयोग करें।
- गेहूं की फसल में ट्राइकोडर्मा विरिडी 5 ग्रा./लीटर पानी की दर से पहला छिड़काव झड़े पत्ते की अवस्था में तथा दूसरा छिड़काव टिल्ट 25 ई. सी. 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव 50 प्रतिशत बालियां निकलने पर करें।

ध्वज कंड

इस रोग के लक्षण पत्तियों पर चांदी के रंग के, लंबे बीजाणुधानी पुंजों के रूप में दिखाई पड़ते हैं जो कवक के गहरे भूरे रंग के बीजाणुओं से भरे होते हैं। संक्रमित पौधे बौने रह जाते हैं, और उन पर बालियां विकसित नहीं होती हैं और वे समय से पहले ही मर जाते हैं।

रोग प्रबंधन

- बुआई के पहले बीजों को 0.25 प्रतिशत कार्बोक्सिन वीटावैक्स (75 डब्ल्यू पी) से उपचारित करें।

- जिन किस्मों में यह ध्वज कंड रोग देखा गया हो उनकी बुआई न करें।
- रोगप्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग करें।
- रोगग्रस्त पौधों को निकाल कर खेत से दूर मिट्टी में मिला दें।

चूर्णिल आसिता

लक्षण एवं हानि

इस रोग में पत्तियों पर बहुत छोटे, गहरे भूरे रंग के पीले प्रभामंडल से घिरे धब्बे बनते हैं जो बाद में परस्पर मिलकर पर्ण झुलसा उत्पन्न करते हैं। अनुकूल अवस्था में इस प्रकार का चूर्ण समूह तने और बालियों पर भी दिखाई देते हैं। संक्रमित पत्तियां जल्दी ही सूख जाती हैं और पूरा खेत दूर से झुलसा हुआ दिखाई पड़ता हैं। संक्रमित बाली में भूरे धब्बे वाले दाने होते हैं।

रोग प्रबंधन:

फसल पर रोग के लक्षण प्रतीत होने पर बाविस्टीन नामक दवाई के 0.1 प्रतिशत (1 ग्राम/लीटर पानी) घोल का 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

जीवन की जड़ संयम की भूमि में जितनी गहरी जमती है और सदाचार का जितना जल दिया जाता है उतना ही जीवन हरा भरा होता है और उसमें ज्ञान का मधुर फल लगता है।

- दीनानाथ दिनेश

टमाटर के प्रमुख रोग एवं उनका प्रबंधन

अर्चना उदय सिंह[1], राजेन्द्र शर्मा[2], रमेश चंद[3] एवं सुभाष चंद[4]
[1]सूत्रकृमि विज्ञान संभाग, [2]कृषि ज्ञान प्रबंधन इकाई,
भा.कृ.अनु.प. - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012
[3]सहायक प्राध्यापक, सूत्रकृमि विज्ञान विभाग, [4]सहायक प्राध्यापक, पादप रोग विज्ञान विभाग,
नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

टमाटर भारत की प्रमुख सब्जी है। इसे कई प्रकार के रोग लगते हैं जो इसकी उपज एवं गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं। इस लेख में टमाटर के लगने वाले प्रमुख रोगों एवं उनके प्रबंधन का विवरण दिया गया है।

पछेती झुलसा

रोग के लक्षण : रोग से प्रभावित पौधों की पत्तियों पर विभिन्न प्रकार के बड़े जल युक्त हल्के धब्बे दिखाई पड़ते हैं। रोग की उग्र अवस्था में ये धब्बे तना तथा फलों पर भी दिखाई पड़ते हैं जो बाद में भूरे रंग के हो जाते हैं और बहुत थोड़े ही समय में तेजी से पूरे खेत में फैल जाता है।

प्रबंधन : रोग के लक्षण दिखाई देते ही रिडोमिल एम0जेड0 की 2.5 ग्राम मात्रा/लीटर पानी में घोलकर कम से कम दो छिड़काव 12-15 दिनों के अंतराल पर करें या इंडोफिल एम-45 की 2.5 ग्राम अथवा कॉपर आक्सीक्लोराइड की 3 ग्राम मात्रा / लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करने से इस रोग से बचाव किया जा सकता है।

अगेती झुलसा

लक्षण : इस रोग के लक्षण सबसे पहले पौधों की पुरानी पत्तियों पर दिखाई पड़ते हैं। पुरानी पत्तियों पर छोटे गोल एवं भूरे अथवा काले रंग के धब्बे बनते हैं जो कि छल्लेदार होते हैं। बाद में कई धब्बे एक साथ मिलने से संपूर्ण पत्ती पीले रंग की होकर मुरझा जाती है। रोग की उग्र अवस्था में ये धब्बे फलों तथा तनों पर भी आ जाते हैं।

प्रबंधन : बीज रोग मुक्त फल से ही लें। खड़ी फसल पर मैकोजेब 2.5 किग्रा. मात्रा 1000 ली. पानी में या कॉपर आक्सीक्लोराइड 3.0 किग्रा. 1000 ली. पानी में घोलकर 10 से 15 दिनों के अंतराल पर दो छिड़काव अवश्य करें।

आर्द्र गलन

लक्षण : प्रारंभिक लक्षण भूमिगत बीजांकुरो का विगलन होने और बीजांकुर के भूमि के बाहर निकलने पर पौद गलन होने के रुप में दिखाई देते हैं। भूमि की सतह पर पौधे का अचानक विगलित होकर गिर पड़ना इस रोग का मुख्य लक्षण है।

प्रबंधन

- पौधशाला को फार्मलीन (1 भाग फार्मलीन: 7 भाग पानी) से बुवाई के 15-20 दिन पहले संशोधित करें तथा पोलीथीन की चादरों से ढ़ककर रखें। जब मिट्टी से इस दवा की महक निकलना बंद हो जाये तदोपरांत बीज बोयें।
- पौधशाला को मैंकोजेब (25 ग्राम/10 ली. पानी) अथवा कार्बेण्डाजिम (5 ग्राम/10 ली. पानी) के घोल से अथवा रिडोमिल एम. जेड. (10 ग्राम प्रति 10 ली. पानी) के घोल से बीज से पौद निकलने पर रोग के लक्षण देखते ही सीचे। एक भाग चूना 100 लीटर पानी का छिड़काव रिडोमिल एम. जेड. के छिड़काव के 10-15 दिन बाद करें।

पर्ण कुन्चन

लक्षण : यह एक विषाणु जनित रोग है। प्रभावित पत्तियां मोजैक रोग की तरह दिखाई देती हैं। पत्तियों में पर्णहरित खत्म या कम हो जाता है। पत्तियां किनारों से नीचे की ओर मुड़ने लगती हैं तथा साधारण पत्ती की अपेक्षा मोटी हो जाती हैं। रोग की उग्र अवस्था में पौधा बौना रह जाता है तथा रोग ग्रसित पौधों में फूल देर से आते हैं तथा फल छोटे एवं कच्चे रह जाते है। यह रोग सफेद मक्खी द्वारा स्वस्थ पौधों में फैलता है।

प्रबंधन

- रोग प्रतिरोधी किस्में लगाएं।
- खरपतवार जैसे- धतूरा तथा मकोय को खेत में न रहने दें।
- मैलाथियान 50 ई.सी. (100 मिली / 100 ली पानी) के घोल का छिड़काव करें।

बक आई रॉट

लक्षण : यह रोग फलों पर आता है तथा प्रभावित फलों के ऊपर हल्के भूरे रंग के गोलाकार धब्बे चकत्ते के रुप में दिखाई पड़ते है।

प्रबंधन

पौधों को लकड़ी द्वारा सहारा देकर सीधा खड़ा रखें। उसके निचले फैलाव में 20 सेमी. तक रिडोमिल एम. जेड. (100 ग्राम / 100 ली. पानी) का छिड़काव करें। सड़े फलों को नष्ट कर दें तथा खड़ी फसल में मैन्कोजेब 2.5 किग्रा. को 1000 लीटर पानी में घोलकर 8-10 दिन के अंतराल पर दो छिड़काव करें।

शुक्राणु उकठा

लक्षण : यह रोग शकाणु द्वारा होता है जिसमें पौधा पीले हुए बिना मुरझा जाता है। अंत में पौधा मर जाता है।

प्रबंधन

रोग मुक्त तथा स्वस्थ पौधे का ही रोपण करें। कम से कम तीन वर्षीय फसल चक्र अपनाएं।

शुक्राणु कैंकर

लक्षण : यह रोग पौधे की सबसे पुरानी पत्तियों को प्रभावित करता है। ग्रसित पत्तियां मुरझा जाती हैं। रोग की उग्र अवस्था में तने पर भूरे रंग की धारियां और फलों पर सफेद रंग के छोटे भूरे धब्बे दिखाई देते हैं।

प्रबंधन

- रोग मुक्त स्वस्थ पौधे लगाएं।
- रोगी पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दें या मिट्टी में दबा दें।
- कम से कम तीन वर्षीय फसल चक्र अपनाएं।

रेनीफार्म सूत्रकृमि रोग

रेनीफार्म सूत्रकृमि की खोज 1940 में मूंग की फसल में हुई थी। अब इसकी जडगांठ सूत्रकृमि के बाद भारत में मुख्य सूत्रकृमि के रूप में गिनती की जाती है। वैज्ञानिक भाषा में इस सूत्रकृमि को रोटाईलेंकुलस रेनीफोरमिस नाम से जाना जाता है।

पोषक फसलें : भारत में यह सूत्रकृमि मुख्य रूप से सब्जियों में जैसे टमाटर, बैंगन, भिंडी, आलू तथा प्याज, फलों में जैसे अंगूर, पपीता, नींबू, आम, केला तथा लीची, दलहनी फसलें जैसे चना, मूंग, उड़द तथा तिलहन में जैसे मूंगफली, सरसोब सूर्यमुखी आदि फसलों को प्रमुख रूप से हानि पहुंचाता है।

जीवन चक्र : नर और मादा दोनों भूमि में पाए जाते हैं। नर सांप के आकार के तथा मादा यकृत के आकार की होती हैं। नर व मादा 1-1 के अनुपात में पाए जाते हैं। इस सूत्रकृमि की दो उप जातियां पाई जाती हैं जिन्हें अ तथा ब नाम से जाना जाता है। यह सूत्रकृमि मूंग, अरंडी तथा कपास की फसलों को नुकसान पहुंचाता है। यह अपना जीवन चक्र 25 दिनों में पूरा कर लेते हैं। अंडों से द्वितीय अवस्था के सूत्रकृमि बाहर निकलते हैं। इनकी तीसरी व चौथी अवस्था में चूसक यंत्र नहीं होते हैं। केवल प्रौढ़ मादा ही जड़ में प्रवेश कर सकती हैं। प्रौढ़ मादा जडों में आधा भाग तक प्रवेश कर जाता है जबकि पिछला हिस्सा मिट्टी में ही रहता है। जड़ में पहुंचकर कोशिकाओं की भित्ती को अपनी लार द्वारा नष्ट कर देते हैं जिससे कोशिकाओं का द्रव्य आपस में मिल जाता है तथा एक बड़ी कोशिकाओं का निर्माण करता है। मादा भोजन ग्रहण करती है व कुछ दिन भोजन करने के बाद फूलकर मादा यकृत का आकर ग्रहण कर लेती है। मादा का आधा भाग जड़ के अंदर तथा आधा भाग जड़ के बाहर रहते हुए जड़ पर ही चिपकी रहती है। इससे पौधा कमजोर तथा फलों का आकार छोटा हो जाता है।

रोग का उपचार

- रोग की रोकथाम के लिए कार्बोफ्यूरान या फोरेट 2.0 किग्रा (सक्रीय तत्व) / हे. की दर से मृदा में मिला देना चाहिए।
- रोगरोधी किस्में सूत्रकृमिनाशक दवाएं बहुत महंगी होने के कारण उत्पादन मूल्य बढ़ जाता है। अतः रोगरोधी किस्में उपलब्ध हो तो उन्हें ही काम में लेना चाहिए। इस सूत्रकृमि के लिए मूंग की एल.एल.-70 बी.-16, एम.एल-80, एम.एल.-68 वएम.एल.-62 रोगरोधी किस्में हैं जिन्हें आवश्यकतानुसार उपयोग करें।
- जैविक व कार्बनिक खाद के अधिक प्रयोग से इस सूत्रकृमि की हानि को कम किया जा सकता है। हरी पत्तियों की खाद या खली को भी प्रयोग में लाया जा सकता है।
- फसल चक्र में गन्ना, गेंदा या मक्का उगाना लाभप्रद रहता है।

मूल ग्रन्थि रोग

सूत्रकृमि द्वारा जनित रोगों में जड़गांठ यामूल ग्रन्थि रोग मुख्य रोग है। यह मिलाईडोगार्डन जाति के सूत्रकृमि द्वारा होता है। भारत के हर क्षेत्र में यह बीमारी होती है। 15 से 40 डिग्री सेल्सियस तापमान, बलुई मिट्टी से काली चिकनी मिट्टी तक के क्षेत्रों में यह सूत्रकृमि प्रमुखता से विभिन्न फसलों में रोग उत्पन्न करते हैं। यह सूत्रकृमि सब्जियों में जैसे टमाटर, बैगन, भिंडी, शिमला मिर्च, खीरा आदि वाली अधिकतर फसलों से लेकर आलू फसलों में रोगग्रसित करते हैं। अतः इस सूत्रकृमि की पोषक फसलों की संख्या सर्वाधिक है। मिलाडोगाईन जाति के सूत्रकृमि की करीब 75 जातियां हैं। लेकिन इनकोग्निटा, जावानिका, एरिनोरिया व हेप्ला जातियां प्रमुख हैं जिनमें हेप्ला ठंडे वातावरण में पाई जाती हैं। उत्तर प्रदेश में इनकोग्निटा व जावानिका प्रमुख रूप से विभिन्न फसलों को रोग ग्रसित करती हैं। इस सूत्रकृमि का जीवन चक्र सामान्य तापक्रम पर 25-35 दिन का होता है। मादा

सूत्रकृमि 25-35 दिन में अंडों का समूह देती हैं जिसमें 250-400 अंडों तक होते हैं। ये जड़ के अग्र भाग में प्रवेश करते हैं, जिससे जड़ का सीधा बढ़ना रूक जाता है तथा फिर जड़ में गांठ बना कर वयस्क मादा के रूप विकसित होकर अंडे देती हैं। अंडों का समूह जड़ के साथ बाहर चिपका रहता है। इस प्रकार इस सूत्रकृमि की एक ही फसल पर 4-5 जीवन चक्र पूरा कर लेने से सूत्रकृमियों की संख्या कई गुना बढ़ जाती है जो रोग के प्रकोप को बढ़ाती है।

रोग से हानिः दो (द्वितीय अवस्था में डिंनक) सूत्रकृमि प्रति ग्राम मिट्टी की दर से पौधों में रोग उत्पन्न करने के लिए काफी होती हैं। फसल में होने वाली बीमारी की तीव्रता भूमि में मौजूद सूत्रकृमियों की संख्या पर निर्भर करती है। सामान्य अवस्था में रोग होने पर 25 से 40 प्रतिशत तक नुकसान होता है। यदि सूत्रकृमियों की संख्या ज्यादा हो तो फसल बोते ही रोग ग्रसित हो जाए तो हानि 80 से 90 प्रतिशत तक होती है। सूत्रकृमि विशेषज्ञों के सर्वेक्षण के अनुसार देश में टमाटर में 28-33 प्रतिशत क्षति हो जाती।

पोषक फसलें : फसलों के सूत्रकृमियों में मूलग्रन्थि रोग के जनक (मेलोइडोगाईन) सूत्रकृमि की पोषक फसलें सबसे अधिक हैं। सभी प्रकार की सब्जियों, दाल वाली फसलों (चना, मूंग, मोठ, चैला, मटर) मिर्च मसाले जैसे मिर्च, जीरा, धनियां, मेथी, सौंफ, ज्वार व कुष्माण्डु कुल की फसलें, फलों में पपीता अनार, अमरूद आदि प्रमुख हैं।

लक्षण : सूत्रकृमि पौधों की जड़ों में प्रवेश कर जाते हैं जिससे जड़ों का सीधा बढ़ना रूक जाता है। सूत्रकृमि के प्रवेश के स्थान से पाश्र्व जड़ें निकल आती हैं जिन पर सूत्रकृमि प्रवेश कर जाते हैं। इस प्रकार जड़ें कई बार विभक्त होकर जड़ों का गुच्छा या समूह बना लेती हैं। जड़ के अंदर सूत्रकृमि पौधे की जीवित कोशिकाओं से अपना आहार प्राप्त करते हैं व इन्हीं कोशिकाओं में लार छोड देते हैं जिससे कई कोशिकाएं आपस में मिल जाती हैं तथा जड़ में गांठ या रसोली बना देते हैं। इस प्रकार जड़ में जहां-जहां सूत्रकृमि प्रवेश करते हैं वहां-वहां जड़ों में गांठ बन जाती हैं। इसी कारण इस रोग को जड़ गांठ या मूलग्रन्थि रोग कहते हैं। इस रोग के लक्षणों को दो भागों में बांटा जा सकता हैं।

बाह्य लक्षणः

- पौधों की वृद्धि रूकने से पौधों का छोटा या बौना रहना।
- पौधों की ऊपरी पत्तियों का पीला पड़ जाना।
- फसल में नत्रजन की कमी जैसा लक्षण दिखाई देना।
- पुष्प व फलों का देर से लगना या झड़ना।
- पीलापन लिए हुए पौधों का मुरझाना।

भूमिगत लक्षण :

- जड़ों को उखाड़ कर देखने पर जड़ों में गांठों का पाया जाना मुख्य लक्षण है।
- जड़ों का सीधा न बढ़कर अनेक छोटी-छोटी जड़ों में विभक्त होकर गुच्छा बनना।
- सूत्रकृमि के जड़ों में प्रवेश से 25-35 दिनों में

जड़ों में बनी गांठों पर सूत्रकृमि के अंडों का समूह चिपके हुए पाया जाना।

- पौधों की बढ़वार रूक जाती है तथा पौधें बौने, कमजोर व नत्रजन की कमी (पीले पड़ना) जैसे लक्षण दिखाई देते हैं।

रोग का फैलाव : यह सूत्रकृमि भूमि में पाया जाता है तथा इसकी मादा अपना जीवन चक्र भूमि ही में पूरा करती हैं जिससे सूत्रकृमि की संख्या कई गुना बढ़ जाती है। इस रोग के जनक रेतीली, दोमट व चिकनी मिट्टी में घर के बगीचे से लकेर खेतों तक में पाए जाते हैं। लेकिन इस रोग का अधिक प्रकोप सब्जियों, कुश्माण्डु कुल की फसलों, आलू, मिर्च मसाले वाली फसलों व पपीता, अनार जैसे फसलों आदि में इसका प्रकोप अधिक होता है। यही कारण है कि कस्बों के आस-पास जहां बार-बार ये फसलें बोई जाती हैं यह रोग अधिक होता है। उत्तर प्रदेश तथा उत्तर भारत के सभी राज्यों व जिलों में यह रोग पाया जाता है। आज की मंहगाई में उपरोक्त फसलों के लाभकारी होने के कारण किसान सघन खेती करते हैं जिसकी वजह से रोग के जनक को आसानी से पोषक फसलें अपने भोजन ग्रहण करने के लिए मिल जाती है जिससे खेतों में सूत्रकृमियों की संख्या बढ़ जाती है तथा रोग का प्रकोप बढ़ जाता है।

रोकथाम या उपचार : मूलग्रन्थि रोग से बचाव के लिए अनेक उपायों का समन्वय करना जरूरी है, जिससे खेतों व वातावरण में विषैले रसायनों का प्रदूषण न फैले व किसानों पर आर्थिक भार भी न पड़े।

- **फसल चक्र :** फसलों को अदल-बदल कर बोएं। खेतों में एक बार इस सूत्रकृमि की पोषक फसलें (सब्जियां लौकी, तोरई, तरबूज, खरबूजा, चना आदि) बोने के बाद उन खेतों में अपोषक फसल (बाजरा, गेंहू, जौ, जई, ज्वार, मक्का, सरसों, प्याज, तिल व चावल आदि) बोएं, जिससे सूत्रकृमियों को पोषण न मिले। रोगरोधी टमाटर की किस्म को उपयुक्त फसल चक्र माना गया है।
- **शस्य क्रियाएं :** मई जून माह में जब दिन का तापमान 40 डिग्री सेल्सियस के आसपास हो तो खाली खेतों की 2-3 गहरी जुताई 15 दिन के अंतराल पर करें जिससे सूत्रकृमि के अंडे व द्वितीय अवस्था के डिंबक तेज धूप के संपर्क मे आकर मर जाएं अथवा निष्क्रिय हो जाएं।
- **खरपतवार नियंत्रण :** खेतों में उगने वाले खरपतवारों से यह सूत्रकृमि पोषण कर जीवन चक्र पूरा कर लेता है। अतः यह आवश्यक है, कि खेतों से समय-समय पर खरपतवार जड़ सहित निकाल कर साफ सुथरा रखें।
- **कार्बनिक खाद शोधन :** खेतों मे सनई या ढैंचा उगाकर हरी खाद बना कर अथवा फसल बुवाई से पूर्व सड़ी हुई गोबर या कम्पोस्ट खाद 25 टन / हेक्टेयर भूमि में मिलाएं।
- **प्रपंच व सूत्रकृमि ग्राही फसलें :** कुछ ऐसी फसल चक्र या अंतर फसलों के रूप में बोएं, जिनकी जड़ों से जहरीला द्रव्य निकलता हो जो इस सूत्रकृमि के लिए जहर का कार्य करता है, जिनमें गेंदा प्रमुख है। यह एल्फा टरथाईनिल नामक द्रव्य स्रावित करता है।
- **नर्सरी :** रोग मुक्त नर्सरी तैयार करें, इसके लिए या तो ऐसी भूमि में नर्सरी तैयार करें, जहां सूत्रकृमि न हों या फिर भूमि को 10 ग्राम कार्बोफ्यूरान कण प्रति वर्गमीटर की दर से उपचारित कर बोएं।
- **पौद उपचार :** पौद लगाकर उगाई जाने वाली फसलों की रोपाई करने से पूर्व पौधों की जड़ों को फास्फोमिडान के घोल में रखें, उसके बाद रोपाई करें।
- **खेत में रसायन का उपयोग :** खेत में पौद या बीज बुवाई के समय कार्बोफ्यूरान (3 प्रतिशत कण) या फोरेट (10 प्रतिशत कण) 2.0 किग्रा असली तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में मिलावें अथवा पौध रोपण या बीज बुवाई के स्थान पर दवा का उपयोग करें।
- **रोगरोधी किस्में :** रोग के नियंत्रण में सबसे उपयुक्त उपाय रोगरोधी किस्मों को उगाना होता है। अतः वातावरण व मौसम के अनुसार रोगरोधी किस्म उपलब्ध हो सके तो अवश्य काम में ली जानी चाहिए। कुछ फसलों की निम्न रोगरोधी किस्में हैं-

टमाटर	स्लेकान-120 कर्नाटक हाईब्रिड, हिसार ललित, नेमेटेक्स, रोनिता, वी.एफ. एन-8, पी.बी.एन. आर-7, हिलानी, केम्पबेल-25, वी.एफ.एन. बुश, पेट्रीयोट।
बैंगन	ब्लैक ब्यूटी, विजया, बनारस, जाइन्ट, गच्छा बैंगन, टी-2,टी-3, पी.बी.आर. 91-21
मिर्च	पूसा ज्वाला, के-2, सी.ए.1366, सी.ए.2123, सी.ए. 2057, सी.ए. 2104, बी-70-ए।
भिंडी	आई.सी.9773, आई सी.18960
मटर	आर.एस.जी-3, आर.एस.जी-8

फूल चुन कर एकत्र करने के लिए मत ठहरो। आगे बढ़े चलो, तुम्हारे पथ में फूल निरंतर खिलते रहेंगे।

- रवींद्रनाथ ठाकुर

अधिक आय के लिए गेहूं में खरबूजे की रिले खेती

सुरेश चंद राणा, पी.बी. सिंह एवं विनोद कुमार पंडिता

भा.कृ.अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान क्षेत्रीय स्टेशन,
करनाल, हरियाणा-132001

सब्जियों का भारतीय कृषि में महत्वपूर्ण स्थान है। ये बहुत सी दूसरी फसलों की तुलना में प्रति इकाई क्षेत्र में अधिक पैदावार देती है और कम समय में तैयार हो जाती हैं। भारत में खीरा वर्गीय कुल की लगभग 20 प्रकार की सब्जियों की खेती की जाती है। इनमें घीया/लौकी, तोरी, करेला, खीरा, तरबूज, खरबूज, ककड़ी, कद्दू/सीताफल, चप्पनकद्दू, टिंडा, परवल, फुट, आदि मुख्य हैं। ये सभी बेलवाली फसलें होती हैं जो कम कैलोरी व सरलता से पचने वाली होने के साथ-साथ विटामिन्स, अमीनो अम्ल एवं खनिज लवणों का अच्छा स्त्रोत हैं।

उत्तर भारत के मैदानी भागों में सामान्यतः आलू, गाजर, मटर, सरसों, तोरी आदि फसल लेने के उपरातं अधिकतर किसान भाई जनवरी के अंत से लेकर मार्च के प्रथम पखवाड़े तक खीरा-ककड़ी वर्गीय सब्जियों की बुवाई बीज द्वारा करते हैं तथा फसल की पैदावार अप्रैल से जून तक चलती है। दिसंबर या जनवरी माह में पॉलीथीन घर में थैलियों में तैयार किए गए पौधों को फरवरी के अंत में (पाला पड़ने का खतरा समाप्त होने पर) रोप कर इन फसलों की अगेती फसल ली जाती है जबकि अप्रैल में गेहूं की कटाई उपरांत इन सब्जियों (खरबूज, तरबूज, पेठा आदि) की बिजाई करने से, बरसात (जून माह में) के कारण फलों की गुणवत्ता में कमी आने से आर्थिक हानि होने की संभावना बनी रहती है। प्रयोगों में पाया गया है कि गेहूं में ककड़ी-वर्गीय सब्जियों की अंतर-रिले फसल उत्पादन विधि के उपयोग से किसान भाई गेहूं के खेत का उपयोग इन सब्जियों के फसल उत्पादन हेतु सफलतापूर्वक कर सकते हैं। बहुफसलीय कृषि के अंतर्गत रिले खेती फसल उत्पादन की एक परंपरागत एवं महत्वपूर्ण पद्धति है। इस पद्धति में आधार फसल की कटाई से पहले आधार फसल की खड़ी अवस्था में ही खेत में अगली फसल की बुआई की जाती है तथा अनुवर्ती फसल उतेरा फसल कहलाती है। रिले खेती के उपयोग से किसान भाई सीमित संसाधनों (भूमि, समय, पानी, श्रम आदि) एवं कम लागत से फसल लेने में सक्षम होती है।

रिले फसल उत्पादन विधिः रिले फसल उत्पादन की इस पद्धति में गेहूं (आधार फसल) की बुवाई के समय ही खीरा-ककड़ी वर्गीय सब्जियों (उतेरा फसल) के लिए भी योजना बना ली जाती है। गेहूं की बिजाई हेतु खेत तैयार करते समय 4.5 सें. मीटर की दूरी पर 45 सें.मी. चौड़ी व 30-40 सै.मी. गहरी नालियां बना कर छोड़ देते है। नालियों के बीच में गेहूं की बिजाई की जाती है। गेहूं की बिजाई (अक्टूबर-दिसंबर) से लेकर फरवरी तक इन नालियों को खाली रखते है। इस अवधि के दौरान इन नालियों का उपयोग तोरी, पालक, मेथी, मूली, गाजर, मटर आदि अंतर-फसल उगाकर भी किया जा सकता है। अगर गेहूं की बिजाई हेतु खेत तैयार करते समय नालियां नहीं बनाई गई हों तो जनवरी माह से मध्य फरवरी तक 4.5 से 5.0 मीटर की दूरी पर नालियां (6 से 8 नालियां प्रति एकड़) तैयार करते है। नालियों के किनारों पर 50-60 सें.मी. की दूरी पर थाले बना लेते है तथा नालियों को खरपतवार रहित कर लिया जाता है। नालियों में तैयार किए गए इन थालों में मध्य फरवरी में (पाला पड़ने का खतरा समाप्त होने पर) बीज लगाते हैं। अगर बेल वर्गीय सब्जियों (खरबूज, तरबूज, पेठा, घिया, तोरी आदि) की पौध पॉलीथीन बैग में तैयार की गई है तो नालियों में पौध का रोपण गेहूं की कटाई से 45 से 60 दिन पहले करते हैं। पौध रोपाई के तुरंत बाद हल्की सिचांई करना आवश्यक होता है। पॉलीथीन बैग में पौध तैयार करने हेतु 15 सें.मी. लंबे तथा 10 से.मी. चौड़ाई वाले पॉलीथीन (100-200 गॉज) के थैलों में मिटटी, रेत व खाद का मिश्रण बनाकर भर लेते हैं। प्रत्येक पॉलीथीन बैग की तली में 4-5 छोटे छेद कर लिए जाते हैं तथा मिश्रण

भरते समय यह ध्यान रखते हैं कि प्रत्येक पॉलीथीन बैग के किनारे पर 2-3 सें.मी. जगह पानी देने के लिए खाली रहे। इन थैलों में बीज बोने से पहले बीज को फफूंदी नाशक से उपचारित कर लें। प्रत्येक थैले में 2-3 उपचारित बीज दिसंबर-जनवरी माह में लगाए जाते हैं। बीजों की बुवाई के बाद थैलों में हल्की सिचांई फव्वारे की मदद से करते है। बीज अंकुरित होने पर प्रत्येक थैले में एक स्वस्थ पौधा छोड़कर बाकी पौधे निकाल देते है। पॉलीथीन बैग में तैयार किए जाने वाले पौधों को ठंड से बचाने हेतु आवश्यकतानुसार पॉलीथीन घर का प्रयोग किया जाता है। खेत में पौधे लगाने की इस विधि में खाद व उर्वरकों का प्रयोग, निराई-गुड़ाई व सिंचाई आदि क्रियाएं नालियों के अंदर ही की जाती हैं। इस विधि में नालियों के बीच की जगह में सिंचाई नहीं की जाती जिससे फल गीली मिट्टी के संपर्क में नहीं आते तथा खराब होने से बच जाते हैं।

लाभः इस विधि को अपनाने से गेहूं--धान फसल चक्र प्रणाली वाले क्षेत्रों में गेहूं कटाई के बाद तथा धान की रोपाई तक (अप्रैल से जून) किसान भाई खेत का उपयोग खरबूज, लौकी, तोरी, तरबूज, कद्दू/सीताफल, पेठा आदि (जिनकी बेल अधिक फैलती है) सब्जियों के फसल उत्पादन हेतु सफलतापूर्वक कर सकते हैं। गेहूं में ककड़ी वर्गीय सब्जियों की रिले फसल उत्पादन विधि का उपयोग करने से (15 जून तक) खरबूजे, तरबूज, घीया व पेठा में क्रमशः 200, 300, 250 एवं 350 (सारणी1) क्विंटल/ हेक्टेयर फलों की पैदावार होती है जबकि गेहूं कटाई के उपरांत मूंग उगाने पर 10 क्विंटल (बीज) एवं लोबिया उगाने पर 30 से 35 क्विंटल (फलिंया) प्रति हेक्टेयर की दर से प्राप्त होती हैं। धान-गेहूं फसल प्रणाली के अंतर्गत विभिन्न फसलों के आर्थिक विश्लेषण में पाया गया कि धान-गेहूं, धान-गेहूं-मूंग, धान-गेहूं-लोबिया व धान-गेहूं-खरबूज फसल चक्र से क्रमशः 1.80, 2.20, 2.52 तथा 3.64 लाख रुपए/हेक्टेयर की दर से सकल आय प्राप्त हुई तथा धान-गेहूं, धान-गेहूं-मूंग, धान-गेहूं-लोबिया व धान-गेहूं-खरबूज फसल चक्र से क्रमशः 137, 167, 191 तथा 276 क्विंटल/हेक्टेयर गेहूं समतुल्य पैदावार प्राप्त हुई।

सारणी-1. कद्दूवर्गीय सब्जियों में बीज दर, फलों एवं बीज की पैदावार

फसल	बीज दर (किलो./हेक्टेयर)	फलों की औसत पैदावार (क्वि./हेक्टेयर)	बीज की औसत पैदावार (किलो./हेक्टेयर)
तरबुज	3.7-5.0	300-375	190-200
पेठा	3.7-5.0	300-375	250-375
खरबूज	1.9-2.5	150-200	150-175
घिया / लौकी	3.7-5.0	250-300	375-500

कद्दूवर्गीय सब्जियों में कई प्रकार के रोग एवं कीटों के आने की संभावना रहती है। उपरोक्त फसलों के प्रमुख कीट एवं रोगों के नियंत्रण संबंधी जानकारी का विवरण सारणी 2. में दिया गया है।

सारणी-2: कद्दूवर्गीय सब्जियों के प्रमुख कीट एवं रोग तथा उनके नियंत्रण के उपाय

कीट/रोग	हानि के लक्षण	नियंत्रण
माहू या चेपा	इस कीट के शिशु व व्यस्क तने, कोमल पत्तियों व पुष्पकलिकाओं से रस चूसते है।	इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. या थायोमिथेक्साम 70 डब्ल्यू. एस . 0.5.0.70 मि0लि0 दवा/ लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।
लीफ माइनर	यह कीट पत्तियों के ऊपरी भाग पर टेढी-मेढी भूरे रंग की सुरंग बनाता है तथा इसका लार्वा पत्तियों को हानि पहुंचाता है।	

सफेद मक्खी	इसका प्रकोप पत्तों की निचली सतह पर शिराओं के बीच में होता है। यह कीट पत्तियों से रस चूसता है। इसके प्रभाव से पत्तियां पीली हो जाती हैं तथा पत्ते सिकुड़कर नीचे की तरफ मुड़ जाते हैं। सफेद मक्खी विषाणु रोग का प्रसार भी करती है।	
फल भेदक मक्खी	फल भेदक मक्खी का प्रकोप फरवरी से लेकर नवंबर तक होता हैं। मादा मक्खी अपने अंड रोपक से कोमल फलों के गूदे में अंडे देती है। मैगट फलों के अंदर गूदे को खाकर नष्ट कर देता है।	डाइमिथोएट 30 ई.सी. अथवा मेलाथियान 50 ई.सी. अथवा मिथाइल डेमेटोन 25 ई.सी. 1-1.5 मि.ली. दवा / लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।
लाल कद्दू भृंग	इस कीट के ग्रब (लार्वी) छोटे पौधों के तनों में जमीन के पास से छेद कर देते हैं जिससे पौधा सूख जाता है। ये ग्रब (लार्वी) जमीन पर रखे फलों के निचले भाग में छेद कर फलों को हानि पहुंचाते हैं। भृंग (व्यस्क) पौधों की पत्तियों व फूलों को खाकर नष्ट करता है।	
तना विगलन/ कॉलर रोट	भूमि की सतह के पास पौधों के तनों पर भूरे रंग के पनीले तथा नरम धब्बे बनते हैं। पौधे पीले पड़कर सूख जाते है।	ट्राइकोडर्मा विरिडी 4 ग्राम अथवा बाविस्टीन 2 ग्राम / कि.ग्रा. बीज की दर से उपचार करें।
चूर्णित आसिता	इसके लक्षण पत्तियों व तनों की सतह पर सफेद या धुंधले धूसर सूक्ष्म आभा युक्त धब्बों के रूप में प्रकट होते हैं जो बाद में सफेद चूर्ण के रूप में फैल जाते है।	10-15 दिन के अंतर पर कैराथेन के 0.05 प्रतिशत के घोल का छिड़काव करें।
एन्थ्रैक्नोज		

खरबूजे की गेहूं के साथ रिले खेती काफी लाभकारी सिद्ध हुई है। इस पद्धति को अपनाकर किसान भाई एवं बहनें अतिरिक्त लाभ की प्राप्ति कर सकते हैं।

प्रकृति अपरिमित ज्ञान का भंडार है, पत्ते-पत्ते में शिक्षापूर्ण पाठ हैं, परंतु उससे लाभ उठाने के लिए अनुभव आवश्यक है।

- हरिऔध

अखरोट की उन्नत खेती

के.के.प्रामाणिक, ए.के. शुक्ला, मधु पटियल एवं संतोश वाटपाडें

भा.कृ.अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान क्षेत्रीय केंद्र
अमरतारा कॉटेज, शिमला-171004

सार

अखरोट हमारे स्वास्थ्य के लिए काफी लाभदायक होता है। विश्व व घरेलू बाजार में अखरोट की भारी मांग है। जलवायु परिवर्तन के वर्तमान दौर में अखरोट की खेती महत्वपूर्ण स्थान ले सकती है, क्योंकि यह फलदार पेड़ विपरीत परिस्थितियों को झेलने की अपार क्षमता रखता है। अखरोट उच्च पोषण तत्वों से भरपूर है जैसे- प्रोटीन, वसा, और विटामिन। अखरोट में प्रतिऑक्सीकारक गुण भी होते हैं, जो स्वास्थ्यवर्धक होते है। अखरोट का पौधा सामान्यतः रोपाई के 10-15 वर्षो के बाद ही फल देना शुरू करता है। इस समस्या के समाधान हेतु, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान क्षेत्रीय केंद्र, शिमला में हिमाचल प्रदेश से एक संग्रह मूल्यांकन किया जा रहा है। यह पूसा खोड़ के नाम से जाना जाता है। यह ग्राफटिंग के दूसरे साल में ही यह फल देना शुरू करता है। इस की गुठली का रंग हल्का भूरा है, यह उच्च घनत्व बागान के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है।

अखरोट प्रोटीन, वसा और खनिज लवणों का मुख्य स्रोत है। अन्य गिरीदार फलों की अपेक्षा इसमें विटामिन बी- 6 पायी जाती है। अखरोट के अधपके फल तथा हरे नट एसकोर्बिक अम्ल का मुख्य स्रोत होते हैं। अखरोट की गिरी में 14.8 ग्राम प्रोटीन, 64 ग्राम वसा, 15.80 ग्राम कार्बोहाइड्रेट, 2.1 ग्राम रेशा, 1.9 ग्राम राख, 99 मिलीग्राम कैल्शियम, 380 मिलीग्राम फॉस्फोरस, 450 मिलीग्राम पोटैशियम प्रति 100 ग्राम में पाया जाता है। अखरोट के अधपके फलों का प्रयोग अचार, चटनी, मार्मेलेड, जूस तथा सीरप बनाने में प्रयोग किए जाते है। अखरोट का तेल खाने, वार्निश तथा साबुन बनाने में प्रयोग किया जाता है। अच्छी खुशबू के कारण इसके सूखें फलों को खाने में प्रयोग किया जाता है।

महत्व

अखरोट की खेती या बागवानी भारत देश में मुख्य रूप से पहाड़ी क्षेत्रों में की जाती है। इसका अधिकतम उपयोग मिष्ठान उद्योग में किया जाता है। मस्तिष्क रुपी अखरोट दिमाग की सेहत के लिए अत्यंत लाभदायक होता है। अखरोट की खेती के लिए अंग्रेजी या फारसी किस्में ही व्यावसायिक स्तर पर महत्वपूर्ण है। यह उत्तर पश्चिमी हिमालय का फल है और इसके पौधे समुद्र तल से 1200 से 2200 मीटर की ऊंचाई तक उगते हैं।

समशीतोष्ण कटिबंधीय गुठलीदार फलों में बादाम, अखरोट, पोकन, चैस्टनट एवं समशीतोषण कटिबंधीय महत्वपूर्ण गुठलीधार फल जातियां हैं, जो कि तेल, प्रोटीन, विभिन्न विटामिन एंव खनिजों से परिपूर्ण होते हैं। भारत में, हिमाचल प्रदेश नंबर-2, अखरोट उत्पादन राज्य है। यहां पर अखरोट की पैदावार बढ़ाने क्षमता है। परंतु अगर यह बीज से लगाया जाता है तो 15-20 साल के बाद ही यह फल देना शुरू करता है।

अखरोट प्राचीन काल से उपयोग किया जाता है, परन्तु इस के बाग केवल पिछली सदी के अंत में लगाए जाने शुरू किए गए। चीन दुनिया में मुख्य अखरोट उत्पादक देश है। भारत में 2,94,400 मिलियन टन का सालाना उत्पादन होता है और यह, स्पेन, मिस्र, फ्रांस, अरब गणराज्य, जर्मनी, नीदरलैंडस, ब्रिटेन और ताइवान जैसे देशों के लिए अखरोट का निर्यात किया जाता है।

अखरोट के बगीचे की स्थापना के लिए उच्च विकास की लागत के लिए कम उम्र की फसल का आना एक महत्वपूर्ण विचार है, और साथ ही साथ अच्छी गुणवत्ता गुठली का होना अनिवार्य है।

अभी तक अखरोट बीज से ही लगाया जाता रहा है, इसलिए हर एक पौधा एक दूसरे से विभिन्न होता है। स्थानीय किस्मों के उचित वर्गीकरण की अनुपस्थिति, अच्छे मूलवृंत की अनुपल्बधता, कम पेड़ घनत्व / हेक्टेयर और कम उत्पादकता। इन सभी समस्याओं का समाधान करने के लिए यह कृषि अनुसंधान संस्थान क्षेत्रीय केंद्र, शिमला में हिमाचल प्रदेश के चम्बा ज़िले से एक संग्रह मूल्याकन किया जा रहा है। यह 'पूसा खोर' के नाम से जाना जाता है। यह ग्रॉफटिंग के दूसरे वर्ष से ही फल देना शुरू कर देता है। अखरोट जोकि बीज से लगाया जाता है, वह बहुत जल्दी गुणवत्ता और भारी फसल वाले अखरोट (पूसा खोर) की एक अनूठी विशेषता है। इसके एक फल का वज़न 59.35 ग्राम है। 'पूसा खोर' का बाहरी छिल्का पतला है और इस के तेल की मात्रा 55 प्रतिशत है।

पूसा खोर की खेती

जल्दी फसल के लिए अखरोट जीह्वा या वीनियर ग्रॉफटिंग फरवरी और मार्च के प्रारंभ में ही अच्छे परिणाम देती है। प्रांकर ग्रॉफटिंग अखरोट की फसल में सफलता देती है। 15 से.मी. की 5-6 महीने पुरानी लकड़ी मूलवृंत पर ग्राफ्ट की जाती है। एक साल पुराने मूलवृंत के रूप में रीढ़लींग इस्तेमाल किया जा सकता है।

रोपण खाद और उर्वरक

अखरोट में वर्ग प्रणाली विभिन्न सांस्कृतिक प्रथाओं के लिए की जाती है। 1.25 मीटर के गड्ढे 10"10 मीटर की दूरी, 1.25 मीटर आकार सितंबर के दौरान खोदी जाने चाहिए। प्रत्येक गड्ढे में 50 किलो गोबर (सड़ा हुआ),150 ग्राम एल्ड्रिन की धूल, 150 ग्राम यूरिया, 500 ग्राम प्रत्येक सूपर फॉस्फेट और पोटाश की लवणमय मिश्रित मिट्टी के साथ भरा जाना चाहिए। अखरोट वृक्षारोपण के लिए अच्छा मौसम, दिसंबर से जनवरी होता है। मूलवृंत के आस-पास के हिस्से को ज़मीन की सतह के ऊपर कम से कम 15 से.मी. होना चाहिए। वृक्षारोपण के बाद पानी जल्द ही दिया जाना चाहिए। एक साल पुराने पौधे को 500 ग्राम यूरिया और 750 ग्राम सूपर फॉस्फेट और पोटाश की लवणमय की आवश्यकता है। जैसे पेड़ की उम्र बढ़ती है, पोषण की ज़रूरत बढ़ती रहती है। सूपर फॉस्फेट और पोटाश की पूरी खुराक और यूरिया की आधी खुराक अक्टूबर में देनी चाहिए और आधी खुराक फरवरी के महीने में देनी चाहिए। पत्तों पर सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे-जस्ता, तांबा, मैग्नीज़, बोरान, लौह और मेग्नीशियम का छिड़काव मार्च के महीने में किया जाता है।

सघाई एवं काट-छांट

अखरोट दोनों टर्मिनल और पाश्र्व फलवाहक है। अखरोट में या तो टर्मिनल या दोनों टर्मिनल और आधा एक साल पुरानी लकड़ी पर फल लगता है। एक साल के विकास के बाद, पेड़ 2 मीटर से ऊपर काट दिया जाता है। कुछ शाखांए से पेड़ का विकास अपने अनुसार किया जा सकता है।

कीट व रोग रोकथाम

वालनट वीवल (घुन) सुंडी विकसित फलों में प्रवेश करके गिरी खाती है और इसको काले सड़े पदार्थ में बदल देती है। प्रभावित फल सुंडी समेत झड़ जाते हैं।

रोकथाम- पेड़ के बड़े आकार के कारण कीटनाशी छिड़काव नितांत कठिन तथा महंगा पड़ता है। अतः बागबानों को मिलकर गिरे हुए फलों को एकत्र करके गड्ढे में दबा कर या जला कर नष्ट कर देना चाहिए।

काली चित्ती- इस रोग से पत्तों पर धब्बे पड़ जाते हैं और छिलके पर गोल मृत धब्बे उत्पन्न हो जाते हैं और फल समय से पहले ही झड़ने लगते हैं।

रोकथाम- बोर्डो मिश्रण (4:4:50) का पत्तियां खुलते समय की अवस्था में छिड़काव करें। दो सप्ताह बाद फिर दोहराएं और फिर से पूर्ण पत्ती विकसित होने पर छिड़काव करें।

संचयन और उपज

अखरोट की फसल सितंबर और अक्टूबर के बीच में तैयार हो जाती है। तुड़ाई अंतराल 2 से 3 बार दोहराया

जाता है। फलों को धोया जाता है और धूप में सुखाया जाता है। सुखाए हुए फल अपने आकार और रंग के अनुसार वर्गीकृत किए जाते हैं। अखरोट की उपज पेड़ों की उम्र, आकार और विविधता पर निर्भर करती है।

पूसा खोर

समय परिवर्तन का धन है। परंतु घड़ी उसे केवल परिवर्तन के रूप में दिखाती है, धन के रूप में नहीं।

- रवींद्रनाथ ठाकुर

कृषि में आत्म निर्भरता एवं संसाधन संरक्षण हेतु आधुनिक कृषि मशीनों का प्रयोग

आर.आर. राणा, रणबीर सिंह, सुरेंद्र कुमार, अशोक दीक्षित, राजकुमार एवं दिनेश टाक

फार्म संचालन सेवा इकाई,
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110 012

आज प्रौद्योगिकियों एवं मशीनों का युग है। विश्व के सभी क्षेत्रों में अधिकांश कार्य मशीनों से संपादित किए जा रहे हैं, कृषि में अब प्रति इकाई से अधिक उत्पादकता हेतु आधुनिक उन्नत कृषि यंत्रों का प्रयोग हो रहा है। देश में विभिन्न परीक्षणों द्वारा ज्ञात हुआ है कि कुछ कृषि यंत्रों के उपयोग से 15 से 20 प्रतिशत बीज, 15 से 20 प्रतिशत उर्वरक, 20 से 30 प्रतिशत समय तथा 20 से 30 प्रतिशत मजदूरों की बचत की जा सकती है। साथ ही साथ फसल घनत्व में 5 से 20 प्रतिशत तथा उत्पादकता में 10 से 15 प्रतिशत की वृद्धि की जा सकती है। कृषि के आधुनिकीकरण में कृषि यांत्रिकीकरण की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। वैज्ञानिकों की मांग एवं आवश्यकता को देखते हुए संस्थान में कृषि यांत्रिकीकरण को सन्निहित (सम्मिलित) किया गया है। प्रक्षेत्र फसलों में उन्नत कृषि यंत्रों द्वारा आज वैज्ञानिक कृषि कार्यो में होने वाले खर्च, श्रम, ऊर्जा, ईंधन, एवं समय में कृषि उपकरणों का उपयोग करके प्रति इकाई उत्पादन लागत को कम कर सकते हैं तथा अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं। वर्तमान में कृषि उपकरणों को अपनाने के मुख्य कारणों में मजदूरों की कमी, जनसंख्या की वृद्धि, खरपतवारों की वृद्धि और उत्पादन पर बढ़ता व्यय आदि हैं। प्रक्षेत्र से अधिक उत्पादन लेने के लिए यह आवश्यक हो गया है कि सभी कृषि कार्य ट्रैक्टर एवं आधुनिक कृषि यंत्रों द्वारा समय पर संपन्न किये जाएं। आज कम समय में कम लागत लगाकर अधिक उत्पादन लेने की आवश्यकता है। और यह तभी संभव है, जब खेती में प्रत्येक कार्य उन्नतशील यंत्रों एवं मशीनों द्वारा समय पर व उचित ढंग से किया जाएं। इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति हेतु संस्थान अनेक आधुनिक कृषि उपकरणों व मशीनों का उपयोग कर रहा है। प्रस्तुत लेख में कृषि में आत्म निर्भरता, प्राकृतिक संसाधन संरक्षण एवं उच्च उत्पादकता के लिए कुछ प्रमुख कृषि यंत्रों एवं मशीनों का विवरण दिया गया है जिनके उपयोग से भूमि एवं जल की स्थिरता में सुधार किया जा सकता है।

रोटावेटर

परंपरागत विधि में फसलों की बुवाई से पूर्व खेत की दो-तीन बार देशी हल से जुताई की जाती है फिर डिस्क हैरो द्वारा जुताई तथा अंत में खेत को समतल करने के लिए पटेला चलाना पड़ता था, लेकिन अब इन सबके स्थान पर प्राकृतिक संसाधन संरक्षण के लिए रोटावेटर का प्रयोग किया जा सकता है। यह एक बहुउद्देशीय आधुनिक ट्रैक्टर चालित प्राथमिक भू-परिष्करण कृषि के लिए जुताई यंत्र है। जिसके द्वारा खेत में फसल अवशेषों को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर भूमि में दबा दिया जाता है। इसका प्रयोग गीली एवं सुखी जमीन में 5 से 6 इंच गहराई तक मिट्टी को मुलायम करने में किया जाता है। इस यंत्र का उपयोग हरी खाद मिलाने में भी होता है। यह यंत्र 35 हार्सपॉवर के ट्रैक्टर से चलता है। रोटावेटर को ट्रैक्टर की पी.टी.ओ. शाफ्ट द्वारा शक्ति दी जाती है। इसके रोटर की गति 250 से 300 चक्कर/मिनट तक होती है जबकि हेक्टर पी.टी.ओ. की गति 540 चक्कर/मिनट तक होती है। रोटावेटर के फाले अंग्रेजी के अक्षर 'एल' आकार के होते हैं तथा एक के बाद एक विपरीत दिशा में धुरी पर लगे होते हैं। यह मशीन 1.25, 1.55, 1.65 एवं 1.84 मीटर चौड़ाई में उपलब्ध होती है। इसका आकार मशीन द्वारा कटी जमीन की चैड़ाई से निर्धारित होता है। इससे एक घंटे में लगभग एक एकड़ खेत की अच्छी महीन जुताई की जाती है। एक हेक्टेयर खेत की जुताई हेतु लगभग 3.6 घंटे का समय लगता है तथा खेत तैयार करने की लागत लगभग 600 रु./हेक्टेयर आती है यह कृषि यंत्र बड़े-बड़े ढेलों को तोड़ने के अतिरिक्त

खरपतवारों को भी जड़ से उखाड़ने का काम करता है तथा फसल के डंठलों व अवशेषों को एक ही बार में खाद में परिवर्तित करने में सहायता करता है। इसका प्रयोग धान रोपाई के लिए पड़लिंग में भी किया जा सकता है। इसकी कीमत भी अलग-अलग होती है तथा इसकी कीमत 60 हज़ार से एक लाख बीस हज़ार रु. तक होती है। इस पर लगभग 40 हज़ार रूपयों तक का अनुदान भी उपलब्ध होती है।

चित्र 1. रोटावेटर

लेजर लैंड लेवलर

आधुनिक खेती में ट्रैक्टर एवं भारी-भरकम कृषि मशीनों के उपयोग के कारण खेती में समतलता एवं मेंडें सुरक्षित नहीं रहीं, जिससे वर्षा जल का अधिकांश भाग बहकर नष्ट हो जाता है। इसके अतिरिक्त कृषि भूमि की समतलता बिगड़ती जा रही है, साथ ही फसलों को दिए गए पोषक तत्वों का एक बड़ा हिस्सा भी वर्षा जल के साथ बहकर नष्ट हो जाता है। इस समस्या के कारण फसल की औसत पैदावार में गिरावट आ जाती है। कभी-कभी एक ही तरह के कृषि यंत्रों द्वारा एक ही गहराई पर बार-बार जुताई करने के कारण अधो-भूमि में हल तल के नीचे सख्त (कठोर) परतों का निर्माण हो जाता है, जिसके कारण मृदा में वायु नमी के आवागमन में बाधा पहुंचती है। साथ ही पौधों की जड़ों का विकास भी ठीक तरह से नहीं हो पाता है। इस प्रकार की समस्याओं के निवारण के लिए आधुनिक कृषि यंत्र लेजर लैंड लेवलर के उपयोग से खेतों को पूर्णतया समतल किया जा सकता यह यंत्र चार उपकरणों से मिलकर बना होता है। जिसके तीन उपकरण कंट्रोल बॉक्स, लेजर ग्राही और मांजा (बकेट) एक ट्रैक्टर में लगे होते हैं तथा लेसर ट्रांसमीटर खेत के बाहर तिपाई पर रखा जाता है। यह लेसर ट्रांसमीटर खेत के समांतर लेजर तरगें अपने चारों और भेजता है जिन्हें मांझे पर लगा लेजर ग्राही (रिसीवर) पकड़ लेता है और उन्हें कंट्रोल बॉक्स को भेजता है। ट्रैक्टर ड्राइवर की सीट की बगल में लगा हुआ यह कंट्रोल बॉक्स मांझे को आवश्यकतानुसार ऊपर नीचे करता रहता है, जिससे खेत में चलता हुआ ट्रैक्टर खेत को पूर्ण समतल कर देता है। यदि एक एकड़ खेत का ढ़लान 10 सें.मी. से कम है तो दो घंटे/एकड़ का समय लगता है। इस यंत्र द्वारा समतल भूमि पर जल, उर्वरक, खाद, पोषक तत्व आदि एकसार वितरित होते हैं तथा उनका न्यूनतम क्षरण होता है। इस तकनीक से 20 से 30 प्रतिशत पानी की बचत, 40 से 50 प्रतिशत पैदावार में बढ़ोतरी एवं 30 प्रतिशत कृषि योग्य भूमि बढ़ जाती है। इसकी कीमत 3.25 से 4.50 लाख तक है तथा इस पर 50 प्रतिशत तक अनुदान विभिन्न राज्य सरकार दे रही है।

चित्र:2 लेजर लेबलर

फरो-ऑपनर

खेती में संरक्षण तकनीकियों के अंतर्गत भूमि की अधिक छेड़-छाड़ नहीं की जाती है तथा उपलब्ध नमी व फसल अवशेषों में फसलों के बीजों को बोया जाता है जिसके लिए अनेक यंत्र प्रयोग में लाए जाते हैं। जिसमें मुख्य रूप से साधारण यंत्र फरो-ऑपनर प्रयोग में लाया जाता है। जिसमें मुख्य फ्रेम एवं कुडकारी इकाई मुख्य भाग होते हैं। संरक्षण खेती के अंतर्गत प्रयोगात्मक छोटे

प्लाटों में विभिन्न प्लाटों के अंतर्गत पहले ट्रैक्टर चालित फरो-ऑपनर यंत्र द्वारा लाईने बनाई जाती है। जिसके बाद हाथों द्वारा बीजों की बुवाई की जाती है। जिससे खेत में सटीक बुवाई हो जाती है।

चित्र 3. फरो ऑपनर

नो टिल सीड-ड्रिल

जीरो-टिलेज तकनीक खेती में लागत कम करने, फसलों की बुवाई समय पर करने तथा प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में अनोखी विधि है। इससे गेहूं की बुवाई बहुपयोगी एवं लाभकारी साबित हुई है। आजकल किसान जीरो टिलेज से धान, बाजरा, कपास, मक्का, अरहर, एवं सरसों के खेतों में सीधे गेहूं, मूंग, चना तथा सरसों की बुवाई करने लगे हैं, परंतु यह मशीन विशेष रुप से गेहूं की बुवाई के लिए डिजाइन की गई थी। इस तकनीक द्वारा अगेती एवं पछेती दोनों तरह की बुवाई कर सकते है। अच्छी पैदावार के लिए बीज एवं उर्वरक की मात्रा पारंपारिक विधि के बराबर ही रखनी चाहिए। सामान्यतः धान, मक्का, कपास, व अरहर की पछेती किस्मों की कटाई के उपरांत खेत में गेहूं की फसल के लिए खेत तैयार करने का समय नहीं मिल पाता है और किसान के पास खेत को खाली छोड़ने के अलावा कोई उपाय नहीं रहता है। जीरो-टिलेज ड्रिल से बुवाई करके किसान इस समस्या का समाधान कर सकते हैं। इस मशीन द्वारा पूर्व फसलों की कटाई करने के उपरांत उसी खेत की बिना जुताई किए गेहूं की बुवाई कर सकते हैं यह मशीन साधारण बुवाई मशीन की तरह ही होती है उसी तरह ही कार्य करती है, इसमें केवल अंतर फरो-ओपनर का होता है जो नूकीले चाकू की तरह होते हैं जिनमें बीज बिना कोई कठिनाई के उचित गहराई पर पहुंच जाता है। इस मशीन में संतुलित एवं उचित मात्रा में बीज गिराने के लिए फ्लूटेड रोलर लगाए गए है तथा उर्वरक डालने के लिए खाचेंदार उध्र्वाधर रोलर्स लगाए गए हैं। उर्वरक की मात्रा को उर्वरक के बक्से में किए छिद्रों के आकार को कम या अधिक करके निर्धारित किया जाता है। उर्वरक व बीज गिराने की इकाइयों को चलाने के लिए शक्ति, सामने की तरफ दिए गए पहिए से चैन और गरारी के द्वारा दी जाती है। बीज की गहराई को कम या अधिक करने के लिए मशीन के दोनों तरफ पहिए लगे होते हैं। यह मशीन 35 या उससे अधिक अश्व-शक्ति वाले ट्रैक्टर द्वारा चलाई जा सकती है। यह मशीन 9/11 कूंडों में बुवाई के लिए उपलब्ध है। कूंड खोलने वाले भाग (फरो-ओपनर) 'शू' के आकार के होते हैं। कूंड से कूंड की दूरी कम या अधिक करने का प्रावधान होता है। प्रायः इस मशीन का आकार लगभग 1800 मि.मी. लंबाई, 600 मि.मी. चौडाई, 1100 मि.मी. ऊंचाई तथा भार 250 कि.ग्रा. होता है। इस तकनीक के प्रयोग से एक ओर गेहूं की उत्पादन लागत में कमी आती है तो वहीं दूसरी तरफ पर्यावरण हितैषी भी है। अतः इस तकनीक को किसानों में और अधिक लोकप्रिय बनाने की आवश्यकता है।

चित्र 4. जीरो टिलेज मशीन

रेज्ड बेड प्लांटर

यह ट्रैक्टर चालित यंत्र डी. डब्ल्यू. आर., करनाल, हरियाणा द्वारा मेंड़ों पर गेहूं की बुवाई के लिए विकसित किया गया है। यह यंत्र सिंचित क्षेत्रों के लिए धान,

सोयाबीन, कपास व मक्का आदि के बाद गेहूं की बुवाई हेतु उपयुक्त है। उत्तर-पश्चिमी भारत में प्रचलित फर्टी-सीडड्रिल द्वारा समतल भूमि में बुवाई करने की अपेक्षा इस विधि द्वारा बुवाई करने पर उपज में 5 से 10 प्रतिशत बीज, उर्वरकों एवं सिंचाई जल की कम खपत होती है, तथा फसल गिरने की कम संभावना होती है। यह यंत्र अच्छी जुती हुई भूमि पर एक बार में ही मोड़ बनाकर उन पर बीज की बुवाई और मेंड़ों को सही आकार में रखने का कार्य करता है। यह यंत्र दो मेंड़ों पर 6 लाइनों में बुवाई करता है। उभरी हुई क्यारियों की चौड़ाई को 56 से 70 सें.मी. के बीच समायोजित किया जा सकता है। इसको 35 से 45 अश्व-शक्ति के ट्रैक्टर द्वारा चलाया जा सकता है। इसकी कार्य क्षमता 0.2 हेक्टेयर/घंटा है। इस यंत्र में उभरी हुई मेंड़ बनाने के लिए रिजर लगे होते हैं। बीज को नियमित तथा निर्धारित मात्रा में गिराने के लिए फ्लुटेड रोलर लगे होते हैं। उर्वरक को कप के आकार वाले रोटर द्वारा गिराया जाता है। मेड़ों को समतल तथा आकार देने के लिए एक बड़ा शेपर यंत्र के पीछे लगा होता है। मेंड़ों की बीच की नालियों से सिंचाई की जाती है तथा बरसात में जल निकासी का लाभ भी इन्हीं नालियों से होता है। इस पद्धति में बुवाई के लिए भूमि का भुरभूरा होना आवश्यक है तथा अच्छे बीज अंकुरण के लिए पर्याप्त नमी होनी चाहिए। गेहूं के तुरंत बाद पुरानी मेंड़ों को पुनः प्रयोग करके खरीफ फसलों उदाहरणार्थ मूंग, मक्का, कपास, सोयाबीन, अरहर आदि फसलें उगाई जा सकती है। इस विधि से दलहन व तिलहन की 15 से 20 प्रतिशत अधिक उपज मिलती है तथा रबी मौसम की फसलों में फेलेरिस माइनर खरपतवार का मेंड के ऊपर कम जमाव होता है।

चित्र 5. रेज्ड बेड प्लांटर

हैप्पी सीडर

विश्व खाद्य संगठन के अनुसार संरक्षण कृषि, किसानों का जीवन स्तर तथा आजीविका के बेहतर साधनों को बढ़ावा देती है। अन्य देशों की तरह हमारे देश में भी संरक्षण खेती का प्रयोग बढ़ता जा रहा है। वर्तमान में संसाधन संरक्षण हेतु अनेक यंत्र प्रयोग किए जा रहे हैं, जिनमें से सर्वाधिक उपयोगी एवं बहुउपयोगी यंत्र हैपी सीडर है। जिसको धान-गेहूं फसल चक्र में फसल अवशेष एवं बुवाई के लिए प्रयोग किया जाता है। यह यंत्र कंबाईन द्वारा धान कटाई के बाद उसके अवशेषों में गेहूं की बुवाई हेतु प्रयुक्त किया जाता है। यह यंत्र में नो टिल सीड कम फर्टीड्रिल के सभी गुण है। इस यंत्र में फसल के अवशेषों आदि को दबाने के लिए चैपर लगा रहता है। जो अवशेषों को भूमि में दबा देता है, जिससे बुवाई में सुविधा के साथ-साथ फसल अवशेषों से कार्बन की मात्रा भी मिल जाती है। यह 40 से 45 एच.पी. ट्रैक्टर से चालित होता है। इससे एक घंटे में एक एकड़ खेत की बुवाई की जा सकती है तथा इसकी कीमत लगभग 60-80,000 रूपए है। हैप्पी सीडर मशीन ट्रैक्टर के पी.टी.ओ. शाफ्ट द्वारा चालित होता है, जोकि लगभग 1500 आर.पी.एम. पर चलाया जाता है तथा पीछे फरो-ओपनर से बुवाई की जाती है। इस यंत्र के उपयोग से उपयोगी प्राकृतिक संसाधनों तथा ऊर्जा, लेबर, डीजल इत्यादि की बचत होती है। इसकी कार्य क्षमता 5-6 घंटे/हेक्टेयर है। इस पर सरकार की तरफ से अधिकतम 40,000 रूपए का अनुदान है।

चित्र 6. हैप्पी सीडड्रिल

टी.एम.ओ

यह यंत्र अत्यधिक साधारण संरचना वाली तथा विभिन्न फसलों की पंक्तियों में बुवाई के लिए उपयुक्त है। संरक्षण खेती के अंतर्गत इस यंत्र द्वारा बीज से बीज एवं लाइन से लाइन की दूरी को नियंत्रित किया जा सकता है। इस यंत्र में बुवाई इकाई एवं कूडकारी दो मुख्य भाग है। फोसू में यह यंत्र 4 से 6 पंक्तियों में बुवाई के लिए उपलब्ध है। समय पर विभिन्न वैज्ञानिक ने विभिन्न फसलों की बुवाई हेतु परीक्षण खेत में उपयुक्त पाया है। इस यंत्र द्वारा गेहूं, सरसों, चना, मटर, सोयाबीन, ज्वार इत्यादि फसलों की पंक्तियों में सटीक बुवाई की जा सकती है तथा यह यंत्र अनुसंधान कार्यों के लिए उपयुक्त है।

चित्र 7. टी.एम.ओ.

बहुफसलीय स्पेस प्लांटर (विंटर-स्ट्राईगर)

यह एक स्वचालित विदेशी मशीन है जिसका संस्थान में लाना का मुख्य उद्देश्य है कि प्रजनक बीज बहुत कम होता है तथा जिसको प्रयोगात्मक क्षेत्र में सटीक बोने के लिए अन्य कोई बुवाई यंत्र नहीं है। इस यंत्र में पंक्तियों एवं गहराई को नियंत्रित व समायोजित करने की व्यवस्था होती है। इस यंत्र का सबसे बड़ा लाभ यह है कि महंगे बीज की बचत होती है तथा अंकुरण प्रतिशत बढ़ता है। यह यंत्र 5 से 20 मी. लंबाई वाले छोटे प्लाटों में बीज की बुवाई हेतु उपयुक्त है तथा इसमें भरण इकाई, मीटरिंग, फाल इकाई, इंचन, शक्ति वाहक व नियंत्रण इत्यादि मुख्य भाग होते हैं। इस यंत्र में बीज बक्सों के स्थान पर एक फनेल लगाया गया है। जिसमें बुवाई के समय बीज डाला जाता है। इस यंत्र को चलाने के लिए 7 एच.पी. डीजल इंजन लगाया गया है तथा इसे चलाने व खेत में बुवाई हेतु दो व्यक्तियों की आवश्यकता होती है। एक व्यक्ति यंत्र को चलाता है तथा दूसरा फनेल में बीज डालता रहता है। इस मशीन द्वारा छः प्रजातियों को एक साथ बोया जा सकता है। इसमें पंक्तियों से पंक्तियों की दूरी 20 से 30 सें.मी. तथा बीज से बीज की दूरी 2 से 40 सें.मी. तक समायोजित की जा सकती है। इस मशीन से गेहूं, मक्का, मटर, सूरजमुखी, ज्वार, सोयाबीन एवं सरसों इत्यादि की बुवाई की जा सकती है।

चित्र 8. विंटर-स्ट्राईगर

पुलमैन थ्रेशर

प्रयोगात्मक क्षेत्र में विभिन्न फसलों की कटाई के बाद थ्रेसिंग व गहराई आदि में विभिन्न प्रकार की समस्याएं आती है क्योंकि छोटे-छोटे प्लाटों की परिशुद्ध उपज प्राप्त करना अत्यधिक कठिन एवं श्रमिक कार्य है। जिसके लिए स्वचालित पुलमैन थ्रेसर यंत्र का विकास किया गया है। जिसके द्वारा गेहूं, धान, सरसों, सोयाबीन, मूंग, मसूर, चना, उड़द, अरहर इत्यादि फसलों की थ्रेसिंग

चित्र 9. पुलमैन

आसानी से एकल प्लाटों के अनुसार की जा सकती है। जिससे प्रयोगात्मक उपज के आंकड़े अधिक सटीक व सार्थक प्राप्त होते हैं।

जुर्न कंबाइन

यह यंत्र बहुद्देशीय अनुसंधान कार्यों के लिए अत्यधिक उपयुक्त है। इसके द्वारा प्रयोगात्मक प्रक्षेत्र में विभिन्न फसलों की कटाई, गहाई एवं सफाई आदि का कार्य आसानी से किया जा सकता है। इस यंत्र में हैडर इकाई, गहाई, छंटाई व सफाई, शक्ति वाहन एवं नियंत्रण इकाई आदि मुख्य भाग है। इस यंत्र द्वारा छोटे-छोटे प्लाटों की कटाई की जा सकती है तथा अलग किस्म के बीज मिश्रित हुए अलग-अलग प्राप्त किए जा सकते हैं। इस मशीन से 1.2 से 2 मीटर की चौड़ाई तक फसल काट सकते हैं। इस यंत्र में दानों की टूट तथा हानि लगभग न के बराबर है। इस यंत्र के उपयोग से परीक्षण प्लाटों की कटाई, गहाई तथा सफाई कम खर्च एव समय में की जा सकती है। यह अनुसंधान कार्यो में उपयुक्त सिद्ध यंत्र है। इस यंत्र से गेहूं, चना, अरहर, मूंग, सरसों आदि फसलों की परिशुद्ध कटाई की जा सकती है। इस यंत्र की कार्यक्षमता 2 से 3 हेक्टेयर/दिन होती है। इस यंत्र में प्रति दिन सफाई की आवश्यकता पड़ती है।

चित्र 10. जुर्न कंबाइन

स्वचालित कंबाइन हार्वेस्टर: कंबाइन हार्वेस्टर एक ऐसी मशीन है जिसमें एक साथ कटाई/गहाई तथा बोरे में अनाज भरने तक का कार्य एक साथ कर सकते है। इस मशीन के निर्माण का उद्देश्य यह है कि कटाई, गहाई, भंडारण जैसे तीन महत्वपूर्ण कार्य समय से हो जाएं जोकि पूर्वकाल में अलग-अलग किया जाता था। जिससे किसान को अधिक समय तक जोखिम उठाना पड़ता था। कंबाइन हार्वेस्टर द्वारा गेहूं, धान, सरसों, तिलहन, सोयाबीन, चना, आदि की कटाई तथा गहाई एक साथ कर सकते हैं। कंबाइन से 2.7-5 मी. की चौड़ाई तक फसल काट सकते हैं। इस यंत्र में 50 से 60 एच.पी. इंजन, कटर बार, गहाई इकाई, सफाई इकाई, ग्रेन टैंक आदि, मुख्य भाग है। इस यंत्र से बहुत कम नुकसान होता है, साथ ही गिरी हुई फसल की भी कटाई की जा सकती है। इस मशीन द्वारा कटाई, गहाई तथा सफाई तीनों कार्य एक साथ कर सकते हैं। इससे समय की बचत तो होती ही है, साथ ही किसानों को फसल उत्पादों के बाजार में समय से पहुंचने पर फसल उत्पादों की अच्छी कीमत भी मिल जाती है। इस मशीन से दानों की ठूंठ तथा हानि कम से कम होती है। इस मशीन की कार्य क्षमता 3.7 से 5 हेक्टेयर/घंटा है। ट्रैक्टर चालित कंबाइन 55 से 65 अश्व-शक्ति वाले ट्रैक्टरों से चलाई जाती है। इस कंबाइन से ईंधन की खपत 7 से 12 ली./घंटा है। इसके प्रयोग से किसानों को फसलों से भूसा प्राप्त नहीं होता है। इस मशीन से श्रमिकों की कमी तथा समय की बचत संभव है। नमी वाले खेतों में अच्छा कार्य करता है। कंबाइन को 2.8 कि.मी./घंटा की गति से चलाया जाता है तथा यह फसल को लगभग 30 सें.मी. ऊँचाई से काटती है। इसमें ईंधन की खपत 7 से 12 लीटर/घंटा होती है। स्व चालित कंबाइन की कीमत 7 से 10 लाख रू. तक होती है।

चित्र 11. स्व चालित कंबाइन

आम का मूल्यवर्धन

डॉ. राम रोशन शर्मा

खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान नई दिल्ली 110012

आम को भारत में फलों का राजा कहा जाता है। आम के फलों को परिपक्वता की हर अवस्था पर उपयोग किया जा सकता है। आम तौर पर कच्चे आमों का उपयोग अचार, चटनी, चूर्ण, आटा एवं पेय (पन्ना) तैयार करने हेतु किया जाता है। वहीं पके आमों को जहां अधिकतर ताजा खाया जाता है वहीं इन से कई मूल्यवर्धित उत्पाद जैसे जूस, नेक्टर, स्कवैश, जैम आदि बनाए जा सकते हैं। इस लेख में आम से तैयार किए जाने वाले प्रमुख मूल्यवर्धन उत्पादों के बारे में चर्चा की गई है।

अ. कच्चे आम के उत्पाद

कच्चे आमों को विभिन्न प्रकार से उपयोग किया जा सकता है। शुरू में आमों को खट्टी या मीठी चटनी बनाने हेतु प्रयुक्त करते हैं। परंतु जब फल के अंदर गुठली सख्त होना शुरू होती है तो उस अवस्था के आमों से कई प्रकार के उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं जिनका विवरण निम्नलिखित है:

आमचूर

सामग्रीः कच्चे आम एवं 0.2 प्रतिशत पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइट का घोल।

विधिः कच्चे आमों (विशेषतः बीजू पौधों से) की तुड़ाई कर उन्हें धोकर छिलका उतारें। बाद में उन्हें 4-5 मि.मी. मोटे एवं 30-40 मि.मी. लंबे टुकड़ों में काटें। इन टुकड़ों को पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइट के 0.2 प्रतिशत घोल में 10 मिनट तक डुबोकर रखें। तदोपरांत इन टुकड़ों को या तो खुले स्थान पर या सौर-शुष्कारित्र या बिजली के शुष्कारित्र में सुखाएं। निर्जलीकरण के बाद इन टुकड़ों को पीसकर चूर्ण बना लें। इस चूर्ण को पॉलिथीन के पाउच या वायुरहित डिब्बों में पैक कर ठंडे स्थान पर भंडारित करें।

आमचूर

पन्ना

आम के कच्चे फलों को भूनकर अथवा उबालकर उनका गूदा निकाल लेते हैं। फिर इसमें प्रति कि.ग्रा. गूदे के आधार पर 0.8 कि.ग्रा. शक्कर 0.4 लीटर पानी, 80 ग्राम नमक, 20 ग्राम पूदीना, 10 ग्राम पीसा जीरा, 4 ग्राम काली मिर्च और 20 ग्राम साइट्रिक अम्ल मिलाकर गर्म करते हैं। तत्पश्चात् इसको स्क्वैश की भांति बोतलों में भर लेते हैं। अधिक दिनों तक भण्डारण करने के लिए इसमें 500 पी.पी.एम. सोडियम बेन्जोएट भी मिलाना

पन्ना

चाहिए। यदि इस उत्पाद में 6 से 7 गुना ठंडा पानी मिलाया जाए तो पीने के लिए प्रयोग किया जा सकता है।

अचार

कच्चे आमों से विभिन्न प्रकार के आचार जैसे मीठा, खट्टा, हॉट या तेलयुक्त आदि बना सकते हैं। हांलाकि तेलयुक्त अचार ही मुख्यतः तैयार किया जाता है क्योंकि इसी की ही मार्किट में मांग भी रहती है।

आवश्यक सामग्रीः एक किलो ग्राम आम के टुकड़े, 40 ग्राम नमक, 40 ग्राम मेथी, 50 ग्राम अदरक, 20 ग्राम हल्दी, 25 ग्राम लाल मिर्च, 30 ग्राम काली मिर्च, 30 ग्राम सौंफ एवं 300 ग्राम सरसों का तेल आदि।

विधिः पूर्ण परिपक्व आमों को धोकर टुकड़ों में काटें एवं उन्हें नमक के साथ भलि-भांति मिला लें। इन्हें पॉलिथीन के थैलों या कांच के मर्तबान में बंद करके धूप में तब तक रखें जब तक कि टुकड़ों का हरा रंग लुप्त ना हो जाए। पीसे हुए मसालों एवं अदरक के टुकड़ों को मिलाएं। अब तेल तब तक गर्म करें जब तक उससे धुआं आना शुरू ना हो। उसके बाद इसे ठंडा करें। इस तेल में विभिन्न मसालों को डालकर गर्म करें। इस मिश्रण को लगातार हिलाते रहें ताकि वे जल ना पाएं। अब इसमें धूप में तैयार आम के टुकड़ों को ड़ाल कर तब तक उबालें जब तक कि सभी आपस में अच्छी तरह ना मिल जाएं। अब गर्म करना बंद करके इसमें 10 मि.ली. ग्लेशियल एसिटिक अम्ल डालकर कुछ मात्रा में लौंग एवं इलाईची ड़ालें। ठंडा करके किसी अच्छे बर्तन में ड़ालकर पैक करें।

ब. पके आम के उत्पाद

पके आमों का उपयोग विभिन्न उत्पाद जैसे गूदा, नेक्टर, जूस, स्कवैश, स्लाईस, पापड़ एवं चूर्ण आदि मूल्यवर्धित उत्पाद तैयार करने हेतु किया जाता है। कुछ ऐसे उत्पादों को तैयार करने की विधि का विवरण निम्नलिखित हैः

रस (जूस)

आम का रस निकालने हेतु उन सभी किस्मों को प्रयुक्त कर सकते हैं जिन्हें हम ताजे फल के रूप में खाना पसंद करते हैं। इसके लिए सर्वप्रथम उपरोक्त विधि से गूदा निकालते हैं। तदोपरांत 30 प्रतिशत गूदे को 70 प्रतिशत जल में घोलकर, मन अनुसार शर्करा (लगभग 20 प्रतिशत) एवं 0.3 प्रतिशत सिट्रिक अम्ल डालकर आम का रस तैयार कर लेते हैं। एक किलोग्राम गूदे के लिए सामान्यतः 1.85 कि.ग्राम जल, 450 ग्राम शर्करा एवं 8 ग्राम सिट्रिक अम्ल की आवश्यकता होती है। इन सभी घटकों को मिलाकर 95^0 सेल्सियस तापमान पर गर्म करें एवं गर्म-गर्म को ही निर्जर्मीकृत बोतलों में भरकर कॉर्क लगाएं। तदोपरांत इन बोतलों को उबलते पानी में 20-25 मिनट तक गर्म किया जाता है। अब बोतलों को निकाल कर कमरे के सामान्य तापमान पर ठंड़ा कर इन्हें किसी साफ सुथरे, सूखे एवं ठंडे स्थान पर भंडारित करते हैं।

जूस

स्कवैश

आम की स्कवैश तैयार करने हेतु उपरोक्त लिखित विधि की तरह गूदा निकालें। उसके बाद 1.75 कि.ग्राम शर्करा को 1.25 कि.ग्राम पानी में घोलकर उबालें। फलों की मिठास के अनुसार इसमें 25 से 35 ग्राम सिट्रिक अम्ल ड़ालें। इस प्रकार तैयार सीरप को एक कि.ग्राम गूदे में ड़ालकर अच्छी तरह से मिलाएं। यदि गूदा ताजा-ताजा निकाला गया हो तो उसमें कुछ पानी में घुला 2.8 ग्राम पोटेशियम मेटाबाइसल्फाईट ड़ालकर अच्छी तरह से मिलाएं। इस प्रकार तैयार स्कवैश को निर्जमीकृत बोतलों में भर कर ढक्कन/कॉर्क लगा दें। तदोपरांत बोतलों को ठंडे स्थान पर भंडारित करें।

आम पापड़

पापड़, आम का सबसे प्रचलित एवं लोकप्रिय उत्पाद है। भारत में लोग इसे बहुत पसंद करते हैं। आम पापड़ तैयार करने हेतु पूर्णतः पके आमों से गूदा निकालें। गूदे में 2 ग्राम पोटेशियम मेटाबाइसल्फाइट/कि.ग्रा. के हिसाब से मिला कर इसे एल्युमिनियम पत्रकों या ट्रे में बिछाएं एवं इसे सौर-शुष्कारित्र या अवन में सुखाएं। जब गूदे की पहली परत सूखने को हो तो बाद में दूसरी, फिर तीसरी परत बिछा दें। जब यह पूर्णतः सूख जाए तो इसको चाकू से मन चाहे वर्गाकार या आयताकार टुकड़ों में काट कर मक्खनी पेपर या पॉलिथीन से लपेट दें। तदोपरांत इसे साफ सुथेर एवं शुष्क स्थान पर भंडारित करें।

आम पापड़

निर्जलीकृत फांकें

पके आमों को निर्जलीकृत फांकों में भी परिवर्तित किया जा सकता है जिन्हें या तो ऐसे ही खाया जा सकता है या पीस कर आम का चूर्ण बनाया जा सकता है। यह चूर्ण, आम का पेय तैयार करने हेतु अच्छी सामग्री होती है, विशेषकर तब जब मौसम में ताजे आम उपलब्ध ना हो। पके आम का चूर्ण सभी आयु वर्ग के लोगों को पसंद आता है। यह विटामिन 'ए', 'सी' के अतिरिक्त कैल्शियम का अच्छा स्रोत होता है। इसे मैंगो शेक, जूस मिक्स, शर्बत, आईसक्रीम, सुवास, बिस्कुट आदि कई उत्पादों में प्रयुक्त किया जा सकता है। अत्यधिक उत्पादन के समय जब बाजार में आम का मूल्य कम हो जाता है उस समय आमों की स्लाइसें या चूर्ण तैयार करना बहुत ही अच्छा विकल्प माना जाता है। ऐसी फांकें तैयार करने हेतु, पूर्णतः पके आमों का चुनाव कर उन्हें साफ पानी से धोएं। छिलके को उतार कर स्लाइसें तैयार करें। इन स्लाइसों को 70^0 ब्रिक्स के शर्करा के घोल में ड़ालकर 2 मिनट तक 90^0 सेल्सियस तापमान पर गर्म कर बाद में कमरे के सामान्य तापमान तक ठंड़ा करें। अब शर्करा के घोल को निकाल कर, फांकों को या तो सौर शुष्कारित्र या केबिनेट शुष्कारित्र में 58-60° सेल्सियस तापमान पर 14 घंटों तक सुखाएं। तदोपरांत फांकों को पॉलिथीन की थैलियों में पैक कर किसी शुष्क व ठंडे स्थान पर भंडारित करें।

आम की निर्जलीकृत फांके

स. अपषिष्टों का उपयोग

आम की प्रसंस्करण इकाईयों से काफी मात्रा में अपशिष्ट (छिल्का, गुठली आदि) उत्पादित होता है। आम की प्रसंस्करण इकाइयों से प्राप्त उत्पादों (अपशिष्टों) से तैयार किए जाने वाले विभिन्न उत्पादों का विवरण निम्नलिखित है:

खाद्य रेशा

रासायनिक निष्कर्षण द्वारा आम के छिलके से रेशा को प्राप्त करने के लिए उसे क्षार से उपचारित करके क्रमशः हाइड्रोजन-पर-ऑक्साइड व अल्कोहल में उबालते हैं। तत्पश्चात अल्कोहल से धोने के बाद शुद्ध रेशा प्राप्त होता है। शुद्ध अवस्था में यह रेशा भोज्य पदार्थ जैसे बेकिंग उत्पाद, बाल आहार तथा भोजन के साथ लिए जाने वाले पेय का रेशा मूल्य बढ़ाने में प्रयुक्त होता है। आम के छिलके से प्राप्त उच्च गुणवत्ता युक्त पैक्टिन, जैम, जैली, पुडिंग, सलाद, दुग्ध पदार्थों इत्यादि में वांछित गाढ़ापन तथा स्थायित्व लाने के लिए प्रयुक्त होता है। प्रसाधन तथा औषधि निर्माण उद्योग भी इसका उपयोग करते हैं।

एंजाइम

किण्वीकरण विधि की सहायता से आम के छिलके से पैक्टीनेज तथा सैलूलोज एंजाइम प्राप्त किए जा सकते हैं। गिरी से किण्वीकरण द्वारा इमाइलेज एंजाइम का उत्पादन किया जा सकता है। वर्तमान जैव प्रौद्योगिकी के युग में एंजाइम विशेष महत्व रखते हैं। ये जैविक क्रियाओं से उत्पन्न होते हैं तथा जैविक उत्प्रेरक का कार्य करते हैं। पैक्टीनेज तथा सैलूलोज एंजाइम का फल प्रसंस्करण उद्योग में विशेष उपयोग है। भारत में लगभग 42 करोड़ रूपए के एंजाइम का प्रयोग होता है, लेकिन पपेन को छोड़कर अधिकतर एंजाइम विदेशों से आयात किए जाते हैं। इसमें भारी विदेशी मुद्रा खर्च होती है। यदि फल प्रसंस्करण उद्योग द्वारा उत्पन्न अपशिष्ट से एंजाइम उत्पन्न कर लिए जाएं तो उत्पाद की उत्पादन लागत में काफी कमी आएगी क्योंकि अपशिष्ट मामूली कीमत पर उपलब्ध हैं। इस तरह से प्राप्त एंजाइम को फल उत्पादन की लागत में कमी ला सकता है। साथ ही अन्य उद्योगों को एंजाइम बेच कर लाभ कमा सकता है। इस प्रकार प्रदूषण की समस्या में कुछ हद तक कमी लाई जा सकती है।

अम्ल एवं सिरका

आम के छिलके से किण्वीकरण द्वारा सिट्रिक अम्ल तैयार किया जा सकता है, जिसे विभिन्न खाद्य उद्योगों में प्रयोग करते हैं। आम के छिलके से उत्तम गुणवत्ता का सिरका बनाया जा सकता है जो रंग-रूप तथा सुगंध में आम के गूदे से तैयार सिरके के समकक्ष होता है।

छिलके में प्रोटीन की मात्रा बहुत कम होती है। इसे एस्परजिलस नाइजर (फफूंद) अथवा बेकर यीस्ट द्वारा वातापेक्षी ठोस किण्वीकरण विधि से पांच गुणा तक बढ़ाया जा सकता है जिससे आहार अधिक पौष्टिक हो जाता है। आम के छिलके का प्रयोग खुम्बी उत्पादन में भी किया जा सकता है।

तालिका 1 : आम के प्रमुख अपशिष्टों का रासायनिक संघटन

रासायनिक घटक	छिलका	गिरी
नमी	68.5	55.0
अपरिष्कृत प्रोटीन	3.9	2.6
शर्करा	48.1	7.9
अपरिष्कृत रेशा	8.4	0.9
अपरिष्कृत वसा	-	4.2
पैक्टिन	12.8	0.8
स्टार्च	2.9	57.8

तेल

आम की गुठली को तोड़ने से गिरी प्राप्त होती है। आम की गिरी में स्टार्च बहुतायत (58 प्रतिशत) में होता है। इसे रासायनिक निष्कर्षण द्वारा शुद्ध करके आटे के रूप में अथवा औषधि निर्माण में लाया जा सकता है।

आम की गिरी में काफी मात्रा में तेल पाया गया है। यह तेल खाद्य, सुगंध, रबर, प्रसाधन, पेन्ट, कन्फैक्शनरी, आईसक्रीम, कीटनाशक, कपड़ा आदि उद्योगों में प्रयुक्त होता है। आम के तेल को आम की गिरी का वसा या 'मैंगो मक्खन' आदि नामों से जाना जाता है जिसे पके आम से प्राप्त सूखी गुठलियों की गिरियों से 'हाइड्रोलिक प्रेस' या सॉल्वेंट एक्सट्रैक्शन (विलायक निष्कर्षण) द्वारा निकाला जाता है।

सर्वप्रथम इक्ट्ठी की गई आम की गुठलियों को अच्छी तरह से पानी द्वारा धोया जाता है। धुलाई के बाद गुठलियों को सूर्य की रोशनी में 12-15 प्रतिशत नमी तक सुखाया जाता है। सूखी गुठलियों को 'ड्रम रोस्टर' में भून कर गिरी के छिलके को या तो मशीन द्वारा या लकड़ी के डंडों से पीटकर अलग कर दिया जाता है। अब गिरी को हैमर मिल से छोटे-छोटे छुकड़ों में पीस दिया जाता है। इन पीसे हुए टुकड़ों को गोलियां/टिकिया बनाने वाली मशीन में डालकर गोलियां/टिकियां बनाई जाती हैं। इन टिकियों को कूलर द्वारा ठंडा कर विलायक निष्कर्षण यंत्र में पहुंचा दिया जाता है जहां हमें आम की गुठली से तेल प्राप्त होता है।

इस प्रकार प्राप्त तेल के कई लाभ हैं। इसे विशेषकर चॉकलेट बनाने हेतु 'चाको बट्टर' के स्थान पर प्रयुक्त कर सकते हैं। इस तेल के औषधीय गुण भी हैं एवं इसे युनानी एवं आयुर्वेदिक औषधियों में प्रयुक्त किया जाता है। इस वसे को अन्य तेलों से मिलाकर खाद्य तेल के रूप में प्रयुक्त कर सकते हैं। इसे साबुन उद्योग में भी प्रयुक्त किया जा सकता है।

आम की गुठली से प्राप्त तेल

आपका कोई भी काम महत्वहीन हो सकता है पर महत्वपूर्ण यह है कि आप कुछ करें।
- महात्मा गांधी

फलों के प्रमुख रोग एवं उनका निदान

अर्चना उदय सिंह[1] एवं राजेन्द्र शर्मा[2]

[1]सूत्रकृमि विज्ञान संभाग, [2]कृषि ज्ञान प्रबंधन इकाई
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

केला

पनामा उकठा

यह रोग कवक से उत्पन्न होता है। सर्व प्रथम यह कवक पौधों की पतली व कोमल जड़ों में प्रवेश करता है और बाद में पूरे संवहनी तंत्र में फैल जाता है जिससे पौधे में जल व पोषक तत्वों का आवागमन रूक जाता है और अंत में पौधे सूखने लगते हैं। पौधे की निचली पत्तिया लटक कर मुरझा जाती हैं। केवल बीच की पत्ती सीधी रहती है। बाद में प्रभावित पौधे समूचा सूख जाते हैं।

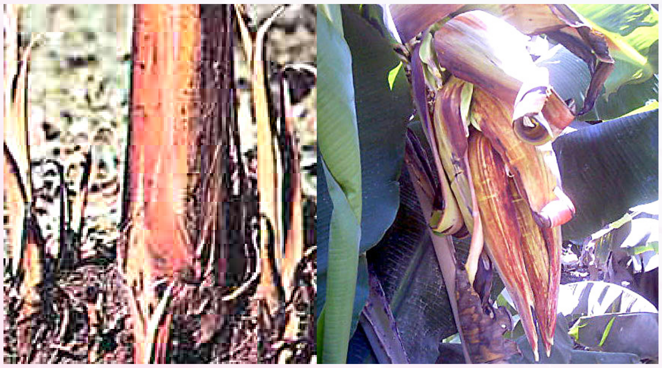

प्रबंधन

- स्वस्थ पौधों की रोपाई करनी चाहिए।
- प्रभावित पौधों को उखाड़कर जला देना चाहिए।
- जल निकासी का उचित प्रबंध करना चाहिए।
- रोगरोधी किस्में उगानी चाहिए।
- प्रभावित भूमि को परती छोड़कर 6 महीने तक पानी भरना चाहिए। केला धान का फसल चक्र अपना कर यह क्रिया की जा सकती है।
- कंदों को बाविस्टीन 2 प्रतिशत के घोल का 3 मिली/कंद की दर से सूई लगाने से भी अच्छे परिणाम प्राप्त होते हैं।

2. शीर्ष गुच्छा रोग (बन्ची टाप)

यह विषाणु जनित रोग है। इस रोग से प्रभावित पौधों की पत्तियां छोटी होकर गुच्छों का रूप धारण कर लेती हैं। पत्तियों के शीर्ष व किनारे अंदर की ओर मुड़ जाते हैं और पत्तियां मोटी हो जाती हैं। पत्तियों के निचले भाग में मध्य शिरा के साथ गहरी हरी पट्टियां बन जाती हैं। यह रोग माहू कीट से फैलता है।

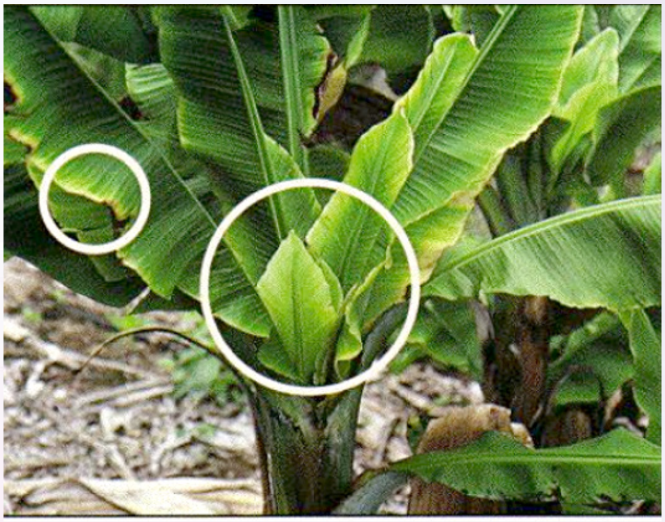

प्रबंधन

1. स्वस्थ पौधों के कंदों का चुनाव करना चाहिए।
2. बाग को स्वच्छ रखना चाहिए।
3. माहू कीट की रोकथाम किसी कीटनाशक- क्यूनालफॉस दवा द्वारा करें।
4. कद्दू वर्गीय सब्जियों को अंतर फसल के रूप में प्रयोग नहीं करना चाहिए।

5. प्रभावित पौधो को नष्ट कर देना चाहिए।

3. पर्ण लाछन

इस रोग में पत्तियों पर भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं जिससे पत्तियां सूखने लगती हैं। यह एक कवक जनित रोग है।

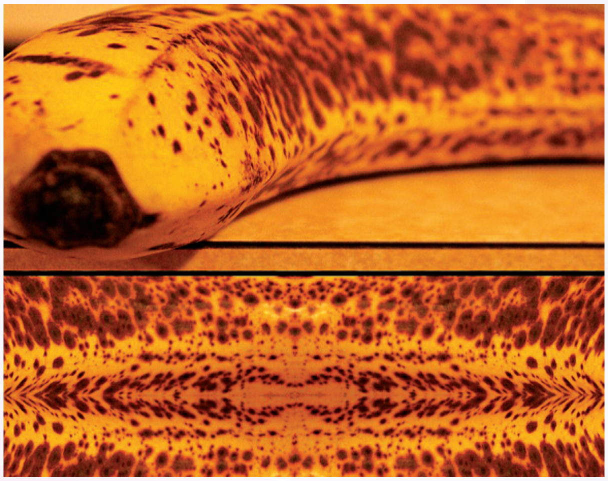

प्रबंधन : इसकी रोकथाम के लिए कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 3 ग्राम मात्रा/लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

4. तना गलन (टापलिंग) रोग

केले का टापलिंग रोग, रेडोफोलस सिमिलिस नामक सूत्रकृमि द्वारा पैदा होता है। आम भाषा में इस रोग के जनक सूत्रकृमि को वरोइंग सूत्रकृमि कहते हैं। जो कि जड़ों में प्रवेश कर नलिकाएं बनाता है तथा पौधों द्वारा भूमि से लिए जाने वाले आश्यक तत्वों व नमी के अवशोषण को बाधित कर देता है। सूत्रकृमियों की संख्या अधिक होने से केले के पौध जमीन पर गिरना प्रारंभ हो जाते हैं।

रोग के लक्षण

- फसल पीली व कमजोर दिखाई देने लगती हैं।
- प्रति एकड़ पौधों की संख्या कम दिखाई देने लगती है।
- पौधे बौने रह जाते हैं तथा फल कम संख्या में व छोटे बनते हैं व पौधे गिरने लगते हैं।
- गिरे हुए पौधों की जड़ों का परीक्षण करने से पता चलता है कि जडों पर भूरे व काले रंग के धब्बे लंबाई में बने हुए हैं, जिन्हें 'लीजन' कहते हैं।
- जड़ें जमीन में सड़ने लगती हैं।
- ब्लेक हेड, केले का गलन, कंद का गलन व केले का जड़ गलन आदि नामों से इस रोग को जाना जाता है।

रोग का फैलाव : पूरे विश्व में अभी तक इस सूत्रकृमि की 11 जातियां खोजी जा चुकी हैं। जिनमें से 9 जातियां केवल आस्ट्रेलिया में पाई जाती हैं। भारत में सिर्फ रेडोफोलस सिमिलिस नाम की जाति ही पाई जाती है, जो कि सर्व प्रथम केरल में पाई गई थी। लेकिन अब यह सूत्रकृमि केरल के साथ-साथ तलिनाडु, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, गोवा, महाराष्ट्र, गुजरात तथा मध्य प्रदेश में भी पाई जाती है।

रोग की रोकथाम :

- क्योंकि यह सूत्रकृमि जड़ के अंदर रहता है। इसलिए सूत्रकृमि से प्रभावित फसल की जड़ों को केले के नए पौधे बनाने के लिए किसी भी दशा में प्रयोग नहीं करना चाहिए।
- केले के कंदों को नए पौधे बनाने के लिए प्रयोग में लाना है। बोरडेक्स मिश्रण का पेस्ट बनाकर कटे हुए कंदों पर लगाना चाहिए।

- कंदों को गर्म पानी से उपचारित करना चाहिए। इसके लिए 53-55 डिग्री सेल्सियस तक पानी को गर्म करें तथा कंदों को 20-25 मिनट तक गर्म पानी में डालें रखें तत्पश्चात निकाल लें।
- केले के कंदों को बोने से पहले चिकनी मिट्टी का घोल बनाएं। सभी कंदों को उसमें डालकर निकाल लें तथा उन पर कार्बोफ्यूरान दवा 1.2 ग्राम/कंद की दर से छिडक दें।

अमरूद

1. उकठा रोग

यह रोग कवक द्वारा होता है जिसके लक्षण बरसात के समय दिखाई पड़ते हैं। इस रोग के कारण पेड़ों की पत्तियां भूरे रग की हो जाती हैं और पेड़ मुरझा जाता है। छिलके की सतह बदरंग हो जाती है। प्रभावित पेड़ की डालियां बारी-बारी करके सूखने लगती हैं। इन डालियों को काटने पर अंदर की कोशिकाएं बदरंग दिखाई पड़ती हैं। यह रोग उन क्षेत्रों में अधिक होता है जहां की मृदा का पी एच मान 7.5 से अधिक होता है तथा भूमि में नमी होने पर यह रोग अधिक फैलता है।

प्रबंधन

- रोगी पौधों को उखाड़कर जला देना चाहिए।
- रोगी पेड़ों को निकालने के बाद गड्ढे की मिट्टी को 3 ग्राम थीरम या एक ग्राम बेनलेट कवकनाशी दवा एक लीटर पानी में घोलकर (लगभग 20 लीटर/गड्ढा) से उपचारित करना चाहिए।
- भूमि में चूना, जिप्सम अथवा कार्बनिक खाद मिलाने से रोग का प्रकोप कम हो जाता है।
- अमरूद की खेती 15-20 वर्ष तक की जानी चाहिए। जिस स्थान पर उकठा रोग का संक्रमण हो गया हो वहां पुनः अमरूद के बाग 5 से 8 वर्षों तक न रोपे।

2. तना कैंकर

यह रोग भी एक कवक के द्वारा उत्पन्न होता है। इसके लक्षण सर्वप्रथम डालियों पर लम्बी दरारों के रूप में दिखाई पड़ते है। बाद में डालियों की छाल फट जाती है और रोग धीरे धीरे जड़ की तरफ बढ़ने लगता है। प्रभावित छाल गहरे भूरे रंग की हो जाती है। खुरचने पर भूरे या काले रंग की धारियां छाल के नीचे तक पाई जाती हैं। छाल के फट जाने से पोषक तत्वों का आवागमन रूक जाता है व अंत में वृक्ष सूखने लगता है।

प्रबंधन

- रोग ग्रसित डालियों को काटकर जला देना चाहिए तथा कटे भाग पर कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के घोल अथवा गाय के गोबर का लेप करना चाहिए।
- छटाई के बाद 2-3 ग्राम ब्लाइटाक्स-50 को एक लीटर पानी मे घोलकर 10-15 दिनों के अंतर पर 2-3 छिड़काव करना चाहिए।
- वर्षा ऋतु में प्रभावित पेड़ों को कार्बेन्डाजिम 20 ग्राम को 50 लीटर पानी में घोलकर दो बार सिंचाई करनी चाहिए।

आम

1. चूर्णिल आसिता रोग (पाउडरी मिल्ड्यू)

चूर्णिल आसिता रोग को 'खर्रा रोग' भी कहा जाता है जो एक फंफूदी जनित रोग है। उष्ण नम वातावरण और ठंडी रातों में इस रोग की उग्रता बढ़ जाती है। यह रोग देश के सभी भागों में आम की फसल को प्रभावित करता है। शुरूआत में यह रोग नई पत्तियों, फूल की कलियों,

छोटे फलों तथा बौर के डंठलो पर धूसर या सफेद चूर्ण के रूप में दिखाई पड़ता है। संक्रमण अधिक होने पर पूरा बौर झुलस सकता है। लक्षण दिखाई देने के कुछ ही दिनों के अंदर सारे बौर प्रभावित हो जाते हैं। पुष्प एवं पत्तियां गिर जाती हैं तथा प्रभावित भागों की वृद्धि रूक जाती है। यदि संक्रमण के पूर्व फल लग गए हों तो वे अपरिपक्व अवस्था में ही गिर जाते हैं।

प्रबंधन

रोग का प्रकोप पुष्प वृंत पर होता है अतः इस रोग से बचाव के लिए फूल आने पर तीन छिड़काव करने चाहिए। प्रथम छिड़काव 0.2 प्रतिशत घुलनशील गन्धक की 2 ग्राम / लीटर पानी में घोलकर व द्वितीय छिड़काव 1 मि.ली. ट्राइडीमार्फ / लीटर पानी में मिलाकर करना चाहिए। पहला छिड़काव बौर निकलते समय तथा दूसरा व तीसरा छिड़काव 10-15 दिनों के अंतर पर करना चाहिए।

2. गुम्मा या गुच्छा रोग

इस रोग से प्रभावित पौधे के शीर्ष भाग पर गुच्छेदार पत्तियां बन जाती हैं व प्रभावित पुष्प मंजरिया भी गुच्छेनुमा हो जाते हैं। ग्रसित पुष्प स्वस्थ मंजरियों की अपेक्षा अधिक मोटे दिखाई देते हैं तथा नर पुष्पों की अधिकता होती है।

प्रबंधन

1. गुम्मानुमा बने पुष्प वृंतों को काटकर जला देना चाहिए तथा कटे भाग पर गाय के गोबर का लेप कर देना चाहिए।

2. अक्टूबर माह में नेपथलीन एसिटिक एसिड एक मि.ली. को 5 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

पपीता

1. पौध गलन रोग

यह रोग भी कवक द्वारा होता है। यह रोग इन स्थानों पर अधिक पाया जाता है जहां नमी की मात्रा या पाला अधिक पड़ता है। इस रोग से ग्रसित पौधे नर्सरी में पीले होकर मर जाते है।

प्रबंधन

1. नर्सरी डालने से पूर्व बीजों को सेरेसान 2 ग्राम/ किलोग्राम की दर से उपचारित कर बोएं।
2. जल निकास की उचित व्यवस्था करें।

3. कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 2 ग्राम/लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

2. विषाणु रोग

पपीते में कई प्रकार के विषाणु रोग लगते हैं जिसमें पौधों की पत्तियों पर पीले धब्बे बनते हैं तथा पत्तियां सिकुड़ जाती हैं। पौधों की वृद्धि रूक जाती है अर्थात बौने रह जाते हैं। फूल व फल गिरने लगते हैं। ये रोग सफेद मक्खी या माहू द्वारा फैलते हैं।

प्रबंधन

- रोग ग्रसित पौधां को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए।
- रोगार 2 मिली / लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

अनुराग, यौवन, रूप या धन से उत्पन्न नहीं होता। अनुराग, अनुराग से उत्पन्न होता है।
- प्रेमचंद

अक्टूबर से मार्च माह के मध्य किए जाने वाले प्रमुख कृषि कार्यों का विवरण

डा. दिनेश कुमार

सस्य विज्ञान संभाग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

एक अंग्रेजी भाषा की एकलोकोक्ति है "ए स्टिच इन टाइम सेवस नाइन", जिसका मौटे तौर पर अर्थ है "सही समय पर लगाया एक टांका असमय लगाए नौ टांको से अच्छा होता है"। दूसरे शब्दों में यदि किसी कार्य को सही समय पर निष्पादित किया जाता है तो उसमें लागत भी कम आती है और लाभ भी अधिक होता है। साथ ही यदि इस कार्य को देर से किया जाता है तो लागत भी अधिक आती है और लाभ में भी कमी आती है। खेती-बाड़ी के कार्यों के लिए तो यह कहावत बिलकुल सटीक बैठती है। मान लीजिए किसी फसल की बुवाई का उचित समय 15 - 25 अक्टूबर है परंतु यह कार्य नवंबर में किया जाता है तो निश्चित तौर पर इस फसल की उपज एवं लाभ में कमी आएगी। समय के अतिरिक्त किसान भाइयों को क्षेत्र, मृदा, जलवायु एवं संसाधनों की उपलब्धता के अनुसार ही विभिन्न सस्य, फल, सब्जी और अन्य फसलों की संस्तुत एवं उन्नत किस्मों का ही चुनाव करना चाहिए। साथ ही बीज भी गुणवत्ता युक्त, उपचारित एवं शुद्ध होना चाहिए। फसलों में जल, पोषक तत्व, खरपतवार, कीट एवं रोग प्रबंधन वैज्ञानिक विधियों से सही समय पर निष्पादित करना चाहिए। अतः प्रस्तुत लेख में अक्टूबर से मार्च माह के मध्य किए जाने वाले महत्वपूर्ण कृषि कार्यों पर चर्चा की जा रही है।

अक्टूबर माह के मुख्य कृषि कार्य

कृषि-कार्यों के दृष्टिकोण से अक्टूबर माह विशेष स्थान रखता है। इस माह खरीफ की अधिकतर फसलों की कटाई एवं मड़ाई का कार्य संपन्न किया जाता है। साथ ही बारानी एवं अन्य क्षेत्रों में रबी फसलों की बुवाई आरंभ हो जाती है। इस माह बारानी व अन्य क्षेत्रों में चना, मटर, मसूर, राई व सरसों, गेहूं एवं रबी मक्का, आदि की बुवाई की जाती है। अधिक लाभ के लिए शरदकालीन गन्ने की बुवाई भी इस माह में की जाती है।

धान की कटाई एवं मड़ाई

देश के अधिकतर हिस्सों में खरीफ धान की कटाई इसी माह में की जाती है। कटाई से 10-15 दिन पूर्व खेत में पानी लगाना बंद कर देना चाहिए। साथ ही यदि जमीन गहरी हो और उसमें पानी खड़ा हो तो उसके जल का निकास कर देना चाहिए। पकने की स्थिति में धान के 80-90 प्रतिशत दानों का रंग पीला-सुनहरा हो जाता है। यदि दांतो से ऐसे दानों को चबाया जाए तो कट-कट की आवाज आती है। इस दशा में दानों के अंदर लगभग 20-22 प्रतिशत नमी होती है। धान की कटाई हंसिया, रीपर अथवा कंबाइन मशीन से की जाती है।

तिलहनी फसलों की बुवाई

रबी की प्रमुख तिलहनी फसलें हैं- राई एवं सरसों, अलसी और कुसुम आदि। राई और सरसों की बुवाई अक्टूबर के तीसरे सप्ताह तक समाप्त कर लेनी चाहिए। सिंचित दशा में 60-80 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40-50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 30-40 कि.ग्रा. पोटाश एवं 20-30 कि.ग्रा. गंधक / हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। बारानी अथवा असिंचित दशा में 30-40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 20-25 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 15-20 कि.ग्रा. पोटाश / हेक्टेयर की संस्तुति की जाती है। अलसी की बुवाई अक्टूबर के दूसरे पखवाड़े से नवंबर के दूसरे के बीच की जाती है। एक हेक्टेयर में बुवाई के लिए 25-30 कि.ग्रा. बीज पर्याप्त होता है।

दलहनी फसलों की बुवाई

चना, मटर एवं मसूर रबी की प्रमुख दलहनी फसलों में सम्मिलित हैं। बारानी क्षेत्रों में चने की फसल का

विशेष महत्व होता है। चना, मटर और मसूर की बुवाई अक्टूबर के प्रथम पखवाड़े से नवंबर के प्रथम पखवाड़े के मध्य तक समाप्त कर लेनी चाहिए। साथ ही उन्नतशील किस्मों का चुनाव भी करें और बीज को राइज़ोबियम एवं पी.एस.बी. के टीकों से अवश्य उपचारित करें। तीनों फसलों में लगभग 15-20 कि.ग्रा./हे. नाइट्रोजन, 40-50 कि.ग्रा./है. फॉस्फोरस एवं 20-30 कि.ग्रा./हे. पोटाश की आवश्यकता होती है।

रबी मक्का की बुवाई

रबी मक्का की खेती उत्तर-पूर्वी मैदानी क्षेत्रों में की जाती है। देश के कई क्षेत्रों में इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। रबी मक्का की बुवाई का उपयुक्त समय 15 अक्टूबर से 15 नवंबर के मध्य है। कम समय में तैयार होने वाली दालें अथवा सब्जियां जैसे मटर, सब्जी राजमा, बाक़ला, टमाटर, गाजर, चुकंदर, तथा प्याज, आदि को मक्का की कतारों के बीच बोकर अंतः फसल के रूप में उगाया जा सकता है। दोमट मिट्टी रबी मक्का के लिए अधिक उपयुक्त होती है। रबी मक्का हेतु 20-22 कि.ग्रा. बीज/हेक्टेयर प्रयोग करें। बुवाई के पूर्व बीज शोधन अवश्य कर लें।

शरदकालीन गन्ने की बुवाई

यह मौसम शरदकालीन गन्ने की बुवाई के लिए अनुकूल है। इसकी बुवाई अक्टूबर में अच्छी रहती है, परंतु पंद्रह नवंबर तक बुवाई अवश्य कर लेनी चाहिए। विलंब से बुवाई करने पर फसल का ठीक से जमाव नहीं होगा। जिन कृषकों के खेत खाली हों तथा उनमें पर्याप्त नमी हो तो खेत को यथाशीघ्र तैयार कर शरदकालीन गन्ने की बुवाई करें। गन्ना ट्रेंच विधि से उगाना अधिक उपयुक्त पाया गया है। ट्रेंच विधि से बुवाई के लिए तीन फिट (90 सें.मी.) की दूरी पर एक फिट (30 सें.मी.) चौड़ी व गहरी नाली बनाई जाती है।

चारा फसलों की बुवाई

रबी की मुख्य चारा फसलों में बरसीम, रिजका (लुसर्न) और जई आदि शामिल हैं। उपर्युक्त फसलों की बुवाई इस माह अवश्य कर लें।

सब्जियां

- कद्दूवर्गीय सब्जियों में फल मक्खी की निगरानी करते रहें, इसके लिए मिथाइल यूजीनोल ट्रेप का प्रयोग कर सकते हैं। फल मक्खी के बचाव हेतु खेत में विभिन्न जगहों पर गुड़ या चीनी के साथ मैलाथियान (0.1%) का घोल बनाकर छोटे कप या किसी और बरतन में रख दें ताकि फल मक्खी का नियंत्रण हो सके।
- मिर्च तथा टमाटर के खेतों में विषाणु रोग से ग्रसित पौधों को उखाड़कर जमीन में गाड़ दें। यदि प्रकोप अधिक है तो इमिडाक्लोप्रिड @ 0.3 मि.ली./लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।
- इस समय सरसों साग (पूसा साग-1), मूली (जापानी व्हाईट,हिल क्वीन, पूसा मृदुला),पालक (आल ग्रीन, पूसा भारती), शलगम (पूसा स्वेती या स्थानीय लाल), बथुआ (पूसा बथुआ-1), मेथी (पूसा कसुरी), गांठ गोभी (व्हाईट वियना, पर्पल वियना) तथा धनिया (पंत हरितमा), आदि किस्मों की बुवाई मेंड़ों पर करें।
- गाजर की बुवाई मेंड़ों पर करें। उन्नत किस्में हैं - पूसा रूधिरा और पूसा केसर। गाजर की बीज दर 4.0 कि.ग्रा./एकड़ है। बुवाई से पूर्व बीज को केप्टान @ 2 ग्रा./कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें तथा खेत में देसी खाद, पोटाश और फॉस्फोरस उर्वरक अवश्य डालें। गाजर की बुवाई मशीन द्वारा करने से बीज 1.0 कि.ग्रा./एकड़ की आवश्यकता होती है।
- आलू की बुवाई के लिए यह समय अनुकूल है। अतः आवश्यकतानुसार आलू की किस्मों की बुवाई कर सकते हैं। उन्नत किस्में - कुफरी बादशाह, कुफरी ज्योति (कम अवधि वाली किस्म), कुफरी अलंकार, कुफरी चंद्रमुखी। कतारों से कतारों तथा पौध से पौध से दूरी 45 से.मी.x 20 से.मी. या 60 से.मी.15 से.मी. रखें। बुवाई से पूर्व बीजों को मेन्कोजेब @ 2.0 ग्रा. तथा कार्बेण्डाजिम @ 1.0 ग्रा. /लीटर घोल में /कि.ग्रा. बीज पांच मिनट भिगोकर रखें। उसके उपरांत

बुवाई से पूर्व किसी छायादार जगह पर सूखने के लिए रखें।

- भिंड़ी, मिर्च तथा बेलवाली फसलों में माईट, जैसिड़ और होपर की निरंतर निगरानी करते रहें। अधिक माईट पाए जाने पर इथियान @ 1.5-2.0 मि.ली./ लीटर पानी तथा जैसिड़ और होपर कीट की रोकथाम के लिए डाईमेथोयट कीटनाशक 2 मि.ली./ लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।
- इस समय लहसुन की बुवाई की जा सकती है।
- कद्दूवर्गीय फसलों (लौकी, कद्दू, तुरई, टिंडा, आदि) के तैयार फलों की तुड़ाई करके बाज़ार भेजें।
- वर्तमान मौसम हरी प्याज की बुवाई के लिए अनुकूल है। इसकी बीज दर- 10 कि.ग्रा./हेक्टेयर है। बुवाई से पहले बीजों को केप्टान @ 2.5 ग्रा./ कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित अवश्य करें।

उद्यान

- पपीते के पौधों के आस-पास यदि जलभराव हो तो जल का तुरंत निकास करें।
- नींबू के पौधों की अधिक बढ़ी हुई और रोग-ग्रस्त शाखाओं की कटाई-छंटाई कर देनी चाहिए।
- आम के थालों की निराई-गुड़ाई अवश्य कर देनी चाहिए।
- ग्लेडिओलस की बुवाई भी इस समय कर सकते हैं।
- किसान भाई गुलाब के पौधों की कटाई-छंटाई करें। कटाई के बाद बाविस्टीन का लेप आसमान साफ होने पर लगाएं ताकि कवकों का आक्रमण न हों।
- बेर के पौधों में आवश्यकतानुसार नाइट्रोजन की मात्रा का प्रयोग करें।
- गुलदाउदी पर समय से पहले आई पुष्प-कलिकाओं को तोड़ देना चाहिए ताकि बाद में आने वाले पुष्प बड़े आकार के बन सकें। डहलिया को गमलों अथवा क्यारियों में लगाने का यह उपयुक्त समय है।
- गेंदे की तैयार पौध की मेंड़ों पर रोपाई करें।

नवंबर माह के मुख्य कृषि कार्य

यह महीना रबी फसलों की बुवाई के लिए अत्यंत ही महत्वपूर्ण होता है और किसान भाई इस कार्य में व्यस्त रहते हैं। यदि रबी में उगाई जाने वाली तिलहनी अथवा दलहनी फसलों की बुवाई किसी कारणवश अभी तक न हो पाई हो तो इस माह के पहले सप्ताह में इस कार्य को अवश्य समाप्त कर लें। चारा फसलों की बुवाई भी यदि न हो पाई हो तो इस माह के दूसरे सप्ताह के अंत तक अवश्य संपन्न कर लें। इस माह में एक सबसे महत्वपूर्ण कार्य है गेहूं और जौ की बुवाई।

गेहूं की बुवाई

गेहूं की उन्नत प्रजातियों को उगाकर अच्छी पैदावार ली जा सकती है। अतः अपने क्षेत्र विशेष के अनुसार प्रजातियों का चुनाव करें। उत्तर पश्चिमी क्षेत्रों में सिंचित गेहूं की बुवाई का उत्तम समय नवंबर का पहला पखवाड़ा है जबकि उत्तर पूर्वी क्षेत्रों एवं मध्य भारत में सिंचित गेहूं की बुवाई का सही समय मध्य नवंबर है। सिंचित दशा में देर से बुवाई दिसंबर के प्रथम पखवाड़े में समाप्त कर लेनी चाहिए। सिंचित दशाओं में समय से बुवाई के लिए बीजदर 100 कि.ग्रा./हेक्टेयर है। देर से बुवाई करने पर गेहूं की उचित बीजदर 125 कि.ग्रा./हेक्टेयर है। बीज साफ, स्वस्थ एवं खरपतवारों के बीजों से रहित हो।

जौ की बुवाई

यह फसल कम उपजाऊ भूमि और पानी की कम उपलब्धता वाली परिस्थितियों में आसानी से की जा सकती है। साथ ही लवणीय भूमियों में भी जौ को उगाया जा सकता है। सिंचित भूमि में समय पर बुवाई के लिए 75-80 कि.ग्रा., पछेती बुवाई, बारानी दशा अथवा लवणीय/ क्षारीय भूमियों में 100 कि.ग्रा./हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है।

अनाज का भंडारण

इस माह खरीफ फसलों से उत्पादित खाद्यान पदार्थों का उपयुक्त भंडारण एक अति महत्वपूर्ण कार्य है। इस दौरान खाद्यान पदार्थों को चूहों, कीड़ों और अधिक नमी से काफी हानि हो सकती है। अनाज को अच्छी तरह

सुखाकर (दानों में 10 प्रतिशत से कम नमी पर) ही भंडारित करें। भंडारण से पूर्व बोरियों, पात्रों, गोदाम और कोठी आदि को भली भांति साफ कर लेना चाहिए। भंडारण के लिए प्रयुक्त स्थान अथवा संरचना को नमी-रोधक कर लेना चाहिए।

दलहनी, तिलहनी एवं चारा फसलें

यदि रबी मौसम की उपर्युक्त फसलों की बुवाई अभी तक नहीं हो सकी हो तो इस माह के प्रथम पखवाड़े में अवश्य समाप्त कर लें। उपर्युक्त फसलों की प्रारम्भिक अवस्था में उचित नमी बनाए रखना आवश्यक होता है। साथ ही समय-समय पर उपयुक्त विधियों के द्वारा खरपतवार उन्मूलन भी करते रहें। बरसीम की फसल यदि कटाई योग्य हो तो उसकी पहली कटाई इस माह के अंत तक अवश्य कर लें। तोरी की फसल से अच्छी उपज लेने के लिए दो सिंचाई- पहली फूल आने के पूर्व एवं दूसरी फल बनने की अवस्था पर करें।

आलू की देखभाल

आलू की फसल की अच्छी बढ़वार एवं कंदों के उपयुक्त विकास के लिए पर्याप्त हवा, नमी और उपयुक्त तापमान का मिलना आवश्यक है। समय से बोई गई फसल में मिट्टी चढ़ाने का कार्य इस माह कर लेना चाहिए। यदि पौधों की ऊंचाई 15-22 सें.मी. हो जाए तो इसको फसल में मिट्टी चढ़ाने की उपयुक्त अवस्था मान लेनी चाहिए।

राजमा की बुवाई

उत्तरी मैदानी क्षेत्रों में इसकी बुवाई नवंबर माह में कर लेनी चाहिए। उदय, अंबर, उत्कर्ष एवं अरुण राजमा की उन्नतशील किस्में हैं। उपचारित बीज (2-3 ग्रा./कि.ग्रा. बीज) की बुवाई @ 80-100 कि.ग्रा./हेक्टेयर की दर से पंक्तियों में करनी चाहिए। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45 सें.मी. एवं पौधे से पौधे की दूरी 10-12 सें.मी. उपयुक्त रहती है। इस फसल में नाइट्रोजन का यौगिकीकरण नहीं होता है जिसके लिए 100-120 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 20 कि.ग्रा. पोटाश/हेक्टेयर की संस्तुति की गई है।

गन्ने की कटाई

गन्ने की कटाई का कार्य, विशेषकर उत्तरी भारत में, इस माह आरंभ हो जाता है। मुख्य फसल की तुलना में पेड़ी (पहली फसल कटाई के बाद उसी फसल से उत्पादित दूसरे अथवा तीसरे साल की फसल) जल्दी पकती है। अतः पहले पेड़ी की कटाई करना अच्छा होगा ताकि खाली हुए खेत में रबी की फसलों जैसे गेहूं की बुवाई शीघ्राति शीघ्र हो सके। जिन खेतों में आगामी वर्ष में पेड़ी रखनी है उनमें गन्ने की कटाई फरवरी माह से पहले न करें क्योंकि जाड़ों में काटी गई फसल में कम फुटाव होता है।

सब्जियां

- यह समय ब्रोकली, पछेती फूलगोभी, बंदगोभी तथा टमाटर की पौधशाला तैयार करने के लिए उपयुक्त है। पौधशाला भूमि से उठी हुई क्यारियों पर ही बनाएं। जिन किसान भाइयों की पौधशाला तैयार है, वह मौसस को ध्यान में रखते हुए पौध की रोपाई ऊंची मेंड़ों पर करें।
- इस माह भी सरसों साग (पूसा साग-1), मूली (जापानी व्हाईट, हिल क्वीन, पूसा मृदुला),पालक (आल ग्रीन, पूसा भारती), शलगम (पूसा स्वेती या स्थानीय लाल), बथुआ (पूसा बथुआ-1), मेथी (पूसा कसूरी), गांठ गोभी (व्हाईट वियना, पर्पल वियना) तथा धनिया (पंत हरितमा), आदि किस्मों की बुवाई मेंड़ों पर की जा सकती है।
- गाजर की बुवाई इस माह भी की जा सकती है। बुवाई मेंड़ों पर करना अच्छा रहता है। गाजर की उन्नत किस्में हैं - पूसा रूधिरा और पूसा केसर। गाजर की बीज दर 4.0 कि.ग्रा./एकड़ है। बुवाई से पूर्व बीज को केप्टान @ 2 ग्रा./कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें ।
- सब्जियों की रोपाई से पहले खेत में गोबर की सड़ी खाद का उपयोग करें, क्योंकि यह मृदा के भौतिक तथा जैविक गुणों को सुधारती है तथा मृदा की जलधारण क्षमता भी बढ़ाती है।
- लहसुन की बुवाई का कार्य अविलंब संपन्न करें।
- फूलगोभी एवं बंदगोभी की तैयार फसल की कटाई

करके बाज़ार में बिक्री हेतु भेजें।

- मेथी और पालक की फसल में आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें।
- इस माह जीरे और सौंफ की बुवाई की जा सकती है।
- अगेती मटर की फलियां यदि तैयार हो गई हो तो उनकी तुड़ाई करके बाज़ार में बिक्री हेतु भेजें।
- शिमला मिर्च और धनिये की बुवाई इस माह भी की जा सकती है।
- गाजर की यूरोपियन किस्मों जैसे नेंटीस, पूसा यमदागिनी, मूली की यूरोपियन किस्मों जैसे हिल क्वीन, जापानीज व्हाईट, पूसा हिमानी, चुंकदर की किस्म क्रिमसन ग्लोब तथा शलगम की पी टी डब्ल्यू जी आदि की बुवाई इस समय कर सकते हैं।

उद्यान

- अंगूर की बेलों में इस समय सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है क्योंकि इस समय ये सुषुप्तावस्था में होती हैं।
- मौसमी, माल्टा, नींबू और किन्नों आदि फल इस माह पकना आरंभ कर देंगे। उपर्युक्त फलों को सही अवस्था पर तोड़कर बाज़ार में बिक्री हेतु भेजें।
- एक, दो एवं तीन वर्ष वाले बेर के पौधों में क्रमशः 250, 500 एवं 1000 ग्रा. यूरिया देकर गुड़ाई करें।
- आम में मिली बग (एक प्रकार का कीड़ा) के अंडों को नष्ट करने के लिए तने के आसपास वाली भूमि में निराई-गुड़ाई करें।
- छोटे फलदार वृक्षों जैसे अमरूद, आम, लीची, पपीता और नींबूवर्गीय पौधों आदि को पाले/ जाड़े से बचाने का प्रबंध अभी से आरंभ कर दें।
- आम या अन्य फलों के बागों में खाद व उर्वरकों का प्रयोग करने का यह सही समय है।
- नींबूवर्गीय सभी फलवृक्षों में गोबर की खाद उम्र के आधार पर 20-60 कि.ग्रा/पौधा मिट्टी में डालकर मिश्रित करें।
- गेंदे के तैयार फूलों को तोड़कर बिक्री हेतु बाज़ार भेजें।
- पछेती गेंदे की तैयार पौध की रोपाई अतिशीघ्र संपन्न करें।
- गेंदे की फसल में पुष्प सड़न रोग के आक्रमण की निगरानी करते रहें। यदि इसका प्रभाव दिखाई दे तो तुरंत उसका नियंत्रण करें।

दिसंबर माह के मुख्य कृषि कार्य

दिसंबर माह में आमतौर पर ठंड का अधिक प्रकोप होता है। उत्तरी भारत के अधिकतर राज्यों में इस माह तुषार और पाला आने की संभावना लगातार बनी रहती है। आलू, मटर और सरसों की फसलों पर पाले द्वारा क्षति हो सकती है। अतः इस प्रकार की सहिष्णु फसलों को पाले से बचाना परम आवश्यक होता है।

गेहूं की देखभाल एवं पछेती बुवाई

समय पर बोए गेहूं में अब पहली सिंचाई का उपयुक्त समय आ चुका है। गेहूं फसल में पहली क्रांतिक अवस्था बुवाई के 21-23 दिन बाद आ जाती है। गेहूं की फसल में खरपतवारों का नियंत्रण निकाई अथवा शाकनाशियों से भी किया जा सकता है। उत्तरी भारत में गेहूं की बुवाई यदि 25 नवंबर के बाद की जाती है तो उसे समान्यतः पछेती बुवाई माना जाता है। अतः गेहूं की बुवाई दिसंबर के दूसरे पखवाड़े में अवश्य समाप्त कर लेनी चाहिए।

पाले से फसलों का बचाव

इस माह वातावरण का तापमान काफी कम हो जाता है। अत: सभी प्रकार की फसलों को पाले के कुप्रभावों से बचाना चाहिए। आलू, सरसों, मटर, चना और मसूर आदि फसलों पर पाले का कुप्रभाव अधिक होता है। जिस दिन पाला गिरने की आशंका हो उस दिन खेतों के आसपास धुआं कर देना चाहिए। साथ ही फसलों में हल्की सिंचाई करके इन्हें पाले के कुप्रभाव से बचाया जा सकता है। फलों के पौधों को घास-फूंस अथवा पोलीथीन से ढककर पाले से बचाया जा सकता है। पाला पड़ने की संभावना

होने पर फसल में 0.1% गंधक के तेज़ाब (सल्फ्यूरिक अम्ल) का छिड़काव लाभप्रद पाया गया है।

आलू की देखभाल

इसमें पहली सिंचाई बुवाई के 30-35 दिन बाद कर देनी चाहिए। हल्की मृदा की तुलना में भारी मृदा में सिंचाईजल की कम आवश्यकता होती है। सिंचाई के 3-4 दिन बाद फसल पर मिट्टी चढ़ाएं। मिट्टी चढ़ाते समय खरपतवारों की निकाई भी कर लें। नाइट्रोजन की आवश्यक मात्रा का प्रयोग भी इस समय कर देना चाहिए। आलू में पछेती झुलसा (अंगमारी) रोग से हानि की संभावना भी इस माह बनी रहती है। यदि रोग आने की संभावना हो तो यथाशीघ्र मैंकोज़ेब (75% डब्ल्यू पी) के 0.2% घोल के 4-5 छिड़काव 10-15 दिन के अंतराल पर कर देने चाहिए।

चारा फसलें

बरसीम, रिजका और जई जाड़े की प्रमुख चारा फसलें हैं। इस माह बरसीम, रिजका, सैंजी और जई की फसलें बढ़वार लेकर कटाई योग्य हो जाती हैं। रबी चारा फसलों विशेषकर बरसीम के साथ यदि सरसों अथवा जापानी राई को उगाया गया हो तो उसकी कटाई अवश्य कर लेनी चाहिए अन्यथा सरसों की अधिक बढ़वार से चारा फसलों की पैदावार घट जाती है। बरसीम में आवश्यकतानुसार 14-18 दिन के अंतराल पर सिंचाई करें।

रबी मक्का

रबी मक्का की बुवाई के 20-25 दिन की अवस्था पर निराई-गुड़ाई करके सिंचाई कर दें तथा समुचित नमी के लिए समय-समय पर सिंचाई करते रहें। रबी मक्का की बुवाई के 30-35 दिन बाद (पौधों की लगभग घुटने की अवस्था) पर 40 किलोग्राम नाइट्रोजन/हेक्टेयर की दर से पहली बार बुरकाव करें एवं दूसरा बुरकाव जीरा निकलने के पूर्व करें।

तिलहनी फसलें

तोरी की फसल इस माह के अंत तक प्राय: पक जाती है। अतः इस फसल की कटाई कर लेनी चाहिए जिससे रबी की अन्य फसल अथवा पछेती गेहूं की शीघ्र बुवाई की जा सके। इन फसलों में इस समय पर चेपा (माहू) कीट के आने की संभावना रहती है। इसके नियंत्रण के लिए प्रभावित टहनियों/ शाखाओं को प्रारंभ में ही तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए। रासायनिक नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड (17.8% एस एल) @ 0.25 मि.ली./लीटर पानी का आवश्यक घोल बनाकर छिड़काव करें।

दलहनी फसलें

समय से बोई गई चना, मटर और मसूर की फसलों से आवश्यकतानुसार खरपतवारों का उन्मूलन करें। साथ ही यदि वर्षा न हो और मृदा में नमी की कमी हो तो एक हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए। इस सिंचाई से इन फसलों की अच्छी वृद्धि होगी और साथ ही पाले से भी इनकी सुरक्षा होगी।

सब्जियां

- तापमान में कमी को देखते हुए सब्जियों में सिंचाई शाम के समय करें यह फसलों को संभावित पाले व शीत लहर से बचाने में सहायक होती है।
- इस मौसम में किसान भाई सब्जियों की निराई-गुड़ाई करके खरपतवारों को नष्ट करें, सब्जियों की फसल में सिंचाई करें तथा उसके बाद संस्तुत उर्वरकों का प्रयोग करें।
- खेत में तैयार मूली, गाजर और शलजम को उखाड़कर बिक्री हेतु बाज़ार भेजें।
- लहसुन में पहले हल्की सिंचाई और फिर ओट आने पर गुड़ाई करें।
- मिर्च और बैंगन की तैयार फसल से हरी मिर्चियों को तोड़कर बिक्री हेतु बाज़ार भेजें।
- अक्तूबर में बोई गई पालक की फसल कटाई हेतु तैयार हो तो काटकर बिक्री हेतु बाज़ार भेजें।
- मटर की फसल में फलियों की संख्या में वृद्धि हेतु 2% यूरिया के घोल का छिड़काव करें।
- इस मौसम में तैयार खेतों में प्याज की रोपाई करें तथा छेदक कीटों की संख्या अधिक पाए

जाने पर इनका नियंत्रण फोलिडाल पाउडर @ 25 कि.ग्रा./ हेक्टेयर का प्रयोग आसमान साफ होने पर करें।

- यदि टमाटर, फूलगोभी, बंदगोभी और ब्रोकली की पौधशाला तैयार है तो मौसस को ध्यान में रखते हुए इस माह भी इनकी रोपाई कर सकते हैं।
- प्याज की समय से बोई गई फसल में थ्रिप्स के आक्रमण की निरंतर निगरानी करते रहें। कीट के पाए जाने पर कार्बारिल @ 2 ग्रा./लीटर पानी किसी चिपकने वाले पदार्थ जैसे टीपोल आदि (1.0 ग्रा. /एक लीटर घोल) में मिलाकर छिड़क दें।
- प्याज में परपल ब्लोस रोग की निगरानी करते रहें। रोग के लक्षण पाए जाने पर डाएथेन एम 45 @ 3 ग्रा./लीटर पानी किसी चिपकने वाले पदार्थ जैसे टीपोल आदि (1 ग्रा./एक लीटर घोल) में मिलाकर छिड़काव करें।
- पालक, धनिया, मेथी की बुवाई कर सकते हैं। पत्तों की अच्छी बढ़वार के लिए 50 कि.ग्रा./ हेक्टेयर की दर से छिड़क दें।
- टमाटर में झूलसा रोग की निरंतर निगरानी करते रहें। लक्षण दिखाई देने पर बाविस्टीन @1.0 ग्राम/लीटर पानी या डाईथेन एम 45 @ 2.0 ग्राम/ लीटर पानी में मिलाकर छिड़क दें।

उद्यान

- आंवले के तैयार फलों को तोड़कर बाज़ार में बिक्री हेतु भेजें। मूलवृंत हेतु बीज का प्रबंध करें।
- मौसमी, माल्टा, नींबू और किन्नों आदि के तैयार फलों को सही अवस्था पर तोड़कर बाज़ार में बिक्री हेतु भेजें।
- लोकाट एवं कटहल के पेड़ों के थाले बनाकर उनमें सिंचाई अवश्य करें।
- आम या अन्य फलों के बागों में खाद व उर्वरकों का प्रयोग करने का यह सही समय है। आम के पौधों में गोबर की खाद 15, 30, 45, 60, 75 कि.ग्रा./ पौधा उम्र के हिसाब से क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ एवं पंचम वर्ष व अधिक उम्र के हिसाब से दें। साथ ही उर्वरकों की संस्तुत मात्रा का भी प्रयोग इसी समय करें।
- इस माह मिलीबग के युवा जमीन से निकलकर आम के तनों पर चढ़ेंगे, इनको रोकने हेतु जमीन से 0.5 मीटर की ऊंचाई पर आम के तने के चारों तरफ 25 से 30 से.मी. चौड़ी अल्काथीन की पट्टी लपेटें। तने के आस-पास की मिट्टी की खुदाई करें जिससे उनके अंडे नष्ट हो जाएंगे।
- अमरूद में सिंचाई करें। तैयार फलों को सही अवस्था पर तोड़कर बाज़ार में बिक्री हेतु भेजें। अमरूद में वानस्पतिक प्रवर्धन हेतु ग्राफ्टिंग आदि का कार्य संपन्न करें।
- क्यारियों अथवा गमलों लगे हुए एक वर्षीय पुष्पों में आवश्यकतानुसार निकाई एवं सिंचाई करें।
- रजनीगंधा फसल में निराई-गुड़ाई करें।
- कलकतिया गुलाब की ज़मीन से 30 सें.मी. ऊपर से कटाई-छंटाई अवश्य संपन्न करें।
- गेंदे के तैयार फूलों को तोड़कर बिक्री हेतु बाज़ार भेजें।

जनवरी माह के मुख्य कृषि कार्य

समस्त किसान भाइयों और बहनों को नए साल की हार्दिक बधाई और शुभ कामनाएं जनवरी माह में मुख्यतः पिछले वर्ष बोई गई रबी फसलों की देखभाल एक महत्वपूर्ण कार्य है। रबी फसलों में दक्ष पोषक, जल, खरपतवार, रोग एवं कीट प्रबंधन अपनाए जाने की आवश्यकता होती है जिससे इनकी उचित बढ़वार हो सके।

आलू में सस्य-क्रियाएं

आलू में अच्छी वृद्धि और पैदावार के लिए खेत में उचित नमी का होना आवश्यक होता है। यदि पाला गिरने की संभावना हो तो शाम के समय एक हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए। आलू की पछेती फसल में सिंचाई के 3-4 दिन बाद मिट्टी चढ़ाएं। आलू में पछेती झुलसा (अंगमारी) रोग आने की संभावना हो तो यथाशीघ्र मैंकोज़ेब (75% डब्ल्यू पी) के 0.2% घोल के 3-4 छिड़काव 10-15 दिन के अंतराल पर कर दें।

गेहूं और जौ की देखभाल

देर से बोई गई गेहूं अथवा जौ की फसल यदि 21-25 दिन की हो तो उसमें पहली सिंचाई लगा देनी चाहिए तथा नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा का प्रयोग भी इस सिंचाई के बाद करें। गेहूं और जौ की पछेती फसल में विभिन्न प्रकार के खरपतवारों के नियंत्रण के लिए 30 ग्राम सल्फोसल्फ्यूरॉन (75%) + 2 ग्राम मैटसल्फ्यूरॉन (5%) के मिश्रण को 300 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के 30-35 दिन बाद फसल में छिड़क दें।

चना और मटर की देखभाल

चना और मटर की फसल में इस माह फूल बनने आरंभ हो जाते हैं। सिंचाई की सुविधा उपलब्ध होने पर चना और मटर में एक बार हल्का पानी लगा देना चाहिए। चने की फसल में फली-बेधक कीट की गिंडारों की रोकथाम के लिए फेनवेलरेट 20 ई.सी. की 500 मि.ली. या मोनोक्रोटोफॉस 36 ई.सी. की 750 मि.ली. मात्रा को 600 से 800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में छिड़क दें।

गन्ने की कटाई एवं देखभाल

उत्तरी भारत में इस माह भी गन्ने की कटाई का कार्य जारी रहेगा। पहले पेड़ी फसल की कटाई करनी चाहिए। मुख्य फसल (नौलख) की कटाई 15 फरवरी के बाद की जाए तो अच्छा होगा क्योंकि इस समय (जनवरी) में कटाई करने से इस फसल की पेड़ी अच्छी नहीं होगी।

चारा फसलों की देखभाल

बरसीम, रिजका, सैंजी और जई चारा फसलों की कटाई इस माह में जारी रहती हैं। बरसीम में आवश्यकतानुसार 14-18 दिन के अंतराल पर सिंचाई करें। इस समय बरसीम में जड़ एवं तना सड़न रोग आने की संभावना होती है। इससे बचने के लिए बाविस्टीन रसायन का 0.1% घोल बनाकर छिड़क दें। रिजका फसल की चारे के लिए पहली कटाई बुवाई के 60-70 दिन बाद करें। इसके बाद अगली कटाई 20-30 दिन बाद करें। जई की एक कटाई वाली प्रजातियों में 50% फूल आने की अवस्था पर कटाई करें।

सरसों और अलसी की देखभाल

सरसों में फली बनने की अवस्था पर फसल में सिंचाई अवश्य करें। मौसम को ध्यान में रखते हुए किसान भाइयों को सलाह दी जाती है कि सरसों के पेंटेड बग तथा चेपा (माहू) कीटों की भी निरंतर निगरानी करते रहें। एक या दो पौधे जिनमें सामान्य से अधिक चेपा हो उन्हें उखाड़ कर भूमि में दबा दें। चेपा/माहू के रासायनिक नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड (17.8% एस.एल.) @ 0.25 मि.ली./लीटर पानी का आवश्यक घोल बनाकर छिड़काव करें। अलसी में मुख्य रूप से उकठा, पत्ती अंगमारी, किट्ट (रतुआ) तथा चूर्णिल आसिता रोग लगते हैं। खड़ी फसल में पत्ती अंगमारी तथा किट्ट रोग नियंत्रण के लिए 2 ग्राम इन्डोफिलएम-45 या 3 ग्राम ब्लाईटाक्स 50/लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

सब्जियां

- इस माह प्याज की रोपाई के लिए अनुकूल तापमान रहता है। अतः तैयार पौध की जल्द से जल्द रोपाई करें। रोपाई वाले पौधे छः सप्ताह से ज्यादा उम्र के नहीं होने चाहिए। पौधों की छोटी क्यारियों में रोपाई करें। रोपाई के 10-15 दिन पूर्व खेत में 20-25 टन/हेक्टेयर की दर से गोबर की खाद डालें।
- लौकी, तोरी, ककड़ी, खीरा व तरबूज आदि की अगेती फसल के लिए बुवाई यथाशीघ्र संपन्न करें। गर्मी के मौसम में उगाई जाने वाले मिर्च की पौध पॉलीघरों में तैयार कर सकते हैं।
- गोभीवर्गीय फसलों में निराई-गुडाई करें। डायमंडबैक इल्ली की निगरानी हेतु फेरोमोन प्रपंश @ 3-4 प्रपंश / एकड खेतों में लगाएं। इस मौसम में तैयार बंदगोभी, फूलगोभी, गांठगोभी आदि की रोपाई भी कर सकते हैं।
- इस माह लहसुन में बैंगनी ब्लोच (धब्बा) रोग तथा थ्रिप्स कीटों का आक्रमण हो सकता हैं। अतः खेत की निरंतर निगरानी करते रहना चाहिए। रोग तथा कीट के पाए जाने पर मेंकोजेब (2 ग्रा./लीटर) तथा कानफीडोर (1 मि.ली./लीटर)

किसी चिपकने वाले पदार्थ जैसे टीपोल आदि, (1 ग्रा./लीटर घोल) में मिलाकर छिड़काव करें।

- इस माह पालक, धनिया, मेथी की बुवाई की जा सकती है।पत्तों वाली सब्जियों की अच्छी बढ़वार के लिए 20 कि.ग्रा. यूरिया / एकड़ की दर से प्रयोग किया जा सकता हैं।
- टमाटर में झुलसा रोग की निगरानी करते रहें। प्रारंभिक लक्षण दिखाई देने पर रिडोमिल अथवा केप्टान (2 ग्रा./लीटर पानी) के घोल का छिड़काव आसमान साफ होने पर करें।

उद्यान

- पपीता, आम आदि के नए पौधों को पाले से बचाव हेतू पुआल या पॉलीथिन से ढ़क दें।
- मौसम को ध्यान में रखते हुए अंगूर, आड़ू, आलू बुखारा आदि फलवृक्षों की कटाई-छंटाई करें।
- पोपलर की नर्सरी की सिंचाई करें।
- लोकाट एवं कटहल के पेड़ों के थाले बनाकर उनमें सिंचाई अवश्य करें।
- आंवले के तैयार फलों को तोड़कर बाज़ार में बिक्री हेतु भेजें। मूलवृंत हेतु बीज का प्रबंध करें।
- गेंदे के तैयार फूलों को तोड़कर बिक्री हेतु बाज़ार भेजें।
- गेंदा की फसल में झुलसा एवं पुष्प सड़न रोग के आक्रमण की निगरानी करते रहें। यदि रोग के लक्षण दिखाई दें तो बाविस्टिन (1 ग्रा./लीटर पानी) घोल का आसमान साफ होने पर छिड़काव करें।
- रजनीगंधा फसल में निकाई-गुड़ाई करें।
- क्यारियों अथवा गमलों लगे हुए एकवर्षीय पुष्पों में आवश्यकतानुसार निकाई एवं सिंचाई करें।

फरवरी माह के मुख्य कृषि कार्य

इस माह रबी फसलों में दानों का विकास होता है। दानों के विकास में यदि किसी उत्पादन-कारक की कमी हो जाती है तो इससे फसल उत्पादकता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। रबी की प्रमुख फसलों को कीड़े-मकोड़ों एवं रोगों से सुरक्षित रखना भी आवश्यक होता है। इच्छुक किसान इस माह के अंत से बसंतकालीन मूंग की बुवाई भी आरंभ कर सकते हैं। साथ ही सब्जियों एवं उद्यान फसलों में भी कई महत्वपूर्ण सस्यीय क्रियाओं का निष्पादन भी आवश्यक है।

गन्ने की कटाई एवं बुवाई

उत्तरी भारत में इस माह भी गन्ने की कटाई का कार्य जारी रहेगा। पहले पेड़ी फसल की कटाई करनी चाहिए। मुख्य फसल (नौलख) की कटाई 15 फरवरी के बाद की जाए तो अच्छा होगा। बसंतकालीन गन्ने की बुवाई का उपयुक्त समय फरवरी-मार्च होता है। तीन आँखों वाले टुकड़े बुवाई के लिए अच्छे रहते हैं। बीजू टुकड़ों को कवक आदि से बचाने के लिए उनको उपयुक्त कवकनाशी से उपचारित करना भी आवश्यक है। रसायन (बाविस्टीन 0.2%) के घोल में टुकड़ों को पंद्रह मिनट डुबोने से इसके दोनों कटे सिरे निर्जर्मीकृत हो जाते है।

गेहूं और जौ की देखभाल

गेहूं की फसल की 20-25 दिन के अंतराल पर सिंचाई करें। गेहूं में पीला रतुआ रोग की निरंतर निगरानी करते रहें। इस रोग में पत्तियों के ऊपरी सतह पर पीले रंग की धारियां देखने को मिलती हैं तथा बाद में पूरी पत्तियां पीली हो जाती हैं एवं पीला पाउडर जमीन पर भी गिरा देखा जा सकता है। रोग के लक्षण दिखाई देने पर प्रोपिकोनजोल 25 ई.सी. @ 0.1% का छिड़काव करें।

दलहनी फसलों में समसामयिक कार्य

चने में फली छेदक कीट का प्रकोप फली में दाना बनते समय अधिक होता हैं। इसके रासायनिक नियंत्रण के लिए मोनाक्रोटोफॉस 40 ई. सी. @ 1 लीटर/600-800 लीटर पानी में घोलकर फली आते समय फसल पर छिड़क दें। मटर की फसल में पहली सिंचाई फूल आते समय तथा दूसरी दाना भरते समय करनी चाहिए। मटर में चूर्णिल आसिता रोग के नियंत्रण के लिए कॉपर आक्सिक्लोराइट @ 2.5 ग्राम/लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। मसूर में फली छेदक कीट की रोकथाम के लिए फेनबलारेट नामक रसायन की 750 मि.ली. मात्रा को 1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़क देना चाहिए।

बसंतकालीन मूंग की बुवाई

फरवरी के अंत से मार्च माह के पहले पखवाड़े के बीच बसंतकालीन मूंग की बुवाई की जा सकती है। मूंग की शुद्ध फसल की उपयुक्त बीजदर 15-20 कि.ग्रा./हेक्टेयर होती है। बीज का शोधन 2.5 ग्राम थीरम अथवा 2 ग्राम थीरम + 1 ग्राम कार्बेन्डाजिम/कि.ग्रा. बीज की दर से करें। इसके बाद मूंग को राइजोबियम कल्चर के 1 पैकेट से 10 कि.ग्रा. बीज का उपचार करना चाहिए। बुवाई देसी हल अथवा सीडड्रिल से 30 सें.मी. दूरी पर पंक्तियों में करनी चाहिए। खरपतवारों के रासायनिक नियंत्रण के लिए पेंडिमेथालिन 30 ई.सी. की 3.3 लीटर को 600 से 700 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के 2-3 दिन के अंदर जमाव से पहले प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव कर दें।

सरसों की देखभाल

पूर्णरूप से पकी तोरी या सरसों की फसल को काट कर सूखने के लिए खेतों में फैला दें। लेकिन यह अवश्य ध्यान रखें कि अधिक समय तक कटी फसलों को सूखने के लिए खेत में छोड़ने से चितकबरा बग द्वारा नुकसान हो सकता है। अतः सूखने के बाद यथाशीघ्र फसल की गहाई करें। सरसों के पेंटेड बग तथा चेपा (माहू) कीटों की निरंतर निगरानी करते रहें। एक या दो पौधे जिनमें सामान्य से अधिक चेपा हो उन्हें उखाड़ कर भूमि में दबा दें एवं अधिक प्रभाव होने पर पिछले माह बताई रासायनिक विधि से नियंत्रण करें।

बरसीम में बीज उत्पादन

अधिक उपज एवं गुणवत्ता वाले बीज के उत्पादन के लिए इसकी चारे के लिए कटाई मार्च के दूसरे सप्ताह में बंद कर देनी चाहिए तथा फसल को बीज उत्पादन के लिए छोड़ देना चाहिए। फूल आते समय और दाना भरने की अवस्था पर सिंचाई अवश्य करें। जब फसल में फूल आ जाएं तो इससे खरपतवारों जैसे कासनी आदि और अन्य फसल के पौधों (जैसे जई) को खेत से उखाड़कर बाहर कर दें।

आलू में सस्य-क्रियाएं

आलू की फसल की इस माह खुदाई आरंभ हो जाती है। इस दशा में जनवरी के प्रथम सप्ताह में पौधों के ऊपरी भाग (डंठल) को काट दें, उसके बाद आलू को 20-25 दिन तक जमीन के अंदर ही पड़े रहने दें। ऐसा करने से आलू का छिलका कड़ा हो जाएगा और खराब नहीं होगा। 20 से 25 दिन बाद खुदाई कर के साफ-सुथरे कंदों का चयन करें और नई बोरियों में भरकर भंडारण के लिए शीतगृहों में भेज दें।

सब्जियां

- टमाटर के फलों को फली छेदक कीट से बचाव के लिए किसान खेत में पक्षी बसेरा लगाएं। कीट से नष्ट फलों को इकट्ठा कर जमीन में दबा देना चाहिए। साथ ही फल छेदक कीट की निगरानी के लिए फेरोमोन प्रपंश @ 2-3 प्रपंश/एकड़ की दर से लगाएं।
- गर्मी के मौसम वाली मूली इत्यादि की सीधी बुवाई हेतु यह माह अनुकूल होता है क्योंकि बीजों के अंकुरण के लिए इस समय उपयुक्त तापमान रहता
- बैंगन की फसल को प्ररोह एवं फल छेदक कीट से बचाव हेतु ग्रसित फलों तथा प्ररोहों को इकट्ठा कर नष्ट कर दें।
- लोबिया की उन्नतशील किस्मों जैसे पूसा कोमल अथवा पूसा फागुनी किस्मों की बुवाई करें।
- भिंडी की अगेती बुवाई हेतु ए-4, परबनी क्रांति आदि किस्मों की बुवाई हेतु खेतों की तैयारी करें। बीज की मात्रा 20-25 कि.ग्रा./हेक्टेयर रखें। 2 ग्रा. केप्टान अथवा थीरम से प्रति कि.ग्रा. बीज को उपचारित करें।
- किसान एकल कटाई हेतु पालक (ज्योति), धनिया (पंत हरितमा), मेथी (पी.ई.बी, एच.एम.-1) की बुवाई कर सकते हैं। पत्तों की शीघ्र बढ़वार के लिए 20 कि.ग्रा. यूरिया का/एकड़ की दर से छिड़काव कर सकते हैं।
- गाजर, मूली, चुकंदर और शलगम की फसल में निराई-गुड़ाई तथा चेपा कीट की निगरानी करें।

- गोभीवर्गीय फसलों में निराई-गुड़ाई करें। डायमंडबैक इल्ली की निगरानी हेतु फेरोमोन प्रपंश @ 3-4 प्रपंश/एकड़ खेतों में लगाएं।

उद्यान

- इस समय किसान भाई आम के बागों की जुताई करें ताकि मिली बग कीटों के अंडे तथा नए प्रजन्म नष्ट हो सकें। पेड़ के मुख्य तने पर लगभग 1 मीटर की ऊंचाई पर प्लास्टिक (1 फीट चौड़ा) का एक चद्दर तने के चारों ओर लगाएं तथा ग्रीस से सभी प्रकार के छेदों को बंद कर दें।
- मौसम को ध्यान में रखते हुए, किसान भाइयों को यह सलाह है कि, वे अंगूर, आड़ू व आलूबुखारा आदि फलवृक्षों में संस्तुति अनुसार खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग करें। नमी की कमी होने पर सिंचाई भी अवश्य करें।
- यह माह पपीते की पौध तैयार करने के लिए उपयुक्त है। पपीते के पौधे पहले रोपणी (नर्सरी) में तैयार किए जाते हैं। एक हेक्टेयर में रोपाई के लिए 500-1000 ग्राम बीज की आवश्यकता होती है। पौधे पॉलीथिन की थैली में भी तैयार किए जा सकते हैं।
- गेंदा की फसल में झुलसा एवं पुष्प सड़न रोग के आक्रमण की निगरानी करते रहें। यदि रोग के लक्षण दिखाई दें तो बाविस्टिन (1 ग्रा./लीटर पानी) अथवा इंडोफिल एम-45 (2 मि.ली./लीटर पानी) घोल का आसमान साफ होने पर छिड़काव करें।

मार्च माह के मुख्य कृषि कार्य

इस माह रबी अधिकतर फसलों में दाने का विकास जारी रहता है। इस दशा में किसी भी उत्पादन-कारक की कमी नहीं होनी चाहिए अन्यथा फसल उत्पादकता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इन रबी फसलों को कीड़े-मकोड़ों एवं रोगों से सुरक्षित रखना भी आवश्यक होता है। साथ ही इस माह बसंतकालीन गन्ने की बुवाई का कार्य भी जारी रहता है। बरसीम की फसल से अच्छे बीजोत्पादन के लिए आपको अभी से सजग होना पड़ेगा। इस माह ग्रीष्मकालीन मूंग, उड़द एवं चारा फसलों की बुवाई की जा सकती है।

गेहूं और जौ की देखभाल

गेहूं की फसल में 20-25 दिन के अंतराल पर सिंचाई करते रहें। यदि गेहूं के खेत में काले रंग के पुष्पक्रम दिखाई दें तो उन्हें ध्यानपूर्वक तोड़कर जमीन में दबा दें। गेहूं में पीला रतुआ रोग की निरंतर निगरानी करते रहें। रोग के लक्षण दिखाई देने पर प्रोपिकोनजोल 25 ई.सी. @ 0.1% का छिड़काव करें। रोग के प्रकोप तथा फैलाव को देखते हुए दूसरा छिड़काव 15-20 दिन के अंतराल पर करें। यह चूर्णिल आसिता तथा करनाल बंट से भी फसल को बचाता है।

चना, मटर एवं मसूर में सामयिक कार्य

चने में फली छेदक कीट का प्रकोप फली में दाना बनते समय अधिक होता हैं। इसके रासायनिक नियंत्रण के लिए मोनाक्रोटोफॉस 40 ई. सी. @ 1 लीटर / 600-800 लीटर पानी में घोलकर फली आते समय फसल पर छिड़क दें। मटर की फसल में एक हल्की सिंचाई दाना भरते समय करनी चाहिए। फली छेदक कीट मसूर की फलियों में छेद करके दानों को नष्ट कर देता है। इसकी रोकथाम के लिए फेनबलारेट नामक रसायन की 750 मि.ली. मात्रा को 600-800 लीटर पानी में घोलकर छिड़क देना चाहिए।

ग्रीष्मकालीन उड़द एवं मूंग की बुवाई

इस माह ग्रीष्मकालीन उड़द/मूंग की बुवाई की जा सकती है। इन फसलों को शुद्ध अथवा अंतःफसल के रूप में उगाया जा सकता है। बसंतकालीन गन्ने की दो पंक्तियों के बीच इनकी एक पंक्ति में बुवाई की जा सकती है। मृदा परीक्षण की संस्तुतियों के अनुसार ही उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। यदि ऐसा न हो तो 10-15 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 20 कि.ग्रा. पोटाश./हेक्टेयर की दर से बुवाई के समय प्रयोग करें।

ग्रीष्मकालीन चारा फसलों की बुवाई

चारा फसलों जैसे ज्वार, बाजरा, मक्का, लोबिया, ग्वार आदि को इस मौसम में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। अच्छी पैदावार के लिए चारा फसलों की उन्नत किस्मों का चयन करें। अच्छी चारा उपज के लिए स्वस्थ एवं निरोग बीज का चुनाव आवश्यक है। यदि किसान पिछले वर्ष का बीज उपयोग में लाना चाहते हैं तो इसका उपचार किसी कवकनाशी दवाई से अवश्य कर लेना चाहिए (थीरम अथवा बाविस्टीन की 2.5 ग्राम मात्रा/कि.ग्रा. बीज)।

गन्ने की बुवाई

उत्तरी भारत में इस माह भी गन्ने की बुवाई का कार्य जारी रहेगा। खेत तैयार करने के लिए पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करके दो-तीन बार हैरो अथवा कल्टीवेटर चलाकर खेत तैयार कर लिया जाता है। गन्ने के तने के ऊपरी भाग से लिए गए बीज का अंकुरण अच्छा होता है। गन्ना बोने की नाली विधि अधिक उपयोगी एवं लोकप्रिय पाई गई है।

बरसीम में बीज उत्पादन

बरसीम का बीज बाज़ार में काफी महंगा मिलता है। अतः किसान इसका बीज पैदा करके काफी लाभ प्राप्त कर सकते हैं। अधिक उपज एवं गुणवत्ता वाले बीज के उत्पादन के लिए इसकी चारे के लिए कटाई मार्च के दूसरे सप्ताह के बाद नहीं करनी चाहिए तथा फसल को बीज उत्पादन के लिए छोड़ देना चाहिए। मृदा में नमी की कमी न होने दें और आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें। जब फसल में फूल आ जाएं तो इससे खरपतवारों जैसे कासनी आदि और अन्य फसल के पौधों (जैसे जई) को खेत से उखाड़कर बाहर कर दें।

हरी खाद की फसलें

रबी फसलों की कटाई के बाद खाली खेतों में मृदा उर्वरता वृद्धि के लिए हरी खाद वाली फसलों की बुवाई की जा सकती है। हरी खाद के लिए मुख्य रूप से दलहनी फसलें उगाई जाती हैं। उपयुक्त नमी में पुष्पावस्था पर मिट्टी-पलट हल से मिट्टी में हरी खाद फसल को दबा दिया जाता है। यदि धान अथवा अन्य खरीफ फसल से पहले हरी खाद का प्रयोग किया जाए तो खरीफ फसल के साथ-साथ यह अगली रबी की फसल के उत्पादन बढ़ाने में लाभदायक है।

सब्जियां

- भिंडी की अगेती बुवाई हेतु ए-4, परबनी क्रांति आदि किस्मों की बुवाई हेतु खेतों की तैयारी करें। बीज की मात्रा 20-25 कि.ग्रा./हेक्टेयर रखें। 2 ग्रा. केप्टान अथवा थीरम से /कि.ग्रा. बीज को उपचारित करें।
- सब्जियों में चेपा के आक्रमण की निगरानी करते रहें। वर्तमान तापमान में यह कीट जल्द ही नष्ट हो जाते हैं। यदि कीट की संख्या अधिक हो तो इमिडाक्लोप्रिड़ @ 0.25 मि.ली./लीटर पानी की दर से पके फलों की तुड़ाई के बाद छिड़काव आसमान साफ होने पर करें।
- प्याज की फसल में हल्की सिंचाई करें। फसल की इस अवस्था में उर्वरक न दें अन्यथा फसल की वनस्पति भाग की अधिक वृद्धि होगी और प्याज की गांठ की कम वृद्धि होगी।
- प्याज की फसल में थ्रिप्स के आक्रमण की निरंतर निगरानी करते रहें। थ्रिप्स कीट की संख्या अधिक पाए जाने पर कार्बारिल (2 ग्रा./ लीटर पानी) अथवा इमिडाक्लोप्रिड़ (1 मि.ली./4 लीटर पानी) किसी चिपकने वाले पदार्थ जैसे टीपोल आदि (1.0 ग्रा./लीटर घोल) में मिलाकर आसमान साफ होने छिड़काव पर करें।
- गर्मी के मौसम वाली मूली इत्यादि की सीधी बुवाई हेतु यह माह अनुकूल होता है क्योंकि बीजों के अंकुरण के लिए इस समय उपयुक्त तापमान रहता है। किसान उन्नत बीजों को किसी प्रमाणित स्रोत से ही प्राप्त करें।
- टमाटर के फलों को फली छेदक कीट से बचाव के लिए किसान खेत में पक्षी बसेरा लगाएं। कीट से नष्ट फलों को इकट्ठा कर जमीन में दबा देना

चाहिए। साथ ही फल छेदक कीट की निगरानी के लिए फेरोमोन प्रपंश @ 2-3 प्रपंश/एकड़ की दर से लगाएं।

- लोबिया की उन्नतशील किस्मों जैसे पूसा कोमल अथवा पूसा फागुनी किस्मों की बुवाई करें।
- बैंगन की फसल को प्ररोह एवं फल छेदक कीट से बचाव हेतु ग्रसित फलों तथा प्ररोहों को इकट्ठा कर नष्ट कर दें। यदि कीट की संख्या अधिक हो तो कीटनाशी स्पिनोसेड 48 ई.सी. @ 1 मि. ली./4 लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

उद्यान

- इस माह भी किसान भाई आम के बागों से मिली बग कीटों के अंडों तथा नए प्रजन्मों को नष्ट करने के लिए जुताई कर सकते हैं। पेड़ के मुख्य तने पर लगभग 1 मीटर की ऊंचाई पर प्लास्टिक (1 फीट चौड़ा) की एक चद्दर तने के चारों ओर लगाएं तथा ग्रीस से सभी प्रकार के छेदों को बंद कर दें।
- जहां तक संभव हो इस माह किसी भी कीटनाशी का प्रयोग आम में न किया जाए, परंतु आम के भुनगे का अत्यधिक प्रकोप होने की स्थिति में डाइमेथोएट के 0.05% घोल का एक छिड़काव कर सकते हैं।
- मौसम को ध्यान में रखते हुए, किसान भाइयों को यह सलाह है कि, वे अंगूर, आड़ू व आलुबुखारा आदि फलवृक्षों में नमी की कमी होने पर सिंचाई करें।
- मौसम को ध्यान में रखते हुए किसान भाइयों को सलाह है कि ग्रीष्मऋतु के लिए गेंदे की तैयार पौध की रोपाई करें।

हिंदी उन सभी गुणों से अलंकृत है जिनके बल पर वह विश्व की साहित्यिक भाषाओं की अगली श्रेणी में समासीन हो सकती है।

- राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त

विविधा....

खाद्य एवं पोषण सुरक्षा: कुपोषण से सुपोषण की ओर

निशी शर्मा[1], प्रतिभा जोशी[2], गिरिजेश सिंह महरा[3], जे.पी.एस. डबास[4], एवं पुनीता पी.[5]

[1,2,4,5]कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानांतरण केंद्र, [3] वैज्ञानिक कृषि प्रसार संभाग,
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

एक देश या क्षेत्र की अपनी वर्तमान और अनुमानित आबादी के लिए पर्याप्त खाद्य आपूर्ति का आश्वासन देने को 'खाद्य सुरक्षा' कहते हैं। सिर्फ अनाज की उपलब्धता ही खाद्य आपूर्ति नहीं है अपितु सब लोगों को एक सक्रिय व स्वस्थ जीवन के लिए आहार की जरूरतों और खाद्य वरीयताओं को पूरा करने के लिए सुरक्षित और पौष्टिक भोजन पर्याप्त मात्रा में मिलना जरूरी है। भारत कई कृषि उत्पादों का मुख्य उत्पादक देश होने के बावजूद भी यहां खाद्य व पोषण सुरक्षा की समस्या का सामना करना पड़ रहा है। विकासशील देशों में 20 करोड़ से अधिक लोग कुपोषण के शिकार हैं। स्थायी खाद्यान्न उत्पादन, आपूर्ति और पोषण किसी भी देश के आर्थिक विकास के लिए आवश्यक परिस्थिति हैं। 1.3 बिलियन से अधिक आबादी वाले भारत में पिछले दो दशकों में जनसंख्या में जबरदस्त वृद्धि हुई है। सकल घरेलू उत्पाद में 4.5 गुना और प्रति व्यक्ति खपत में 3 गुना वृद्धि हुई है। इसी तरह, खाद्यान्न उत्पादन लगभग 2 गुना बढ़ गया है। हालांकि, अभूतपूर्व औद्योगिक और आर्थिक विकास के साथ भारत पर्याप्त भोजन का उत्पादन का लक्ष्य पूर्ण करने को प्रयत्नशील है परंतु महिलाओं एवं बच्चों को पोषणयुक्त आहार उपलब्ध करना भी एक चुनौती है। एक अनुमान के अनुसार 2050 तक खाद्यान्न की मांग को पूरा करने के लिए कृषि उत्पादन में 60 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी करनी होगी। प्रायः खाद्य सुरक्षा का अर्थ, देश के हर नागरिक तक भोजन उपलब्धता को समझा जाता है जबकि खाद्य सुरक्षा केवल देश के नागरिको तक भोजन पहुंचाना नहीं बल्कि भोजन द्वारा उचित मात्रा में पोषक तत्वों की उपलब्धता भी है। खाद्य सुरक्षा हर जन-साधारण का मूलभूत अधिकार है। अपने जीवन के लिए हर किसी को पोषक तत्वों से परिपूर्ण भोजन की जरूरत होती है। महत्वपूर्ण यह भी है कि भोजन की जरूरत नियत समय पर पूरी हो।

अच्छा पोषण एवं शारीरिक स्थिति विकास का एक महत्वपूर्ण सूचक है। यद्यपि राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न नीतियों के माध्यम से महिलाओं एवं बच्चों के पोषण के लिए कई प्रयास किए जा रहे हैं परंतु कुपोषण अभी भी विद्यमान है। भारत में पांच साल से कम उम्र के 43.5 प्रतिशत बच्चे एवं 50 प्रतिशत महिलाएं कुपोषण एवं एनिमिया (रक्त की कमी) का शिकार हैं। कुपोषण एवं अल्पपोषण का शिकार ग्रामीण समुदायों की महिलाएं एवं बच्चे ज्यादा हैं जहां आहार विविधता सीमित है। कुपोषण बच्चों में कम बुद्धि व अंधेपन का एक कारण है तथा महिलाओं में एनीमिया का महत्वपूर्ण कारक है। कुपोषित बच्चों में डायरिया, निमोनिया और मलेरिया जैसी सामान्य बचपन की बीमारियों से मृत्यु का खतरा अधिक होता है। हमारे देश में एक तरफ पोषण सुरक्षा पर स्थिति इतनी गंभीर है, तो दूसरी तरफ यह अनुमान लगाया जाता है कि 30 प्रतिशत अनाज तथा फल एवं सब्जियों के उत्पादन का लगभग 30-40 प्रतिशत हिस्सा उचित प्रबंधन तकनीकों से अभाव के कारण क्षतिग्रस्त हो जाता है। कुपोषण एवं अल्प पोषण हमारे अस्तित्व, विकास, स्वास्थ्य, उत्पादकता, और आर्थिक स्थिति को प्रभावित करता है। प्राथमिक रूप से कुपोषण के मुख्य कारक महिलाओं मे ऊर्जा की कमी, जन्म के समय शिशु का कम वजन, विटामिन ए, लौह तत्व एवं आयोडीन की कमी आदि हैं। पोषण संबंधी शिक्षा एवं संतुलित आहार की जानकारी की कमी कुपोषण को बढ़ावा देती है। भारतीय मेडिकल परिषद के शोधन ने एक व्यक्ति के लिए कितना पोषण जरूरी है उसे कैलोरी के अनुसार मापदंड तय किया है। भारतीय मेडिकल परिषद के शोधन के अनुसार एक औसत भारतीय के लिए भारी काम करने वालों के लिए रोजाना 2400 कैलोरी/व्यक्ति और कम शारीरिक श्रम करने वाले लोगों के लिए 2100 कैलोरी पोषण जरूरी है (सारणी 1)। पोषण सुरक्षा का मतलब यह

भी है कि किसी भी व्यक्ति को अपने जीवन चक्र में ऐसे विविधता पूर्ण पर्याप्त मात्रा में पहुंच सुनिश्चित होना जिसमें जरूरी कार्बोहाईड्रेट, प्रोटीन, वसा, सूक्ष्म पोषण तत्व की उपलब्धता हो (सारणी 2)। कुपोषण को भोजन की उपलब्धता और उसके वितरण के नजरिए से देखा जाना आवश्यक है।

आहार का सेहत पर बहुत असर पड़ता है। हम जो भी खाते हैं उसका सीधा प्रभाव हमारे स्वास्थ्य पर पड़ता है। ऐसे में जरूरी हो जाता है कि हमारा आहार संतुलित हो। संतुलित आहार शरीर का निर्माण ही नहीं करता, बल्कि इसका उचित चुनाव औषधि का काम करके हमें रोगों से बचाता और उनसे लड़ने की शक्ति देता है। एक स्वस्थ जीवन हेतु संतुलित आहार का अंतर्ग्रहण अत्यंत आवश्यक है। प्रत्येक खाद्य वर्ग से उचित मात्रा में खाद्य पदार्थों को आहार में सम्मिलित कर व्यक्ति अपने आहार को संतुलित बना सकता है। आहार के संतुलित होने के लिए यह आवश्यक है कि उसमें सभी पोषक तत्वों की मात्रा उचित रूप में उपस्थित हों। पोषक तत्वों में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, खनिज लवण, विटामिन तथा जल सम्मिलित हैं। एक स्वस्थ संतुलित आहार में बीमारियों को रोकने, हमें उत्तम स्वास्थ्य स्थिति प्राप्त करने तथा हमारे जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि करने की शक्ति होती है।

सारणी 1: भारतीय मेडिकल परिषद के शोध के अनुसार 5 सदस्य परिवार के लिए मासिक जरूरत

सदस्य	अनाज (किलो)	दाल (किलो)	खाद्य तेल (ग्राम)
औसत मेहनत करने वाला पुरुष	14.4	2.7	1050
औसत मेहनत करने वाली महिला	10.8	2.25	900
1-6 वर्ष का बच्चा	5	1.1	675
7-12 वर्ष का बच्चा	9	1.8	750
बुजुर्ग	9	1.8	675
कुल	48.2	9.65	4050

स्रोतः हैदराबाद स्थित इंडियन कौंसिल ऑफ मेडिकल रिसर्च, द्वारा प्रकाशित (न्यूट्रिटिक वैल्यु ऑफ इंडियन फूडस) रीप्रिंट 2004

सारणी 2: भारतीय मेडिकल परिषद द्वारा प्रस्तावित खाद्य समूह के अनुसार निम्नवत पोषक तत्वों की उपलब्धता होती है।

खाद्य समूह	पोषक तत्व
अनाज, कद्द्न व दालें	ऊर्जा, प्रोटीन, वसा, विटामिन बी1 , विटामिन बी2, लौह तत्व, फोलिक अम्ल व रेशा।
दूध व पशु उत्पाद	प्रोटीन, वसा, विटामिन बी1, केल्शियम व लौह तत्व
सब्जी व फल	केरोटिनोइड्स, विटामिन सी, रेशा, विटामिन बी 2, फोलिक एसिड, कैल्शियम व लौह तत्व।
तेल, वसा व मेवे	ऊर्जा, प्रोटीन, वसा।

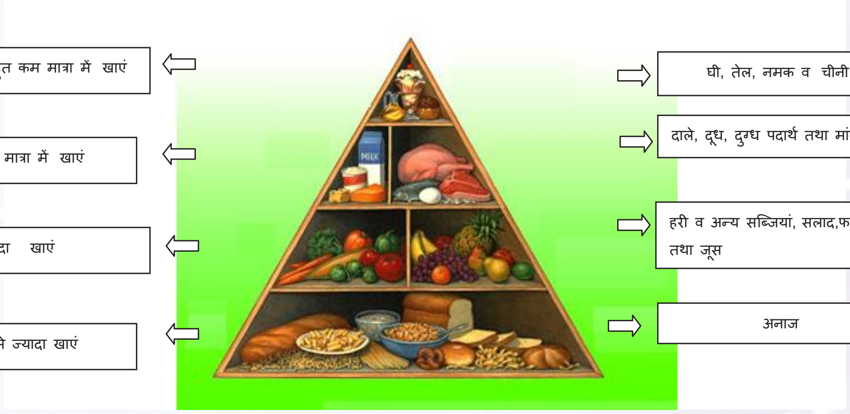

एक व्यक्ति को आहार में कौन-कौन से खाद्य पदार्थ शामिल करने चाहिए इसके लिए हम फूड गाइड पिरामिड का संदर्भ ले सकते हैं। उपर्युक्त चित्र में देख सकते हैं कि इस पिरामिड में विभिन्न खाद्य पदार्थ दर्शाए गए हैं। इस पिरामिड में जो खाद्य पदार्थ सबसे नीचे दिए गए हैं, वह सर्वाधिक आवश्यक और शरीर के विकास के लिए सबसे लाभकारी होते हैं।

महिलाएं जोकि कृषि अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं, की आहार विविधता सीमित होने के कारणवंश वे कुपोषण व अल्प पोषण की शिकार हैं। वैसे तो कुपोषण की समस्या सभी वर्गो में है परंतु महिलाओं में कुपोषण बचपन से ही शुरू हो जाता है और जीवन भर महिलाएं कुपोषण से ग्रसित रहती हैं। आज के परिप्रेक्ष्य में कृषक महिलाओं द्वारा कठिन परिश्रम वाली गतिविधियों एवं कुपोषण संबंधित जानकारियों ने शोधकर्ताओं का ध्यान व्यापक रुप से आकर्षित किया है। महिलाओं को उच्च गुणवत्ता वाले पोषक तत्वों की अधिक आवश्यकता होती है, क्योंकि उनका कार्यभार एवं ऊर्जा व्यय अधिक होता है। कुपोषण को कम करने के लिए पोषण वाटिका के माध्यम से आहार विविधता बढ़ाने हेतु अनेक प्रयोग किए जा रहे हैं। इस पोषण वाटिका में विभिन्न प्रकार की सब्जियां उगाई जा सकती हैं जोकि विटामिन, खनिज लवण, प्रति ऑक्सीकारक, फोलिक अम्ल और रेशा जैसे पोषक तत्वों का महत्वपूर्ण स्रोत हैं। एक योजनाबद्ध तरीके से बनाए गए पोषण उद्यान से परिवार के सदस्यों को वर्षभर कुछ प्रमुख खाद्य पदार्थों सहित पौष्टिक आहार प्राप्त हो सकता है। महिलाओं को पोषण सुरक्षा व वैज्ञानिक विधि से सब्जी व फल उत्पादन पर प्रशिक्षित करना आवश्यक है।

संतुलित आहार

संतुलित आहार का तात्पर्य उस आहार से है जो हमारी पोषण की स्थिति, आयु, लिंग वं गतिविधि के स्तर के आधार पर हमें पर्याप्त मात्रा में प्रोटीन, विटामिन एवं खनिज के अलावा ऊर्जा प्रदान करता है। संतुलित आहार में विविध प्रकार के खाद्य पदार्थ होते हैं। परंतु इसका चुनाव किस प्रकार किया जाए, इसका नियोजन करते समय हमारा मुख्य उद्देश्य यह होना चाहिए कि आहार द्वारा व्यक्ति को सभी पोषक तत्व मिलें। संतुलित आहार में शामिल आवश्यक तत्व वसा, प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, मिनरल, विटामिन और जल और रेशा हैं। वसा, कार्बोहाइड्रेट और प्रोटीन को मैक्रोन्यूट्रिएंट कहते हैं जिनकी आवश्यकता शरीर को अधिक मात्रा में होती है। जबकि विटामिन और मिनरल माइक्रोन्यूट्रिएंट है जिनकी जरूरत शरीर को कम मात्रा में पड़ती है। संतुलित आहार महत्वपूर्ण है क्योंकि अंगों और ऊतकों को प्रभावी ढंग से काम करने के लिए उचित पोषण की आवश्यकता होती है।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अंतर्गत कई अनुसंधान संस्थानो ने फसलों की पोषकवर्धक किस्मों का निर्माण किया है (सारणी 3) जिनका प्रसार आज समय की मांग है। इस कदम से खेत से भोजन की थाली तक का सफर पोषक तत्वों के साथ तय किया जा सकता है जिससे कुपोषण को दूर करने में निश्चित ही सहायता मिलेगी।

सारणी 3: भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित पोषण युक्त फसलों की उन्नत किस्में

फसल	किस्म का नाम	पोषण स्तर
गेहूं	एच आई 8663(पोषण) एच डी 4672 (मलवरतना) एच डी 2932 (पूसा गेहूं) एच आई 8498 (मालवशक्ति) एच आई 8713 (पूसा मंगल) एच आई 1563 (पूसा प्राची)	विटामिन ए का समृद्ध स्त्रोत। दलिया सूजी एवं पास्ता बनाने के लिए समर्थ। दलिया एवं सूजी बनाने के लिए समर्थ। जिंक का समृद्ध स्त्रोत। दलिया एवं सूजी बनाने के लिए समर्थ। बीटा कैरोटीन, आइरन एवं जिंक का समृद्ध स्त्रोत। लौह, कॉपर एवं जिंक का समृद्ध स्त्रोत।
चना	पूसा 372 (देसी) पूसा चमत्कार (बी जी 1053) (काबुली)	दाल एवं बेसन बनाने के लिए समर्थ। भोजन हेतु उत्कृष्ट पकने में सक्षम।
मसूर	पूसा वैभव	लौह का समृद्ध स्त्रोत।
गाजर	पूसा वसुधा पूसा रुधिरा पूसा नयन ज्योति	बीटा कैरोटीन, लाईकोपीन एवं खनिज का समृद्ध स्त्रोत। करोटीनौएड्स का समृद्ध स्त्रोत। जड़े बीटा कैरोटीन का समृद्ध स्त्रोत।
सरसों सब्जी हेतु	पूसा साग 1	विटामिन सी एवं कैरोटीन का समृद्ध स्त्रोत
सरसों तेल हेतु	पूसा सरसों 29 (एल ई टी 36) पूसा सरसों 21 (एल ई एस 127) पूसा करिश्मा (एल ई एस 39) पूसा सरसों 30(एल ई एस 43)	बहुत कम ईरुसिक अम्ल। ईरुसिक अम्ल <2%। ईरुसिक अम्ल <2% 0% ईरुसिक अम्ल।
आम	पूसा श्रेस्ठ	विटामिन सी एवं कैरोटीन का समृद्ध स्त्रोत।
	पूसा प्रतिभा	विटामिन सी एवं कैरोटीन का समृद्ध स्त्रोत।
	पूसा लालिमा	विटामिन सी एवं कैरोटीन का समृद्ध स्त्रोत।
	पूसा पीताम्बर	विटामिन सी एवं कैरोटीन का समृद्ध स्त्रोत।
अंगूर	पूसा नवरंग	प्रति ऑक्सीकारक का समृद्ध स्त्रोत।

स्त्रोत: भा.कृ.अनु.स. (2014), उच्च उत्पादकता एवं लाभ हेतु उन्नत कृषि प्रौद्योगिकियां, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली।

हमारे देश में अधिकतर लोग शाकाहारी भोजन करते हैं जिससे उनकी पोषण सुरक्षा में विभिन्न फसलों की अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका होती है। विभिन्न तरह के पोषक तत्वों से भरपूर अनाज, फल व सब्जियों के उपभोग में वृद्धि से कम कीमत में ग्रामीण क्षेत्र के लोगों की पोषण सुरक्षा की जा सकती है। हमारे देश में कुपोषण व कम पोषण से होने वाली बीमारियों की वजह से सब्जियों का काफी महत्व है। सब्जियां हमारे भोजन को आसानी से पचने योग्य, संतुलित तथा पोषणयुक्त बनाती हैं। कुपोषण को सुधारने के लिए आहार विशेषज्ञ एक व्यक्ति को प्रतिदिन 300 ग्राम सब्जी का उपयोग आवश्यक बताते हैं। सब्जियों में पोषक तत्व जैसे की विटामिन, लवण व स्वास्थ्य जैवरसायन प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं (सारणी 4 एवं 5) जिनके कारण इनका खाद्य, स्वास्थ्य व पोषण सुरक्षा में विशेष महत्व है। दैनिक आहार में सब्जियों का अधिक मात्रा में उपभोग करने से स्वास्थ्य बेहतर होता है। सब्जियों की खेती से हम सीमित भूमि पर कम समय में अधिक उत्पादन ले सकते हैं जिससे कृषि पद्धति की उत्पादकता में काफी वृद्धि होती है तथा किसानों को अधिक लाभ मिलता है। बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए दैनिक भोजन मे सब्जियों की पर्याप्त मात्रा उपलब्ध कराने के लिए उत्पादन व उत्पादकता वृद्धि अति आवश्यक है। इसके लिए उन्नत किस्मों व संकरों एवं उत्पादन तकनीकों का उपयुक्त वातावरण के अनुसार उचित उपयोग आवश्यक है।

सारणी 4: विटामिन व लवणों से भरपूर सब्जी फसलें

पोषक तत्व	**सब्जी फसलें**
विटामिन ए	गाजर, पालक, चैलाई, करी पत्ता, धनिया पत्ता, केला।
विटामिन बी	मटर, मिर्च, लहसुन, धनिया पत्ता।
विटामिन सी	शिमला मिर्च, बंदगोभी, करेला, चैलाई, पालक, खरबूजा, टमाटर।
केल्शियम	चैलाई, पालक, मैथी, प्याज, ब्रोकोली, केल।
लौह तत्व	चैलाई, पालक, मैथी।
आयोडीन	भिंडी, प्याज, एसपेरागस।

सब्जी फसलों के औषधीय गुणों के कारण हाल के दिनों में पोषण औषधि का महत्व हमारे आहार में तथा दवाई उद्योग में बढ़ता जा रहा है।

सारिणी 5: पोषक तत्वों से भरपूर सब्जी द्वारा पोषण सुरक्षा

सब्जी फसल	**यौगिक**	**उपयोग**
बीन्स	फलेवोनोएडस (सेपोनिनस)	कैंसररोधी, कोलेस्ट्रोल कम करने में उपयोगी।
ब्रोकोली, फूलगोभी, पत्तागोभी, केल इत्यादि	इन्डोल्स, आइसोथायोसाइनेट, ग्लूकोसाइनोलेट, सींगिरीन	कैंसररोधी, पक्षाघातरोधी।

गाजर	बीटा-केरोटीन (संतरी), एन्थो साइनिन (काली/बैंगनी), लिंगनीन, केरोटीनॉयडस, फिनोलिक अम्ल, कलोरोजेनिक अम्ल, मोनो एंड सिसक्वीनटेरपेन्स	प्रतिऑक्सीकारक
टमाटर	लाईकोपिन, विटामिन सी, फलेवोनॉयडस, क्वासरिसीटीन, केरोटीन	कैंसररोधी, संक्रमण रोकने में उपयोगी।
प्याज व लहसुन	क्वांरिसीटीन, माईरिसीटीन, एस-एलाइल सीसटीनए एस-एलिलमेरसप्टोएसीसटीन, सल्फर कम्पासउंडस, क्वासरिसीटीन, माईरिसीटीन	कैंसररोधी, पक्षाघातरोधी, प्रतिरक्षा प्रणाली का बढ़ाती है।
तरबूज	लाईकोपिन, एल-सिर्टूलिन	कैंसररोधी, प्रतिरक्षा प्रणाली का बढ़ाती है।
करेला	मोमोरडिसीन और चेरेन्टिरन	मधुमेह नाशक, रक्त शोधक, उच्च रक्तचाप रोधी
मूली	आइसोथायोसाईनेट, सिंगिरीन	पीलिया, लीवर संक्रमण, बवासीर रोधी।
मिर्च (पेपर्स)	फलेवोनोएडस	गठियारोधी।
चुकंदर	बेटालेयनस (बीटा-साइनिनस और बीटा-जेन्थियनस)	कैंसररोधी, पक्षाघातरोधी, प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ाती है।

पोषण विशेषज्ञों के अनुसार संतुलित आहार के लिए वयस्क महिला व पुरुष को प्रतिदिन 100 ग्राम फल का सेवन अवश्य करना चाहिए। इन्हें रक्षात्मक खाद्य पदार्थों की श्रेणी में रखा गया है क्योंकि इनके लगातार उपभोग से कई जटिल बीमारियों से बचा जा सकता है। मनुष्य का उचित पोषण केवल भोजन की अधिक मात्रा पर ही निर्भर नहीं करता बल्कि इसके लिए भोजन में विभिन्न पोषक तत्वों की विविधता अधिक आवश्यक है। महिलाओं व बच्चों में मुख्यतः कुपोषण को दूर करने के लिए अनाज के अलावा विभिन्न किस्मों के फलों का सेवन भी आवश्यक है। इन समस्याओं से बचने के लिए लाभकारी विभिन्न उपायों में से एक है कि घरेलू स्तर पर ही पारिवारिक जरूरत हेतु फल व सब्जियों का उत्पादन किया जाए व घर में ही फलों व सब्जियों का परिरक्षण कर मुरब्बा, जैम, जूस, चटनी, सॉस, कैंडी, आचार आदि उत्पाद बनाकर अधिक लाभ भी कमाया जा सकता है। फलों में विभिन्न पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते हैं जिनके कारण इनका खाद्य, स्वास्थ्य व पोषण सुरक्षा में विशेष महत्व है।

फल प्राकृतिक रूप से रंगीन होने के साथ स्वादिष्ट व स्वास्थ्यवर्धक भी होते हैं, इनमें कई महत्वपूर्ण सूक्ष्म पोषक तत्वों का भंडार है। इनके अलग-अलग रंग विभिन्न वर्णकों के कारण होते हैं जो भिन्न-भिन्न योगिकों के निर्माण के लिए उत्तरदायी हैं। हरे रंग के फलों में कई फाइटोकैमिकल्स पाए जाते है (सारणी 6)। लाल रंग के फल बीटा कैरोटिन और विटामिन-सी के अच्छे स्रोत होते हैं। पीले रंग वाले फलों से प्रति ऑक्सीकारक, बीटा कैरोटीन व विटामिन-सी प्राप्त होता है। सफेद रंग की सब्जियों में एलीसिन फाइटोकैमिकल होता है। काले रंग की फल सब्जियां फाइटोकैमिकल्स व लौह तत्व के महत्वपूर्ण स्रोत होते हैं। प्रत्येक भिन्न-भिन्न रंग के फलों में अद्‌वितीय तत्व होते हैं जो स्वास्थ्य के लिए लाभकारी हैं।

सारिणी 6: पोषक तत्वों से भरपूर फलों द्वारा पोषण सुरक्षा

रंग	फल	यौगिक	उपयोग
नीला/बैंगनी	जामुन, प्लम	एंथोसायनिन, फाइटोकैमिकल्स	प्रति ऑक्सीकारक गुण होने के कारण कैंसर कोशिकाओं को बनने से रोकता है, स्मृति विस्मरण व हृदय रोग से बचाता है।
लाल	सेब, चैरी, अनार	लाइकोपीन, एंथोसायनिन, फाइटोकैमिकल्स	स्मृति विस्मरण से बचाता है। कैंसर के साथ-साथ संक्रमण से बचाव व हृदय रोग में भी उपयोगी है।
नारंगी पीला	खुबानी, संतरा, पपीता, नींबू	कैरोटीन, विटामिन सी, पोटैशियम	आंखों को स्वस्थ बनाता है व त्वचा को निखारता है। शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है।
हरा	अंगूर, कीवी, हरे सेब	फॉलिक अम्ल, विटामिन-ए, सी, के, पोटैशियम	आंखों की दृष्टि को बेहतर करता है, स्वस्थ त्वचा व घाव भरने में सहायता करता है।
नीला/बैंगनी	जामुन, प्लम	एंथोसायनिन, फाइटोकैमिकल्स	प्रति ऑक्सीकारक गुण होने के कारण कैंसर कोशिकाओं को बनने से रोकता है, स्मृति विस्मरण व हृदय रोग से बचाता है।
सफेद	केला, लीची, अमरूद	एंथोजैंथिन, एलिसिन, पोटैशियम	उच्च कोलेस्ट्रोल से बचाव में उपयोगी, रक्तचाप व मधुमेह को नियंत्रण करने में प्रभावी है।

पोषण वाटिका में विभिन्न प्रकार के सब्जी फसलें उगाए जा सकते हैं जिनमें कुछ विशिष्ट प्रकार के पोषक तत्व पाए जाते हैं। प्याज, लहसुन में सल्फर पाया जाता है, जो कई जीर्ण रोगों की रोकथाम में लाभकारी होते हैं। प्याज का सेवन करने से शरीर में कैल्शियम के अवशोषण को बढ़ावा मिलता है जो कि ऑस्टियोपोरोसिस (हड्डी कमजोर होने वाली बीमारी) की रोकथाम के लिए उपयोगी है। प्याज व लहसुन कैल्शियम, मैंग्नीज व पोटैशियम के भी उत्तम स्रोत हैं। आलू में कार्बोहाइड्रेट के साथ-साथ उच्च गुणवत्तायुक्त प्रोटीन होती है क्योंकि ये आवश्यक अमीनो अम्ल (लाइसिन) में समृद्ध होते हैं। इनमें सीमित मात्रा में विटामिन सी भी पाई जाती है। मिर्च में मौजूद फाइटोकैमिकल्स गैस्ट्रिक अल्सर (पेट का अल्सर), दातों के दर्द व गठिया के इलाज में बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। बैंगन उच्च रक्तचाप व कोलेस्ट्रोल के इलाज में प्रभावी होता है। ब्रोकली, गोभी, मूली, आदि मे ग्लूकोसिनोलेट्स पाया जाता है जो फेफड़ों, प्रोस्टेट कैंसर, स्तन कैंसर के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करते हैं। बथुवा, पालक व अन्य हरी सब्जियां लौह तत्व, फोलिक अम्ल व रेशा (फाइबर) जैसे महत्वपूर्ण पोषक तत्वों में समृद्ध हैं। सब्जियों में विषाणु, फफूंदी एवं एलर्जी प्रतिरोधी जैसे कई औषधीय गुण होते हैं। विभिन्न शोधों के अनुसार प्रतिदिन व अधिकतर फलों व सब्जियों का आहार में सेवन करने से विभिन्न प्रकार के कैंसर से बचा जा सकता है। फल भी सूक्ष्म पोषक तत्वों (विटामिन व खनिज) के समृद्ध स्रोत हैं। विभिन्न प्रकार के फल जैसे आम, पपीता, संतरा, अमरूद, अंगूर आदि विटामिन ए,बी,सी, के अतिरिक्त कैल्शियम, मैंग्नीशियम, लौह तत्व, पोटैशियमयुक्त होते हैं। नींबू वर्गीय फल विटामिन सी के उच्च स्रोत हैं। खुबानी व आड़ू विटामिन ए एवं केरोटिनोडाइसयुक्त होते हैं। कैरोटीन हमारे शरीर के प्रतिरक्षा तंत्र (इम्यून सिस्टम) को मजबूत करता है और

त्वचा संबंधी समस्याओं में भी प्रभावकारी सिद्ध होता है। पोषण वाटिका के माध्यम से भोजन के लिए ताजी एवं रसायनमुक्त सब्जियां वर्ष भर उपलब्ध को सकेगी। इनके बेहतर सुरक्षित घरेलू खपत से पोषक तत्वों की कमी से होने वाले रोग जैसे एनीमिया, घेंघा, रतौंधी आदि से बचने में सहायता मिलेगी। पोषण वाटिकाओं में पारंपरिक व पोषण तत्वों से भरपूर फल व सब्जी फसलों का वैज्ञानिक विधि से उत्पादन कर महिलाएं अपने परिवार की पोषण सुरक्षा का ख्याल रख सकती हैं तथा शरीर को निरोग रखने, ऊर्जा, वृद्धि करने व आवश्यक तत्वों की पूर्ति से पोषण व संतुलित आहार की उपलब्धता सुनिश्चित कर सकती हैं।

फूल चुन कर एकत्र करने के लिए मत ठहरो। आगे बढ़े चलो, तुम्हारे पथ में फूल निरंतर खिलते रहेंगे।

- रवींद्रनाथ ठाकुर

स्पिरुलिनाः प्रोटीन एवं पोषण का वैकल्पिक स्रोत

शालिनी गौड़ रूद्रा[1], दीपक कुमार कोली[2], सुनील पब्बी[2], ज्ञानेंद्र सिंह[1]

[1]खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग [2]सूक्ष्म जीव विज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

शैवालों का उपयोग मानवीय भोजन प्रणाली में कुछ नया नहीं है। स्पेन के मैक्सिको पर आधिपत्य के समय में स्पिरुलिना प्लेटैन्सिस नामक शैवाल का भोजन में उपयोग के प्रमाण पाए गए हैं। अफ्रीका में भी इस प्रकार के तथ्य उजागर हुए हैं। बहुत कम अनुपात में ही इसे भोजन में मिलाने पर पारंपरिक खुराक की पौष्टिकता कई गुणा बढ़ जाती है और इसके गुण आसानी से शरीर में अवशोषित हो जाते हैं।

स्पिरुलिना विश्व के 22 राष्ट्रों में उगाया जाता है और 77 से अधिक देशों में इसका सेवन किया जाता है। विश्व में जनसंख्या के बढ़ते स्तर और भोजन के स्रोतों के सिकुड़ने की स्थिति में स्पिरुलिना भरपूर प्रोटीन एवं अन्य पौष्टिक गुणों का अच्छा विकल्प है।

स्पिरुलिना की उपयोगिता

स्पिरुलिना को भोजन के सांद्र रूप में सेवन किया जा सकता है क्योंकि यह प्रोटीन (60-70 प्रतिशत), विटामिन, आवश्यक वसा अम्ल, प्रतिऑक्सीकारकों एवं खनिज लवणों से भरपूर है। अन्य प्रोटीन के स्रोतों जैसे मांस, गेहूं, चावल इत्यादि की तुलना में इसके प्रति किलो प्रोटीन भार उत्पन्न करने के दौरान कार्बनडाईऑक्साइड एवं पानी का उपयोग बहुत कम होता है। यानि की अन्य खाद्य उत्पादों की अपेक्षा स्पिरुलिना का कार्बन एवं जल फुटप्रिंट काफी कम है। बदलते पर्यावरण की दृष्टि से यह बहुत महत्वपूर्ण पूंजी है। तालिका 1 में स्पिरुलिना के पोषक तत्वों का मान प्रस्तुत किया गया है।

तालिका 1 : (स्पिरुलिना के पोषक तत्वों का मान)

संयोजक	मात्रा (सूखे तौर पर)	दैनिक आवश्यकता
प्रोटीन	50-70%	46.56 ग्राम
वसा	5-7%	20-35% (कुल कैलोरी का)
ओमेगा-6-वसा अम्ल		
गामा लिनानेलिक अम्ल	40.1% (कुल वसा अम्ल का)	
4% सूखे तौर पर)	12-17 ग्राम	
शर्करा	15-25%	225-325 ग्राम
विटामिन ए	80-170 मिग्रा./किग्रा.	0.7-0.9 मिग्रा.
विटामिन ई	12 मिग्रा./किग्रा.	15 मिग्रा.
विटामिन बी 1	34-50 मिग्रा./किग्रा.	1.5 मिग्रा.

विटामिन बी 2	30-46 मिग्रा./किग्रा.	1.8 मिग्रा
विटामिन बी 6	5-8 मिग्रा./किग्रा.	2 0 मिग्रा
विटामिन बी 12	1.5-2.0 मिग्रा./किग्रा.	0.003 मिग्रा
नियासिन	130 मिग्रा./किग्रा.	20 मिग्रा
फोलेट	0.50 मिग्रा./किग्रा.	0.4 मिग्रा
पेंटोथिनेट	4.6-2.5 मिग्रा./किग्रा.	6-10 मिग्रा
बायोटिन	0.05 मिग्रा./किग्रा.	0.1-0.3 मिग्रा
कैल्शियम	1300-14000 मिग्रा./किग्रा.	1200 मिग्रा
फॉस्फोरस	6700-9000 मिग्रा./किग्रा.	1000 मिग्रा
मेग्नेसियम	2000-2900 मिग्रा./किग्रा.	250-300 मिग्रा
लौह	580-1800 मिग्रा./किग्रा.	18-20 मिग्रा
जिंक	21-40 मिग्रा./किग्रा.	15 मिग्रा
सोडियम	4500 मिग्रा./किग्रा.	500 मिग्रा
पौटाशियम	6400-15400 मिग्रा./किग्रा.	3500 मिग्रा

जैसा कि उपर्युक्त तालिका से ज्ञात हो गया है कि स्पिरुलिना मानव की दैनिक पोषण आवश्यकताओं को अधिकतम 10 ग्राम/दिन खुराक से ही पूरा कर देता है। आइए अब संक्षेप में हम इसके पोषक तत्वों की विशेषताओं पर नज़र डालते हैं।

आकृति- सूक्ष्मदर्शी में स्पिरुलिना के तंतुनुमा स्वरूप का चित्रण (नील हरित शैवाल संरक्षण एवं उपयोग केंद्र, सूक्ष्म जीव विज्ञान संभाग, भा.कृ.अनु.प.-भा.कृ.अनु.सं., नई दिल्ली)

स्पिरुलिना में उपस्थित मुख्य पोषक तत्व एवं लाभ

प्रोटीनः स्पिरुलिना में प्रोटीन सूखे भार के आधार पर 50-70 प्रतिशत होती है। यह मात्रा अन्य किसी शाकीय भोजन की तुलना में अत्यधिक है क्योंकि सोयाबीन में भी 35 प्रतिशत प्रोटीन ही होती है। प्रोटीन गुणवत्ता तीन मानकों पर अधिकतर मापी जाती है। पहला, इसके घटक अमीनो अम्लों में शरीर के लिए आवश्यक अमीनों अम्लों की तुलना में विविधता एवं मात्रा। इसे रासायनिक अंक या कैमिकल स्कोर के रूप में जाना जाता है। दूसरा, प्रोटीन के रूप में केवल इसका सेवन करें तो शरीर के भार में बढ़त। यह प्रोटीन दक्षता अनुपात के रूप में जाना जाता है। तीसरा, शरीर में प्रोटीन द्वारा उत्पन्न नाइट्रोजन के सामंजस्य होने का मानक है। यदि प्रोटीन का सेवन करें तो कितनी प्रोटीन शरीर में अवशोषित हो पाएगी और कितनी मल-मूत्र के रूप में बाहर आ जाएगी, यह प्रोटीन की पाच्यता को दर्शाता है। इस प्रक्रिया को कुल प्रोटीन अवशोषण मानक या अंग्रेजी में नेट प्रोटीन यूटीलाइजेशन कहते हैं। रासायनिक अंक एवं पाच्यता को मिला कर एक अन्य मानक प्रोटीन पाच्यता एवं अमीनो अम्ल अंक (प्रोटीन डाइजैस्टिबिलिटी एवं करैक्टिड अमीनो एसिड स्कोर) भी प्रचलित है (चूंकि प्रोटीन ही भोजन में नाइट्रोजन का प्रमुख स्रोत है)।

स्पिरुलिना प्रोटीन संपूर्ण प्रोटीन है क्योंकि इसमें मानव सेवन के अनुरूप सभी आवश्यक अमीनो अम्ल पाए जाते हैं। अमीनो अम्लों में सबसे निम्न मात्रा में मीथियोनीन एवं सिस्टीन होते हैं परंतु इनकी मात्रा भी अंडे और पनीर की तुलना में 80 प्रतिशत है। अमीनो अम्ल की विविधता होने पर इसका जैविक मान अधिक होना स्वाभाविक है। मीथियोनीन एवं सिस्टीन नामक अमीनो अम्लों के प्रचुर स्रोतों जैसे चावल, गेहूं, तिल, कदन्न के साथ मिलाकर सेवन करने से प्रोटीन की गुणवत्ता और पाच्यता और बढ़ाई जा सकती है। स्पिरुलिना की प्रोटीन दक्षता मान 1.9 है, जबकि मक्का का 1.23, चावल का 2.2 एवं गेहूं का 1.15 है। नाइट्रोजन प्रोटीन अवशोषण/अपशिष्टता मान 53-61 प्रतिशत है जबकि गेहूं के लिए यह मानक अंक 30 प्रतिशत, सोयाबीन का 61 प्रतिशत, दूध का 82 प्रतिशत एवं अंडे का 89 प्रतिशत है।

स्पिरुलिना के माध्यम से प्रोटीन की पाच्यता अधिक होने का एक महत्वपूर्ण कारण यह भी है कि इसकी कोशिकाओं पर सेल्यूलोज का मजबूत ढांचा नहीं होता बल्कि म्यूरीन नामक नाजुक परत/झिल्ली होती है जिससे कोशिकाओं के अंदर के योजकों का शरीर में सम्मिश्रण एवं पचाना आसान हो जाता है।

वसाः स्पिरुलिना में सूखे भार के आधार पर 5.6-11 प्रतिशत वसा होता है। पोषण के दृष्टिकोण से इसमें उपलब्ध गामा लिनोनेलिक अम्ल (जी.एल.ए.) की बहुत महत्ता है क्योंकि ये सूजन एवं रोगों से लड़ने के प्रतंत्र में लाभकारी कार्य करते हैं। स्पिरुलिना की प्लैटैन्सिस किस्म में 4 प्रतिशत तक जी.एल.ए. पाया गया है, जो मूल रूप से रक्त में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा नियंत्रित करता है और त्वचा की रंगत (टोन) को सुधारता है।

कार्बोहाइड्रेटस : सूखे भार के आधार पर स्पिरुलिना में 15-25 प्रतिशत पाए गए हैं। इनमें अधिकतर मात्रा मीसोइनोसिटॉल की है। यह फॉस्फोरस का बहुत अच्छा स्रोत हैं। स्पिरुलिना के कार्बोहाइड्रेट हानिकारक किरणों से डी.एन.ए. को होने वाले नुकसान को भी निष्क्रिय करने में सक्षम है। ऐसा कई चिकित्सा शोधों में भी प्रमाणित हो चुका है।

न्यूक्लीक अम्लः भोजन में न्यूक्लीक अम्ल डी.एन.ए. एवं आर.एन.ए. का स्तर चिकित्सक दृष्टिकोण से बहुत महत्वपूर्ण है। अधिक मात्रा में न्यूक्लीक अम्ल के सेवन से रक्त में यूरिक अम्ल का स्तर बढ़ जाता है और गुर्दे में पथरी, गठिया होने की आशंका बढ़ जाती है। इसलिए यूरिक अम्ल का अधिकतम सेवन 4 ग्राम प्रतिदिन से अधिक नहीं होना चाहिए। स्पिरुलिना की दो मुख्य प्रणाली प्लेंटैन्सिस एवं मैक्सिमा में 4.2-6 प्रतिशत न्यूक्लीक अम्ल होते हैं। यानि कि 80 ग्राम प्रतिदिन सेवन करने पर भोजन में 4 ग्राम यूरिक अम्ल का अधिकतम मान्य स्तर पहुंचेगा। यह मात्रा साधारणतः सेवन मात्रा (10 ग्राम/दिन) से आठ गुणा अधिक है। इसलिए यह भ्रांतिकी स्पिरुलिना के सेवन से गठिया हो सकती है, यह गलत है। इसका समर्थन फ्रांस में किए गए शोध में भी पाया गया है जिसमें मानव के अत्यधिक सेवन (80-90 ग्राम प्रतिदिन) करने पर भी रक्त में यूरिक अम्ल की मात्रा में बढ़त नहीं पाई गई।

विटामिनस

विटामिन ए : स्पिरुलिना में कुल कैरोटीन (मुख्य रंगीन वर्णक) का 80 प्रतिशत बीटा कैरोटीन होता है और शेष फाइकोजैंथिन और क्रिस्टोजैंथिन होता है। 100 ग्रा. सूखे स्पिरुलिना में 70-170 मिलीग्राम बीटा कैरोटीन एवं 10 मिलीग्राम क्रिस्टोजैंथिन है। यह दोनों कैरोटीन आवश्यकतानुसार शरीर में विटामिन ए उत्पन्न कर सकते हैं। 1-2 ग्राम स्पिरुलिना आसानी से दैनिक 'विटामिन ए' की आवश्यकता को पूरा करने में सक्षम है। अच्छी बात यह है कि स्पिरुलिना में 'विटामिन ए' नहीं बल्कि उसके सृजन में सक्षम वर्णक हैं। इसलिए आवश्यकता पड़ने पर ही शरीर में 'विटामिन ए' की उत्पत्ति होगी। अधिक मात्रा होने पर कोई नुकसान नहीं पहुंचेगा।

चिकित्सा शोध में स्पिरुलिना की कैरोटीन की बेहतरीन अपशिष्टता दर्ज की गई है। एक शोध में 5000 भारतीय बच्चों (पांच वर्ष से कम) को 1 ग्राम प्रतिदिन स्पिरुलिना पांच महीने तक दिया गया। शोध परीक्षण के अंत में बच्चों में विटामिन ए की कमी से होने वाली बीमारियों में 80 प्रतिशत कमी पाई गई। कैंसर और एड्स में भी इसके सार की कार्यात्मकता सिद्ध हुई है।

विटामिन ई : स्पिरुलिना में 5-19 मिलीग्राम/100 ग्राम विटामिन ई पाई जाती है। यह हमारी दैनिक आवश्यकता (12 मिलीग्राम) को पूरा करने के लिए अच्छा विकल्प है।

विटामिन बी : विटामिन बी के कई प्रकार होते हैं जैसे बी-1, बी-2, बी-6 इत्यादि। स्पिरुलिना विटामिन बी के एक अवयव के लिए अति विशेष है। वह है विटामिन बी-12 यानि कि सायनोकोबालामीन। यह विटामिन किसी भी शाकाहारी भोजन में नहीं मिलता और इसकी कमी प्रायः शाकाहारी जन समुदाय में पाई जाती है। विटामिन बी-12 की कमी से होने वाले पर्नीशियस एनीमिया होता है। इस विटामिन के मुख्य स्रोत कच्चा जिगर (यकृत) से भी चार गुणा अधिक मात्रा स्पिरुलिना में पाई जाती है।

खनिज लवण : लौह की अधिक मात्रा स्पिरुलिना का मुख्य आकर्षण है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में यह बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि हमारे देश में 55 प्रतिशत से अधिक बच्चे और महिलाएं रक्त में लौह की कमी यानि एनीमिया से ग्रसित हैं। इसके अलावा कैल्शियम, फॉस्फोरस एवं मैग्नीशियम की मात्रा भी दूध के समकक्ष है।

वैज्ञानिक तरीके से उगाए एवं सुखाए जाने वाली स्पिरुलिना में अन्य सूक्ष्म जीवाणु मान अधिक नहीं होता और इसके सेवन से कोई भी हानि नहीं होती। बल्कि एनीमिया, पर्नीशियस एनीमिया, विटामिन ए की कमी, प्रोटीन-उर्जा विकार, कैंसर एवं हानिकारक किरणों से बचाव एवं अन्य रोगों से लड़ने की क्षमता को बढ़ाने के लिए स्पिरुलिना का सेवन सुझावित है।

मुठ्ठी भर संकल्पवान लोग जिनकी अपने लक्ष्य में दृढ़ आस्था है, इतिहास की धारा को बदल सकते हैं।

- महात्मा गांधी

पर्यावरण संरक्षण में एवं किसानों की सुरक्षा के लिए पीड़कनाशियों का सुरक्षित प्रयोग

डॉ. रेनू सिंह[1] एवं रणबीर सिंह[2]

पर्यावरण विज्ञान एवं जलवायु समुत्थानशील कृषि केंद्र एवं फोसू,
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

भारत में वैश्विक जनसंख्या के कारण, भोजन की मांग लगातार बढ़ रही है जिसके लिए फसल उत्पादकता को बढ़ाने की आवश्यकता है, इसलिए, किसानों ने फसल उत्पादकता में वृद्धि के लिए अपने खेतों को खरपतवारों, कीटों एवं बीमारियों से बचाने के लिए बड़ी मात्रा में उर्वरकों एवं पीड़कनाशियों का प्रयोग कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त फसल उगाने से पहले खेत से लेकर भंडारण तक विभिन्न प्रकार के पीड़कनाशियों का उपयोग करते हैं। वर्तमान में, भारत संयुक्त राज्य अमेरिका, जापान एवं चीन के बाद पीड़कनाशी का चौथा सबसे बड़ा वैश्विक उत्पादक है। उत्तम फसल उत्पादन के लिए अन्य कृषि कार्यों की अपेक्षा फसलों की कीटों, रोगों एवं खरपतवारों इत्यादि से रक्षा करना अधिक आवश्यक है। इनके द्वारा होने वाली हानि का प्रभाव केवल आर्थिक ही नहीं है बल्कि अनेक पर्यावरण, सामाजिक व राजनैतिक समस्याएं भी प्रत्यक्ष रूप से इसके कारण जन्म लेती हैं अतः फसलों की सुरक्षा करना अति आवश्यक है ताकि हमारा देश अन्न पूर्ति में आत्मनिर्भर बन सके।

शाकनाशी, कवकनाशी एवं कीटनाशी तीनों को एक साथ पीड़कनाशी के नाम से जाना जाता है। पीड़कनाशी वे पदार्थ हैं जो खेतों में कीटों को मारने के लिए उपयोग किए जाते हैं तथा फसलोत्पादन कम करने वाले खरपतवारों को भी नष्ट करते हैं। ये लक्षित प्रणलियों को अवरुद्ध करके या एंजाइम, न्यूरोट्रांसमीटर और हार्मोन को रोककर कीटों को मार सकते हैं। पीड़कनाशी कृषि में उपयोग होते हैं क्योंकि वे फसलों की रक्षा करते हैं, भोजन और सामग्री को सुरक्षित करते हैं तथा फसलों में अनेक प्रकार की बीमारियों को रोकते हैं। लेकिन पीड़कनाशी प्रकृति में जहरीले होते है और मानव स्वास्थ्य एवं पर्यावरण पर गंभीर प्रभाव डालते हैं। विश्व में उपयोग के आधार पर पीड़कनाशी का क्रम शाकनाशी, कीटनाशी, कवकनाशी, तथा भारत में कीटनाशी, कवकनाशी, शाकनाशी है।

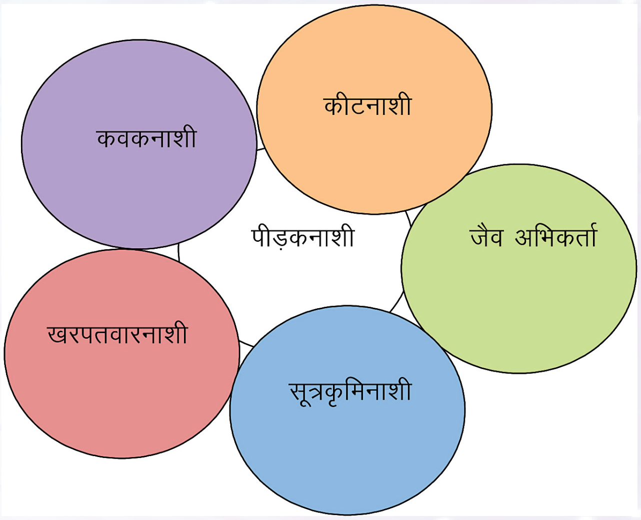

चित्रः पीड़कनाशी के प्रकार

पीड़कनाशी (कीटनाशी, खरपतवारनाशी, सूत्रकृमिनाशी एवं कवकनाशी)

कृषि में पीड़कनाशियों का प्रयोग

पेस्टीसाइड एसोसियेशन ऑफ इंडिया के अनुसार कीट-पंतगों, बीमारियों व खरपतवारों से फसलों के कुल उत्पादन का 18 प्रतिशत हिस्सा नष्ट हो जाता है। फसलों की सुरक्षा हेतु अनेक प्रकार के पीड़कनाशियों का उपयोग किया जाता है। ये पीड़कनाशी जहरीले तथा मूल्यावान होते हैं जिनके प्रयोग की जानकारी न होने के कारण इनसे नुकसान भी हो सकता है। इसलिए कुछ बातों का ध्यान रखने के साथ-साथ इनके प्रयोग के समय क्या-क्या सावधानियां रखनी चाहिए, इसकी जानकारी किसानों को होनी चाहिए तथा उन पर लिखे हुए निर्देशों का पालन ठीक ढंग से किया जाए जिसमें किसी प्रकार की लापरवाही

न बरती जाए। क्योंकि थोड़ी सी भी असावधानी होने से बहुत बड़ा नुकसान हो सकता है। पीड़कनाशी को उनकी क्षमता (सारणी1) के अनुसार कैंसर, अंतःस्रावी/हार्मोन को बाधित और इम्युनो विषाक्त के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है।

सारणी 1. पीड़कनाशियों की क्षमता के अनुसार वर्गीकरण

पीड़कनाशी की श्रेणी	भारत में पीड़कनाशियों की संख्या
कैंसर	56
एंडोक्राइन/हार्मोन को बाधित करने वाला प्रभाव	81
इम्यूनो-टॉक्सिक प्रभाव	38

सारणी 2. विभिन्न मीडिया में पीड़कनाशियों का वर्गीकरण

वायु	पीड़कनाशी से दूषित वायु प्रतिक्रियाशील कण छिड़काव के दौरान सम्मलित एरोसोल पीड़कनाशी के वाष्पशील अवशेष से वाष्प
मृदा	हस्त-मुख व्यवहार भूमि पर रेंगना सीधा संपर्क
जल	पीने के पानी में पीड़कनाशी: नल व कुएं
आहार	खाद्य फसलों पर छिड़काव: फल, सब्जियों, अनाज
पशुओं एवं उत्पादों में बायोएक्युमुलेशन	मछली, मीट, अंडे व डेरी

किसानों के बीच महत्वपूर्ण मुद्दें:

- उचित उपयोग दर
- रख-रखाव
- कीटनाशकों का निपटान जो स्वास्थ्य और पारिस्थितिकी तंत्र पर खतरनाक प्रभाव डालता है।

पीड़कनाशिओं के प्रयोग से क्षेत्र में जोखिम को बढ़ाने के कारण

- पीड़कनाशी का आपस में मिश्रित व लोड करने से।
- छिड़काव अनुप्रयोग से।
- छिड़काव उपकरणों की सफाई न करने से।

पीड़कनाशी लेबल

केंद्रीय कीटनाशी बोर्ड एवं पंजीकरण समिति ने न्यूनतम खतरनाक एवं पर्यावरण प्रदूषण सुनिश्चित करने के लिए कड़े नियमों का पालन किया, जैसा कि कीटनाशक अधिनियम, 1968 और कीटनाशक नियमों, 1971 में वर्णित है। कीटनाशक स्तर और पत्रक के पंजीकरण से पहले पंजीकरण समिति द्वारा अनुमोदित होना अनिवार्य है। कीटनाशकों के अंतरतम कंटेनर आवरण जिसमें कंटेनर पैक किया गया हो, के ऊपर निम्नलिखत विवरण या तो मुद्रित होने चाहिए या अमिट स्याही में लिखे जाने चाहिए।

1. उत्पाद का नाम (ब्रांड नाम, व्यापार एवं सामान्य नाम)।
2. निर्माता का नाम एवं पता।
3. कीटनाशक की पंजीकरण संख्या।
4. सक्रिय संघटक या सहायक (प्रतिशत)।
5. शुद्ध सामग्री (मीट्रिक प्रणाली में पूर्ण)।

6. बैच संख्या।
7. निर्माण की तिथि और समाप्ति की तारीख।
8. उत्पाद का उपयोग।
9. चेतावनी, चेतावनी प्रतीक और संकेत शब्द या चित्रलेख।
10. वर्ग भाग में विषाक्तता की जानकारी।
11. सृजन के बारे में जानकारी।
12. मारक कथन।

पीड़कनाशी पैकेट पर आमतौर पर प्रयोग किए जाने वाले तथ्य

कीटनाशकों के साथ उपलब्ध पत्रक में तीन या अधिक भाषाओं, मुख्यतः अंग्रेजी, हिंदी तथा एक या दो स्थानीय भाषा में जानकारी होनी चाहिए।

पीड़कनाशी के साथ उपलब्ध पत्रक से जानकारी का पालन किया जाना चाहिए

- उपयोग के लिए उत्पाद एवं दिशा का उद्देश्य
- भंडारण एवं निपटान।
- मानव, जानवरों एवं वन्य जीवन के लिए रसायनों की विषाक्तता।
- जहर के लक्षण, उपयुक्त सुरक्षा उपाय और आपातकालीन प्राथमिक चिकित्सा उपचार सहित चेतावनी।

पीड़कनाशी अनुप्रयोग मे सावधानियां

- लेबल में कोई भी अनुचित दावा नहीं होना चाहिए जैसे कि सुरक्षित, गैर-जहरीला, गैर-घायल या हानिरहित।
- कीटनाशक को बिना पैकेजिंग के नहीं बेचा जा सकता है।
- केवल पंजीकृत विक्रेता ही पीड़कनाशी उत्पाद बेच सकता है।

पीड़कनाशी कंटेनरों का निदान

पीड़कनाशी कंटेनर को उत्पाद पर्याप्त सुरक्षा प्रदान करने के लिए टिकाऊ होना चाहिए और साथ ही उपयोग के बाद निपटान के लिए आसान होना चाहिए। इस संदर्भ से 99.99 प्रतिशत पीड़कनाशी को हटाने के लिए दबाव कुल्ला दृष्टिकोण का उपयोग किया जाता है।

अनुप्रयोग उपकरण का परिशोधन

यदि स्प्रेयर उपयोग के तुरंत बाद धोया नही जाता है, तोनोजल अवरोधक का उपयोग किया जा सकता है। उपयोग किए गए पीड़कनाशी के प्रकार के अनुसार स्प्रेयर को धोने के लिए विशिष्ट अभिकर्मकों का उपयोग करें:

1. ऑर्गनोफॉस्फोरस एवं कार्बामेट पीड़कनाशियों के लिए, स्प्रेयर को 100 ग्राम वांशिंग सोडा, 20 ग्राम डिटजेंट पाउडर और 10 ग्राम पानी में 50 ग्राम ब्लीचिंग पाउडर के मिश्रण से धोना चाहिए।
2. ऑर्गनोफॉस्फोरस पीड़कनाशी के लिए, उपरोक्त दृष्टिकोण को अपनाया जाना चाहिए, ब्लीचिंग पाउडर के अतिरिक्त अमोनिया हाइड्रॉक्साइड का उपयोग करें।
3. तेल में घुलनशील यौगिकों के लिए, 500 मिली/लीटर मिट्टी के तेल से धोएं, इसके बाद कुछ डिटर्जेंट से और पानी से धोएं।

क्या न करे

- निर्धारित मात्रा से अधिक पीड़कनाशी का प्रयोग न करें।
- सीधे शरीर के संपर्क में आने से, सांस लेने से बचें।
- नंगे हाथों से और बिना सुरक्षात्मक कपड़ों के साथ न पीड़कनाशी को मिलाएं।
- मृदा में दबा देना।
- टपका हुआ या दोषपूर्ण स्प्रे उपकरणों का उपयोग न करें।
- उन स्थानों पर प्रसरण बंद करना जहां वे पीने के पानी को दूषित कर सकते हैं।
- नालियों, आस-पास के जल निकासी, स्टीम आदि में मिश्रण करना या लगाना या प्रसरण करना।

पीड़कनाशक के लिए श्रेणी एवं चेतावनी चित्रक संकेत

श्रेणी	एल डी50 (मौखिक)मि.ग्रा./कि.ग्रा.	चित्रलेखन और चेतावनी शब्द
बाहय विषाक्त	1-50	1. बच्चों की पहुंच से दूर रखें।
		2. विषाक्ता के लक्षण दिखाई देते है, तो डॉक्टर को बुलाएं।
अत्यधिक विषाक्त	51-500	1. बच्चों की पहुंच से दूर रखें।
मध्यम विषाक्त	501-5000	1. बच्चों की पहुंच से दूर रखें।
थोड़ा विषाक्त	>5000	1. बच्चों की पहुंच से दूर रखें।

- पीड़कनाशी कंटेनरों का पुनः उपयोग।
- एक से अधिक मौसम के लिए थोक में न खरीदें।
- अनुप्रयोग करते समय धूम्रपान न करें या खाएं।
- वर्षा से पहले और वायु के विपरीत दिशा में छिड़काव न करें।
- लोग ताजे उपचारित क्षेत्र में न पहुंचें।
- भंडारण के लिए पीड़कनाशी को अन्य कंटेनरों में स्थानांतरित न करें।
- बच्चों, भोजन या पशु चारा के पास भंडारण न करे।
- गैर पंजीकृत या गैर अनुशंसित/प्रतिबंधित या समाप्त पीड़कनाशी का उपयोग।

भारत में विभिन्न प्रकार के पीड़कनाशी यथा कीटनाशी, शाकनाशी, कवकनाशी तथा अन्य रसायनों का उपयोग किया जाता है। अधिकांश पीड़कनाशी प्रकृति में जहरीले होते हैं और वे पर्यावरण में भी जमा हो सकते है, जो किसानों के स्वास्थ्य पर एवं पारिस्थितिकी तंत्र पर खतरनाक प्रभाव डालते है। इसलिए किसानों को पीड़कनाशी प्रयोग की उचित मात्रा, हैंडलिंग एवं निपटान के बारे में संपूर्ण जानकारी होनी चाहिए। पीड़कनाशी के खेत में सुरक्षित अनुप्रयोग के तीन आधारभूत कदम हैं, सबसे पहले, किसान पीड़कनाशी उत्पाद को मिलाते हैं और लोड करते हैं, दूसरा छिड़काव हेतु अनुप्रयोग तथा तीसरा छिड़काव उपकरण की सफाई। इनमें मिक्सिंग एवं लोडिगं पीड़कनाशी जोखिम की अधिकतम तीव्रता के साथ युग्मित कार्य हैं।

अध्यापक राष्ट्र की संस्कृति के चतुर माली होते हैं। वे संस्कारों की जड़ों में खाद देते हैं और अपने श्रम से उन्हें सींच-सींच कर महाप्राण शक्तियां बनाते हैं।

- महर्षि अरविंद

रोजगारोन्मुखी कृषि के नए आयाम

रणबीर सिंह

फार्म संचालन सेवा इकाई

भा.कृ.अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली 110012

विश्व में चीन के बाद भारत दूसरा सबसे अधिक जनसंख्या वाला देश है। कृषि, भारतीय अर्थव्यवस्था का मूल आधार है क्योंकि कृषि से खाद्यान्न के अतिरिक्त कृषि आधारित अनेक कुटीर उद्योग-धन्धों हेतु कच्चे माल की प्राप्ति होती है। वर्तमान में देश की जनसंख्या के लिए कुल रोजगार में कृषि क्षेत्र की हिस्सेदारी लगभग 54.6 प्रतिशत है। इसके अतिरिक्त भारत के पास ऐसी विशाल जनशक्ति है जो अकुशल/अर्धकुशल है, इन्हें उपयुक्त रोजगार उपलब्ध कराना अपने आप में बड़ी चुनौती है तथा तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या के कारण दिन प्रतिदिन ग्रामीण युवकों के लिए रोजगार के अवसर कम होते जा रहे हैं। रोजगार की खोज में ही सभी लोग गांव छोड़कर शहर चले जाते हैं। इस पलायन को रोकने के लिए कृषि आधारित कुछ ऐसे उद्योगों एवं व्यवसायों के माध्यम से स्वरोजगार उपलब्ध कराना, समय की आवश्यकता है, जिन्हें ग्रामीण युवक आसानी से अपनाकर अपनी जीविका का साधन बना सकें। वर्तमान में कृषि व्यवसाय में युवाओं एवं किसानों के लिए रोजगार सृजन के अनेक अवसर उपलब्ध हैं, जैसे; फसलोत्पादन, फूल एवं फल उत्पादन, सब्जियों की हाइटैक संरक्षित खेती, औषधीय एवं सगंधीय पौधों की खेती, पशुधन, मधुमक्खी पालन, मछलीपालन, सूअर पालन, बकरी, भेड़, रेशम कीट पालन, मशरूम उत्पादन, केंचुआ पालन तथा खाद्य प्रसंस्करण उद्यम इत्यादि हैं, जिन्हें अपनाकर आजीविका प्राप्त की जा सकती है। कृषि क्षेत्र में युवाओं के रूझान को बढ़ाने, कृषि उद्यमिता को प्रोत्साहित करने और उत्पादकता बढ़ाकर खेती को लाभ का कारोबार बनाने के लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु रोजगारोन्मुखी कृषि के नए आयामों चित्र 1. का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार से है, जैसे:

चित्र 1. रोजगारोन्मुखी कृषि के नए आयाम

1. भारत में मुख्य फसलें यथा कपास, धान, मक्का, गेहूं, मोटे अनाज, दलहनी व तिलहनी फसल, मसाले, औषधियां, सब्जियां एवं फल आदि फसलों का बीज उत्पादन कर आजीविका चला सकते हैं।
2. युवा वर्ग 70-80 दिनों में कम लागत में वर्ष भर संरक्षित खेती द्वारा बे-मौसम खीरा, टमाटर, शिमला मिर्च, लौकी एवं फूलगोभी आदि सब्जियां उगाकर रोजगार प्राप्त कर सकते हैं।
3. फूल यथा गुलाब, चमेली, गुलदाउदी, गेंदा, ग्लैडियोलस, आर्किड, रजनीगंधा, चांदनी, कमल, कनेर एवं फैंसी पौधों को नर्सरी एवं खेतों में तैयार करके जीविकोपार्जन कर सकते हैं।
4. औषधीय व सुगंधीय पौधों की खेती जैसे सदाबहार, तुलसी, आंवला, लेमनग्रास, अश्वगंधा, सर्पगंधा, सिट्रोनेला, खस, मेंथा, एलोवेरा, ब्राहमी, सतावर, रजनीगंधा, पामारोजा एवं चमेली आदि की खेती में भी लाभ के अच्छे अवसर हैं।
5. आधुनिक कृषि में बहुपयोगी कृषि यंत्रों जैसेः ट्रैक्टर,

पावरटिलर, रोटावेटर, सीड एवं फर्टीड्रिल, रीपर, कंबाइन हार्वेस्टर, बहुफसलीय थ्रैशर, खाद्य प्रसंस्करण, फसल सुरक्षा एवं सिंचाई यंत्र आदि को खरीद कर किराए के रूप में रोजगार सृजन के अवसर पैदा कर सकते हैं।

6. कृषि आधारित लघु उद्योग यथा शहद उत्पादन, जूट एवं पटसन के उत्पाद, रबर एवं गोंद की प्राप्ति, रेशम, बांस के खिलौने तैयार करने से रोजगार के अवसर प्राप्त होते हैं।

7. गेहूं से आटा, सूजी, दलिया, चावल से पोहा, बच्चों का खाना, दूध से दही, घी, खोया, दूध पाउडर, पनीर एवं सोयाबीन उत्पाद आदि तैयार करके रोजगार सृजन कर सकते हैं।

8. मशरुम उत्पादन, मुर्गीपालन, मछली उत्पादन, बकरी, भेड़, पशुपालन से जुड़ा डेरी फार्मिंग, रेशम कीट, केंचुआ, सुअर पालन, कृषि-वानिकी एवं मूल्य वर्धित उत्पाद बनाकर रोजगार प्राप्त कर सकते हैं।

आमदनी वृद्धि हेतु कृषि आधारित अन्य आयाम

कृषि का एक पक्ष सामान्य खेतीबाड़ी से जुड़ा है तो दूसरा पक्ष कुछ ऐसे उद्यम से जुड़ा है जहां किसान विविधिकरण का रास्ता अपनाकर अपनी आय बढ़ा सकता है। विविधिकरण के अंतर्गत किसान मधुमक्खी पालन का कार्य कर सकता है, दुग्ध का व्यवसाय कर सकता है और मछली पालन व उसका व्यवसाय कर सकता है। इस प्रकार के उद्योगों में मछली पालन, मुर्गी पालन, रेशम कीट पालन, लाख कीट पालन तथा मधुमक्खी पालन आदि महत्वपूर्ण हैं, जिन पर विस्तार में चर्चा करना आवश्यक है।

1. मधुमक्खी एवं पालन मधुमक्खी पालन खादीग्राम उद्योग एक लघु व्यवसाय है जिससे शहद एवं मोम प्राप्त होता है। यह ग्रामीण क्षेत्रों के विकास का एवं आय का स्रोत है। उद्योग है, जो फसलों के परागण में सहायक है जिससे फसल उत्पादन तो बढ़ता ही है साथ ही साथ मधु का अतिरिक्त लाभ भी प्राप्त होता है। बागवानी फसलों की पैदावार को अधिकाधिक बढ़ाने के लिए मधुमक्खियों का प्रयोग एक महत्वपूर्ण

चित्र 2. मधुमक्खी पालन ही एक ऐसा

साधन के रूप में किया जा सकता है और परागण के द्वारा बागवानी फसलों की पैदावार बढ़ाई जा सकती है। रोजमर्रा के जीवन में शहद के बढ़ते प्रचलन के चलते मुधमक्खी पालन भी किसानों की आमदनी में अहम भूमिका निभा रहा है। अभी भारत विश्व में शहद उत्पादक देशों में 9 वें स्थान पर है। देश में मधुमक्खी पालन की असीम संभाव्य क्षमता है। किसानों के लिए यह एक प्रकार से वरदान है, जो फसल के खेतों में मधुमक्खी पालन करके इनकी पराग सेवाओं से फसलों की उत्पादकता डेढ़ गुना तक बढ़ा सकते हैं। प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना के अंतर्गत ग्रामीण जन प्रशिक्षित होकर अपने उत्पादन और उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार करके अपनी आय में सार्थक वृद्धि कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त मधुमक्खी पालन से फूलों की पैदावार में 30 से 40 प्रतिशत तथा तिलहन-दलहन की पैदावार में लगभग 10 से 20 प्रतिशत की वृद्धि हो जाती है।

2. मुर्गी पालन भारत में पशुधन उत्पादन का हमेशा से ही एक अभिन्न भाग रहा है (चित्र 3.)। मुर्गी पालन क्षेत्र लगभग 30 लाख लोगों को प्रत्यक्ष अथवा प्रत्यक्ष रोजगार उपलब्ध कराने के अतिरिक्त बहुत से भूमिहीन तथा सीमांत किसानों के लिए सहयोगी आमदनी पैदा करने के साथ-साथ ग्रामीण गरीबों को पोषण सुरक्षा प्रदान करने का एक शक्तिशाली साधन है। भूमिहीन श्रमिक अपनी 50 प्रतिशत आमदनी

चित्र 3. मुर्गी पालन

पशुधन विशेषकर मुर्गी पालन से अर्जित करते हैं। यह सर्वाधिक सफल पूरक व्यवसाय है जो कृषि, पशुपालन या अन्य पेशेवर कार्यों के साथ समानांतर आमदनी का व्यवसाय है। इस समय मुर्गी उत्पादों की घरेलू मांग उपलब्ध उत्पादन की तुलना में अंडे की चार गुना और मांस की 6 गुना से अधिक है। अतः मुर्गी पालन की उपलब्ध संवृद्धि के अनुसार, इसमें 1000 अरब रुपये के कारोबार और एक करोड़ से अधिक व्यक्तियों को रोजगार उपलब्ध कराने की क्षमता है। भारत सरकार ने गरीबों को पूरक आय और पौषणिक सहायता हेतु ग्रामीण घरेलू मुर्गी विकास कार्यक्रम शुरु किया है। इसका उद्देश्य गरीबी रेखा से नीचे के परिवारों की सहायता करना है।

3. रेशमकीट पालन भारत सरकार रेशम उत्पादन में प्रोत्साहन, विस्तार, उन्नयन, संरक्षण और तकनीकी अनुप्रयोगों के लिए विभिन्न योजनाएं संचालित कर रही है। इसके लिए किसानों के सामूहिक प्रशिक्षण के अतिरिक्त राष्ट्रीय अनुसंधान विकास निगम केंद्र प्रायोजित उद्यमिता विकास कार्यक्रम संचालित कर रहा है। आवश्यकता आधारित कार्यक्रमों के अतिरिक्त एकीकृत कौशल विकास योजना के अंतर्गत भी रेशमपालकों को प्रशिक्षण प्रदान किया जा रहा है।

4. खुंबी (मशरूम) उत्पादन हमारे देश में 40 से 42 हजार टन मशरूम का उत्पादन होता है। व्यवसायिक रूप से हमारे यहां, तीन प्रकार की खुंब का उत्पादन किया जाता है। इनमें बटन मशरूम सबसे अधिक लोकप्रिय है। इसके बाद ढींगरी तथा पुराल खुंब है। सामान्य तौर पर लगभग 9 से 10 कि.ग्रा. खुंबी /वर्ग मीटर में पैदा होती है। प्रति 10 कि.ग्रा. कंपोस्ट से 12 से 15 कि.ग्रा. खुंबी प्राप्त की जा सकती है। किसानों को प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना के अंतर्गत उन्नत खुंबी उत्पादन की विधियों की आवश्यकता है।

5. राष्ट्रीय बांस मिशनः कृषि तथा गैर कृषि क्रिया-कलापों को बढ़ाने के लिए राष्ट्रीय बांस मिशन को नए अवतार में 1290 करोड़ रुपये की निधि के साथ प्रस्तावित किया गया है। इसके माध्यम से न केवल छोटे व्यवसायों की स्थापना की जा सकेगी बल्कि नए रोजगार भी पैदा हो सकेंगे।

चित्र 4. कृषि में विविधीकरण के लिए फूल उत्पादन

6. फूलों से रोजगारः किसान फूलों की खेती द्वारा अपनी आय कई गुना बढ़ा सकते हैं (चित्र 4.)। गेंदा और गुलाब महत्वपूर्ण व्यावसायिक फूल हैं। आज देश के अनेक भागों में कट फ्लावर व लूज दोनों की अधिक मांग है। इसी प्रकार रजनीगंधा व ग्लैडिओलस फूलों की खेती करके ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापक बेरोजगारी को दूर किया जा सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि योग्य भूमि की कमी व कम आमदनी के कारण रोजगार के अवसर कम होते जा रहे हैं। ऐसे में फूलों को रोजगार के रूप में अपनाया जा सकता है।

7. खाद्य प्रसंस्करणः आलू, टमाटर जैसी अनेक सब्जियां जोकि खुले बाजार में यदि 10 से 15 रुपये/ कि.ग्रा. की दर से बेची जाती हैं, जिनको सामान्य तापक्रम

पर अधिक समय तक सुरक्षित नहीं रखा जा सकता है। खाद्य प्रसंस्करण द्वारा प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ के मूल्य में तीन से चार गुना तक वृद्धि हो जाती है तथा इसे सामान्य तापक्रम पर लंबी अवधि तक सुरक्षित भी रखा जा सकता है। इससे किसानों को उत्पाद का समुचित मूल्य प्राप्त होने के साथ खाद्य प्रसंस्करण उद्योग में लगे युवकों को भी रोजगार मिलता है और उपभोक्ता को वर्षभर प्रसंस्कृत फल व सब्जियों की आपूर्ति समुचित मूल्य पर सुनिश्चित हो पाती है। टमाटर, आलू, प्याज के उत्पादकों के लिए 'ऑपरेशन ग्रीन' को शुरु किया जा रहा है जिसमें भंड़ारण, प्रसंस्करण, विपणन की सुविधाएं किसानों को उपलब्ध होंगी।

8. बीज उत्पादनः कृषि उत्पादन तथा विभिन्न कृषि जलवायु क्षेत्रों में पैदावार के लिए बीज एक महत्वपूर्ण आदान है। शुद्ध एवं स्वस्थ प्रमाणिक बीजों का उपयोग करने से जहां एक ओर अच्छी पैदावार मिलती है वहीं दूसरी ओर समय एवं पैसों की बचत होती है। किसानों को यदि कृषि आधारित लघु उद्यमों की तकनीक तथा संचालन की जानकारी हो जाए तो ग्रामीण अर्थव्यवस्था का पूरा परिदृश्य ही बदल सकता है। बीज उत्पादन ऐसा ही एक कृषि उद्यम है। बीज उत्पादन सामान्य फसलोत्पादन से बहुत अलग नहीं है। हालांकि बीज उत्पादन के लिए उपयोग होने वाले बीज की कीमत सामान्य किस्मों से थोड़ी अधिक अवश्य होती है। बीज की शुद्धता इस बात पर निर्भर करती है कि किस फसल का बीज, कहां तैयार किया जा रहा है। बीज तैयार करते समय उनकी शुद्धता एवं गुणवत्ता का ध्यान रखना परम आवश्यक है। कृषि वैज्ञानिकों के अनुसार मटर, गेहूं, चने जैसे मोटे अनाजों का बीज उत्पादन करने में जोखिम कम रहता है। इन फसलों में स्वः परागण होने के कारण दो किस्मों की बुवाई के बीच में कम दूरी रखनी पड़ती है तथा अवांछनीय पौधों को फसल की दो-तीन वृद्धि अवस्थाओं पर निकाला जाता है। ग्रामीण युवा सब्जी बीज उत्पादन को भी एक व्यवसाय के रूप में अपनाकर अपनी आमदनी बढ़ा सकते हैं।

9. मत्स्य पालन मछली उत्पादन में तीव्र और सतत विकास, खाद्य एवं पोषण सुरक्षा व रोजगार और उत्तम आजीविका उपलब्ध कराने के लक्ष्य के साथ केंद्र सरकार इससे संबंधित सभी योजनाओं को उत्तम ढंग से क्रियान्वयन कर रही है।

वर्तमान में देश की तीव्रगति से बढ़ती जनसंख्या के कारण बढ़ता खाद्यान्न संकट, कुपोषण, गरीबी, बेरोजगारी, रोटी, कपड़ा एवं मकान जैसी समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं तथा रोजी-रोटी की तलाश में गांव के लोग शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं। जब शहर जनसंख्या का भार उठाने की स्थिति में नहीं रहेंगे, तो आने वाले समय में सभी आधारभूत सुविधाओं जैसे; सड़क, बिजली, जल, शिक्षा और चिकित्सा आदि पर दबाव बढ़ने के कारण आर्थिक संकट की स्थिति पैदा होगी। ऐसे में गांव के नवयुवकों का शहर की ओर पलायन रोकने तथा उनकी आजीविका सुरक्षा के लिए कृषि एवं पशुधन से जुड़े व्यवसाय उपयोगी सिद्ध होंगे।

हताश न होना सफलता का मूल है और यही परम सुख है। उत्साह मनुष्य को कर्मों में प्रेरित करता है और उत्साह ही कर्म को सफल बनाता है।

- वाल्मीकि

ऐसे करें आलू का मूल्यवर्धन

अल्का जोशी

खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान पुसा, नई दिल्ली-110012

विश्व की अति महत्वपूर्ण खाद्य फसलों जैसे चावल, गेहूं और मक्का के बाद आलू चौथे स्थान पर है। इसी कड़ी में वर्ष 2008 में खाद्य एवं कृषि संगठन, रोम द्वारा अंतर्राष्ट्रीय आलू वर्ष मनाया एवं इसे भविष्य की खाद्य फसल के रूप में चुना। वर्ष 2018 में भारत की जनसंख्या 134 करोड़ से भी ज्यादा हो चुकी है। इतनी बड़ी जनसंख्या को खाद्य एवं पोषण सुरक्षा उपलब्ध कराने के लिए सिर्फ अनाजीय फसल जैसे चावल, गेहूं और मक्का ही काफी नहीं है। आलू उत्पादन में भारत विश्व में दूसरे स्थान तक पहुंच चुका है तथा वर्ष 2017-18 के सरकारी आंकड़ो के अनुसार भारत में लगभग 47.0 मिलियन टन आलू का उत्पादन रहा। अनाजीय फसलों के साथ-साथ एक संपूर्ण आहार के रूप में आलू प्रचुर मात्रा में अपेक्षाकृत कम कीमत पर उपलब्ध है। भारत में आलू का उपयोग ज्यादातर (68.5 प्रतिशत) सब्जी के रूप में खाने में किया जाता हैं। जबकि प्रसंस्करण में सिर्फ 7.5 प्रतिशत ही इसका उपयोग होता है, लेकिन इस क्षेत्र में आलू की भागीदारी अधिक होने की अपार संभावनाएं हैं।

आलू एक संपूर्ण आहार

आलू एक पौष्टिक व संपूर्ण आहार है। लगभग 80 प्रतिशत नमी के साथ आलू में 20 प्रतिशत तक शुष्क पदार्थ होते हैं। शुष्क पदार्थ में मुख्य रूप से कार्बोहाइड्रेटस (स्टार्च) 14 प्रतिशत, शर्करा 2 प्रतिशत, प्रोटीन 2 प्रतिशत, वसा 0.1 प्रतिशत, खनिज लवण 1 प्रतिशत, तथा रेशा 0.6 प्रतिशत होता हैं। इसका प्रोटीन पोषण की दृष्टि से उच्च गुणवत्ता वाला है। फॉलिक अम्ल तथा पोटेशियम के आदर्श स्रोत होने के कारण रोजाना के भोजन में इस्तेमाल किया जा सकता है। फॉलिक अम्ल गर्भावस्था में बच्चों में उचित मानसिक विकास के लिए आवश्यक होता है। आलू की विभिन्न किस्मों में फॉलिक अम्ल गेहूं में पाए जाने वाले फॉलिक अम्ल के बराबर हैं। आलू के उपभोग से (2000 किलो कैलोरी को आधार मान कर), एक व्यक्ति की कार्बोहाइड्रेट्स, मैग्नीशियम, पोटेश्यम, फॉस्फोरस, विटामिन बी-1, बी-2, विटामिन-सी एवं फॉलिक अम्ल की लगभग सौ प्रतिशत तक आवश्यकता पूरी की जा सकती है। साथ ही साथ यह लौह तत्वों एवं जिंक जैसे खनिज लवणों की अस्सी प्रतिशत तक आवश्यकता को पूर्ण करता है। यह आंकड़ा प्रोटीन एवं रेशे के लिए साठ प्रतिशत तक है। स्वास्थ्य के लिए सजग लोगों के लिए भी आलू अच्छा विकल्प है क्योंकि आलू में वसा की मात्रा बहुत कम (0.1 प्रतिशत) होती है जिसका 60-80 भाग असंतृप्त वसा अम्ल से बना होता है जो पोषण की दृष्टि से उत्तम है ।

आलुओं का प्रसंस्करण विभिन्न उत्पाद बनाकर किया जाता है जैसे चिप्स, फ्राईज, शुष्क उत्पाद (शुष्क चिप्स, लच्छा, क्यूब्स, बड़िया, पापड़, फ्लेक्स, ग्रेन्यूल्स और आलू का आटा) एवं आलू स्टार्च (मांड) इत्यादि। आलू का प्रसंस्करण संगठित एवं असंगठित दोनों ही तरह की इकाइयों द्वारा किया जाता रहा है। चिप्स तथा फ्रेंच फ्राइस, आलू के प्रचलित प्रसंस्कृत उत्पाद हैं। वर्तमान में कुल उत्पादित आलू का लगभग 6.65 प्रतिशत भाग चिप्स बनाने में एवं 0.16 प्रतिशत फ्रोजेन आलू उत्पाद बनाने में प्रयोग होता है। आलुओं के प्रसंस्करण के लिए उनमें कुछ गुणो का होना अनिवार्य है। अच्छी किस्मों के आलू उत्पादों को बनाने के लिए शुष्क पदार्थ की मात्रा कम से कम 20 प्रतिशत और अवकारक शर्करा की मात्रा 150 मिलीग्राम/100 ग्राम ताजा भार से अधिक नहीं होनी चाहिए। भा. कृ. अनु. प.-केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला की कुफरी चिपसोना, हिमसोना, फ्राइसोना जैसी किस्में प्रसंस्करण के लिए उत्तम मानी जाती हैं। आलुओं से कई प्रकार के उत्पाद घर बैठे ही तैयार किए जा सकते

हैं, जिनका विवरण निम्नलिखित है। यहां पर दर्शाया गया है।

चिप्स

छिले साफ-सुथरे आलुओं को 1.5 से 1.8 मि.मी. तक समान मोटाई वाले कत्लों में काट कर, धो कर (सतह से स्टार्च (मांड) निकालने के लिए) ब्लान्च करके (एंजाइमों को निष्क्रिय करने के लिए), चिप्सों को 180° सेल्सियस तापमान पर बुल-बुले समाप्त होने तक बैच टाइप फ्रायर या कढ़ाही में तलते है। तले हुए चिप्सों से अतिरिक्त तेल को टिशू-टॉवल की सहायता से सुखाकर समान रूप से नमक और मसाले मिलाकर पॉलीथीन बैग में पैक किया जा सकता है व घर बैठे ही अच्छी गुणवत्ता वाले चिप्स का लुत्फ उठाया जा सकता हैं।

आलू चिप्स बनाने की प्रक्रिया

आलू छीलना
↓
छीले आलुओं को धोना
↓
हरे तथा क्षतिग्रस्त भागों को अलग करना
↓
1.5 से 1.8 मिमी मोटी कतलें काटना
↓
कतलों को 2 से 3 मिनट तक गरम पानी (60 – 80 डिग्री सेल्सियस) में ब्लांच करना
↓
ऊपरी सतह को सुखना
↓
180 डिग्री सेल्सियस तापमान पर तलना
↓
नाइट्रोजन की उपस्थिति में पैकिंग

आलू के चिप्स

फ्रेंच फ्राइज़

छिले साफ-सुथरे आलुओं को फ्राइज़ कटर से काट कर, धो कर (सतह से स्टार्च (मांड) निकालने के लिए)

फ्रेंच फ्राइज़ बनाने की प्रक्रिया

आलू छीलना
↓
छीले आलुओं को धोना
↓
हरे तथा क्षतिग्रस्त भागों को अलग करना
↓
स्टिक्स काटना
↓
स्टिक्स को धोना और ब्लांच करना
↓
ठंडा करना और सुखाना
↓
180 डिग्री सेल्सियस तापमान पर 2 मिनट तक तलना
↓
तेल निथारना
↓
ठंडा करके फ्रीज़ करना
↓
उपयोग के समय 180 डिग्री सेल्सियस तापमान पर तलना

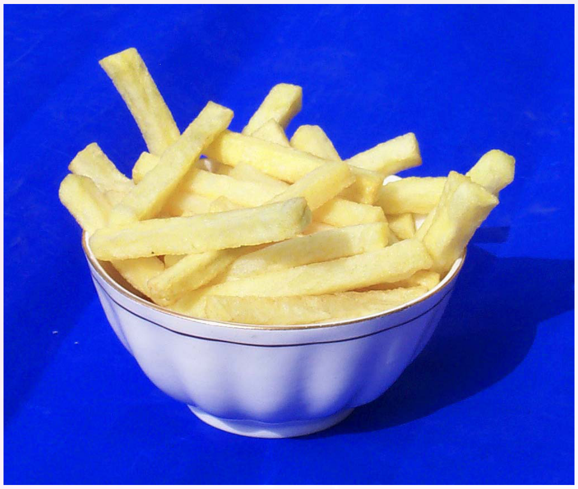

फेंच फ्राइज़

ब्लांच करके (एंजाइमों को निष्क्रिय करने के लिए), एक मिनट तलकर (पारशियल फ्राइंग-आंशिक रूप से तलना), फ्रीज कर देते हैं जिन्हें खाने के समय पूर्ण रूप से तल (फिनिश फ्राइंग) लिया जाता है। इन्हें 180° सेल्सियस तापमान पर बुल-बुले समाप्त होने तक बैच टाइप फ्रायर या कढ़ाही में तलते हैं। भूख को मिटाने हेतु यह एक कारगर उत्पाद माना जाता है।

आलू लच्छा (श्रेडर)

छिले व धुले आलूओं को श्रेडर द्वारा पतले-छोटे लच्छों में काट कर, पानी में धो कर, आलू के लच्छों को गर्म पानी (60-80० सेल्सियस तापमान) में 1 से 2 मिनट तक डुबोकर ब्लांच किया जाता है ताकि इनके रंग को बेहतर बनाया जा सके। इसके बाद इनको 180° सेल्सियस तापमान पर बैच टाइप फ्रायर या कढ़ाही में

आलू के लच्छे बनाने की प्रक्रिया

आलू छीलना
⬇
छीले आलुओं को धोना
⬇
हरे तथा क्षतिग्रस्त भागों को अलग करना
⬇
पतले लच्छे तैयार करना
⬇
लच्छों को 1 से 2 मिनट तक गरम पानी (60 – 80 डिग्री सेल्सियस) में ब्लांच करना
⬇
लच्छों की सतह को सुखना
⬇
180 डिग्री सेल्सियस तापमान पर तलना
⬇
नाइट्रोजन की उपस्थिति में पैकिंग

तलकर समान रूप से नमक और मसाले मिलाकर पॉलीथीन बैग में पैक करके रखा जा सकता है। यह एक बहुत ही कुरकुरा उत्पाद होता है जिसे चाय के साथ मजे से खाया जा सकता है।

भारत की बढ़ती जनसंख्या को देखते हुए यह अनुमान लगाया जा सकता है कि प्रसंस्कृत उत्पादों के लिए हमारा देश एक सशक्त बाजार के रूप में उभर रहा है। आलू के इन उत्पादों को तैयार करने की प्रौद्योगिकियां भी काफी सरल हैं जो कि घरों में, छोटे पैमाने पर खाद्य उद्योगों, सैल्फ हेल्प ग्रुप्स, महिला-मंडलों और किसानों की सहकारी समितियों द्वारा बड़ी आसानी से अपनाई जा सकती हैं। इस तरह से यह लोगो की अतिरिक्त आय का स्रोत भी बन सकती हैं। छोटे पैमाने पर आलू के उत्पादों को तैयार करने के लिए कम पूंजी निवेश की आवश्यकता होती है। अतिरिक्त आय के स्रोत के रूप में ही नहीं आलू एवं इसके प्रसंस्कृत उत्पाद खाद्य एवं पोषण सुरक्षा के मद्देनजर भी एक सशक्त आयाम हैं जो कि बड़े पैमाने पर लोगों को आसानी से कम कीमत पर उपलब्ध होते हैं। इतना ही नहीं इनका प्रसंस्करण घर पर, संगठित एवं असंगठित इकाइयों द्वारा भी असानी से किया जा सकता है।

गुलाब से तैयार करें बहुउपयोगी एवं व्यावसायिक उत्पाद

नमिता, एम. के. सिंह, सपना पंवर, एवं एस. एस. सिंधु

पुष्प विज्ञान एवं भूदृश्य निर्माण संभाग,
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110 012

प्राचीन काल से ही गुलाब को इसकी सुंदरता, रूप, आकार, औषधीय गुणों एवं सुगंध के लिए जाना जाता है। गुलाब को फूलों की रानी के नाम से भी जाना जाता है। हमारे देश में गुलाब का उत्पादन महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, राजस्थान, हरियाणा तथा पश्चिम बंगाल, आदि राज्यों में किया जा रहा है। गुलाब की खेती देश के किसानों के लिए ही नहीं अपितु निर्यात के दृष्टिकोण से भी बहुत महत्वपूर्ण है। गुलाब के फूल डाली सहित, कर्तित फूल तथा पंखुड़ी फूल के रूप में बाजार में बेचे जाते हैं। पर्यावरण सुधार की दृष्टि से भी गुलाब महत्वपूर्ण है।

गुलाब का उपयोग मुख्य रूप से धार्मिक स्थलों, विभिन्न त्योहारों, शादी-विवाह के मंडपों आदि के सौन्दर्यकरण व गुलदस्ते बनाने में किया जाता है। इसके अतिरिक्त गुलाब को इत्र, गुलाब जल, गुलाब तेल, गुल रोगन तथा गुलकंद आदि मूल्यवर्धित उत्पादों को बनाने के लिए भी प्रयोग किया जाता है। गुलाब से बने उत्पादों को औषधि के रूप में भी उपयोग किया जाता है। गुलाब के बहुउपयोगी एवं व्यावसायिक उत्पादों का विवरण, विस्तार रूप से निम्नलिखित हैं-

गुलाब जल

गुलाब के फूलों को पानी में उबाल कर उससे बनने वाली वाष्प को संघनित करके गुलाब जल तैयार करते हैं।

भारत में, क्रूड विधि का प्रयोग करते हैं जिसमें कॉपर की केटली (डेग) और बांस के बने संघनित्र का प्रयोग किया जाता है। संघनित्र रस्सी से ढका होता है और इसे सदैव अच्छी दिशा में रखा जाता है। मुख्यत: इत्तर और गुलाब जल इस विधि द्वारा बनाए जाते हैं। गुलाब जल का उपयोग फारसी और मध्य पूर्वी देशों में मिठाइयों या शरबत में किया जाता है। इसके अतिरिक्त शादी, धार्मिक समारोहों में सुगंधित इत्र के रूप में भी इसका प्रयोग होता है। आंशिक तौर पर इसे कुकीज और अन्य मिठाइयों को तैयार करने में भी डाला जाता है। भारत में गुलाब जल का उपयोग आंखों को साफ करने के लिए किया जाता है। प्राकृतिक सुगंध और मॉइस्चराइजर के लिए चेहरे पर सीधे स्प्रे के रूप में भी इसे उपयोग में लाया जाता है। इसमें शरीर और आंखों को ठंडा रखने के गुण होते हैं। इस कारण इसे आंखों के लोशन के रूप में भी काम में लाया जाता है। सामान्यतः हमारे देश से गुलाब जल ऑस्ट्रेलिया, बेहरीन, कनाडा, इथियोपिया, फिजी, फ्रांस, कुवैत, मलावी, मलेशिया, नेपाल, ओमान, पूर्वी अफ्रीकी देश कातार, सऊदी अरब, सिंगापुर, सोमालिया, यू.के. संयुक्त राज्य अमेरिका और यमन आदि को निर्यात किया जाता है।

गुलाब तेल, ओट्टू अथवा गुलाब का इत्र

गुलाब का तेल, पंखुडियों से निष्कर्षित करना एक महत्वपूर्ण व्यावसायिक उत्पाद है। गुलाब में पहचाने गए 12 घटकों में से केवल एक जल घुलनशील है जो गुलाब जल देता है। इत्र में ग्यारह आवश्यक घटकों के साथ पंखुडियों की सतह का मोम और अन्य अशुद्धियां सम्मिलित होती हैं। सारे विश्व में प्रयोग किए जाने वाले उच्च श्रेणी के खुशबू उत्पादों में उपयोग होने वाले प्राकृतिक आवश्यक तेलों में यह सबसे मंहगा है। मीठी सुगंध के अलावा, इसमें औषधीय गुण होते हैं। इसलिए

आयुर्वेदिक उपचार में भी इसका प्रयोग किया जाता है। गुलाब तेल वाष्प-आसवन, जल-आसवन, सॉलवेंट निष्कर्षण आदि से प्राप्त किया जाता है। गुलाब की 'रोजा दमिस्केना', 'रोसा गैलिका', रोसा सेटिफोलिया' और 'रोसा बोबॉनिना' जैसी किस्में तेल का अच्छा स्रोत मानी जाती हैं। गुलाब का ओट्टू सीधे ही डिस्टलेट (आसवित) से प्राप्त नहीं होता बल्कि गुलाब की पंखुड़ियों के आसवन के दौरान रोसीटर से एकत्रित किया जाता है। गुलाब जल को मिट्टी के पात्र अथवा धातु की नांदो में खुले में ठंडी रात्रि में रखने से मक्खन के समान खुशबू युक्त पदार्थ एकत्रित होता हैं अर्थात जल की सतह पर तैरता हुआ ओट्टू। भारतीय गुलाब का इत्र वास्तव में एक प्रकार का तेल है जो गुलाब के फूलों को आसवित करके वाष्प को चंदन की लकड़ी के तेल में अवशोषित करके एकत्रण पात्र में एकत्रित करते हैं।

गुलाब कांकरीट

फ्रांस में गुलाब को आसवित नहीं करते हैं बल्कि विलायक के तौर पर पेट्रोलियम स्प्रिट के द्वारा आवश्यक तेलों को निष्कर्षित करते हैं। इसके अंतर्गत पंखुडियों को तब तक हिलाते हैं जब तक कि तेल घुल नहीं जाते हैं। अब विलायक को कम तापमान और घटे दाब के अंतर्गत वाष्पित किया जाता हैं। इसके बाद बचा मोमी अवशेष कांकरीट कहलाता है और इसमें गुलाब के सभी आवश्यक तेल होते हैं अर्थात वे जो गुलाब जल और इत्र में पाए जाते हैं। हेक्सेन का उपयोग भी विलायक के रूप में किया जाता है। इसका उपयोग वेक्यूम डिस्टिलेशन सेट में ही किया जाता है और इस विलायक को पूर्णतः वाष्पित किया जाता है जिससे कि इसके दो उपयोग किया जा सके। कांकरीट की प्राप्ति 0.18 से 0.30 प्रतिशत होती हैं। कांकरीट लाल भूरा, मोमी ठोस होता है और खुशबू उद्योग के लिए बहुत मूल्यवान होता है।

गुलाब एब्सोलूट

इसमें आवश्यक तेलों के अतिरिक्त मोम भी होता है जो फूलों की सारी बाहरी सतह पर एक पतली परत के रूप मे होता है। शुद्ध एल्कोहल के साथ कांकरीट को निष्कर्षित करने पर मोम अवशिष्ट के रूप में पृथक होता है। यह चिपचिपा भूरापन लिए तेल है। कोंकरीट और एब्सोल्यू के सेंट गुलाब जल अथवा इत्र की तुलना में गुलाब की खुशबू के अधिक निकट होते हैं।

गुलाब शरबत

गुलाब का शरबत अपनी ठंडी प्रकृति के कारण बुखार जैसे रोगों में सहायक होता है। गर्मियों के मौसम में मूत्र में जलन होना आम समस्या होने लगती है व गुलाब शरबत के नियमित सेवन से इसमें राहत मिलती है। पेट में जलन होने पर गुलाब शरबत के सेवन से राहत मिलती है। आंखों में जलन होना, सूखापन या आंखे लाल होना जैसी समस्याओं के निवारण में भी यह उपयुक्त है। गुलाब शरबत बनाने में गुलाब की पत्तियां (1 कि.ग्रा.) पानी (250 ग्रा.म.), चीनी (2 कि.ग्रा.), नीबू का रस (5-7 ग्राम), गुलाब एसेंस (4-5 बूंद), लाल रंग (2-3 बूंद) सोडियम बेंजोएट (1/4 चम्मच) सामग्री का प्रयोग किया जाता है। गुलाब शरबत बनाने की सुनियोजित विधि निम्नलिखित है।

सर्वप्रथम गुलाब की पत्तियों को धोकर एक कप पानी में भिगो दें। आधे घंटे तक भीगने के बाद उन्हें उबालें व

उबालते समय ढ़ककर रखें। दस मिनट तक उबालने के बाद पत्तियों को हाथ से मसल लें। 250 ग्राम पानी व 2 कि.ग्रा गुलाब अगरबत्ती चीनी को मिलाकर गर्म करें और 5-7 ग्राम नींबू का रस या चार नीबू का रस मिला दें। पानी-चीनी के घोल को एक बार उबाल दें और ठंडा होने पर छनी हुई गुलाब की पत्तियों का रस मिला दें। अब गुलाब एसेंस, लाल रंग व सोडियम बेंजोएट को थोड़े शरबत में घोलकर मिला दें व तैयार शर्बत को साफ-स्वच्छ कांच की बोतल में संग्रहित करें।

गुलकंद

गुलाब की पंखुड़ियों को चीनी में संरक्षित करना गुलकंद कहलाता है। इसे घर में सरलता से गुलाबों की सुगंधित पंखुड़ियों का उपयोग करके भी बनाया जा सकता है। यह पेट साफ करता है और पान को सुगंधित और मीठा बनाता है। गुलकंद, अम्लता के इलाज के लिए एक उपयुक्त घरेलू उपचार है। यह आलस्य, मांसपेशी का दर्द, खुजली, थकान आरै गर्मी जैसे तकलीफों से छुटकारा पाने के लिए टॉनिक के रूप में उपयोग किया जाता है। इसे रक्त शुद्ध करने, दृष्टि और स्मृति सुधार स्वरूप उपयोगी आंका जाता है। गुलकंद बनाने में ताजे गुलाब की पत्तिया (1 कि.ग्रा.) और चीनी (2 कि.ग्रा.) का प्रयोग किया जाता है। गुलकंद बनाने की सुनियोजित विधि निम्नलिखित है। सर्वप्रथम गुलाब की पत्तियों को धो लें। अब एक जार में एक परत लगभग एक इंच मोटी गुलाब की पत्तियों की लगाएं। इसके ऊपर चीनी की परत लगाएं। एक कि.ग्रा. चीनी का उपयोग करते हुए गुलाब की पत्तियों एवं चीनी को परत दर परत लगाएं व जार में ऊपर तक भर दें। ध्यान रहे, ऊपरी परत चीनी की होनी चाहिए। इस जार

को धूप में एक दिन के लिए रखें। अगले दिन बाकी बची एक कि.ग्रा. चीनी में से आधी चीनी (500 ग्राम) डालकर पुनः धूप में रख दें। तीसरे दिन सारी चीनी पिघल जाने पर बाकी बची चीनी (500 ग्राम) भी डालकर रख दें। अब जार को 4-5 दिनों तक धूप में रखने व अच्छी तरह हिलाने पर गुलकंद तैयार हो जाएगा।

पंखुड़ी

इसे गुलाब की पंखुड़ियों को छाया में सुखाकर तैयार किया जाता है और गर्मी के पेयों में प्रयोग करते हैं। गुलाब की सूखी पत्तियों का उपयोग मिठाइयां, औषधीय उत्पाद, अगरबत्ती, धूपबत्ती या सौंदर्य प्रसाधनों में किया जाता है। इस बनाने में ताजे गुलाब की पत्तियां (1 कि.ग्रा.), मलमल का कपड़ा ढकने के लिए अखबार या कागज (फैलाने के लिए) का प्रयोग किया जाता है। सर्वप्रथम गुलाब की पत्तियों को धो लें व पानी निकालने के बाद इन्हें अखबार या सफेद कागज पर फैला दें और इस पर मलमल का कपड़ा ढक दें। अब इन्हें छाया में 2-3 दिनों तक सुखाएं। सूख जाने पर वायुरहित साफ डिब्बों में संग्रहित करें। इन सूखी पत्तियों का प्रयोग आप ताजे गुलाब की पत्तियों के स्थान पर शरबत बनाने या विभिन्न तरह के मीठे पकवानों को सजाने के तौर पर कर सकते हैं।

अगरबत्तियां और धूपबत्तियां

क्रूड आसवन विधियों के अंतर्गत पंखुड़ियां पूर्ण रूप से निष्कर्षित नहीं हो पाती हैं। आसवन के शेष बची पंखुड़ियों

में कुछ सुवास रह जाती है। इन पंखुड़ियों को छाया में सुखकर अगरबत्तियां और धूपबत्तियां बनाने में उपयोग किया जाता है। इन पंखुड़ियों को हवन सामग्री आदि में भी उपयोग किया जाता है।

गुल रोगन

गुल रोगन बनाने के लिए गुलाब की 'रोसा डेमासेना' जाति की 300 ग्राम पत्तियां एक लीटर तिल के तेल में डुबोकर सूरज की रोशनी में एक पखवाड़े के लिए रखें। इसके बाद इस मिश्रण को कपड़े से छानकर बोतल में सुरक्षित रख दें। गुल रोगन को टॉनिक की तरह उपयोग करें। इसके अलावा यह पीड़ा निवारक भी है और मेनिनजाइटिस (दिमागी बुखार) के शुरुआती इलाज में भी लाभकारी है।

रोज (गुलाब) हिप्स

रोज हिप्स का तात्पर्य गुलाब की पंखड़ियों के नीचे के हिस्से से होता है तथा इसमें गुलाब के बीज होते हैं। ताजा रोज हिप्स में प्रचुर मात्रा में विटामिन 'सी' होता है, जिसके कारण इसे ठंड और विटामिन 'सी' की कमी (स्कर्वी) के इलाज में उपयोग किया जाता है। सॉस, जैम, जैली, पुडिंग आदि की तैयारी के लिए भी इसका उपयोग किया जाता है। सूखे एवं बारीक पीसे हुए रोज हिप्स, हर्बल चाय बनाने में उपयोगी होते हैं। ये पाचन तंत्र संक्रमण और त्वचा रोगों की रोकथाम में भी सहायक होते हैं।

पॉट पौरी

पॉट पौरी स्वाभाविक रूप से पौधों के विभिन्न हिस्सों का मिश्रण है, जो भवनों के अंदर एक सभ्य प्राकृतिक सुगंध प्रदान करता है। यह आमतौर पर एक सजावटी कटोरे में रखा जाता है या कपड़े से बने थैलों में बांधकर रखा जाता है। गुलाब की पंखुड़ियां और पत्तियां पॉट पौरी की लिए एक बहुत अच्छी आधार सामग्री हैं। विभिन्न रंगों और सुगंधों के गुलाब की पंखुड़ियों का उपयोग इसमें विविधता पैदा करने के लिए किया जा सकता है।

पुष्प विन्यास

फूलों को टोकरी में सुव्यवस्थित करके पुष्प विन्यास बनाया जा सकता है। इसके लिए बांस से बनी एक टोकरी लें। अब उसके आकार की थर्मोकोल शीट या फ्लोरल फोम काट कर टोकरी में लगा लें। अब इस टोकरी में विभिन्न तरह के या एक ही तरह के डंडी वाले फूल विभिन्न लेवल पर स्थापित करें। इस टोकरी में दो तरह के विन्यास बनाए जा सकते हैं, एक जिनमें पृष्ठ भूमिका ऊंची या ऐसी विन्यास टोकरी के मध्य भाग से शुरू होकर सब तरफ से बराबर प्रदर्शित हो। जिन विन्यासों को दीवार के साथ प्रयोग करना हो उन्हें हम एक तरफ बना सकते हैं परंतु जो विन्यास किसी मेज के मध्य में रखने हों तो उनमें फूल इस तरह लगाए कि वे चारों ओर से दिखाई दें। इन विन्यासों में पृष्ठ भूमिका बनाने के लिए फर्न, मोरपंखी, सिल्वर ओक की लंबी डंडी वाली पंतियों का प्रयोग कर सकते हैं।

पुष्प विन्यास

गुलाब के उत्पाद हेतु मुख्य जातियां

रोजा वंश की कई जातियां हैं जो सुगंधित फूलों का उत्पादन करती हैं लेकिन केवल निम्नलिखित का ही उपयोग व्यापारिक तौर पर गुलाब तेल या खुशबू उद्योग के लिए किया जाता है।

i. रोजा डेमासेना मिल: खुशबू निष्कर्षित करने के लिए बहुत महत्वपूर्ण और मुख्य जाति है। इसके पुष्प दलों में उत्तम गुणवत्ता (30-35% जिरेनिऑल और 25-30% सिट्रोनेलोल) और उच्च प्रतिशत में गुलाब तेल मिलता है।

ii. रोजा बरबोनिआना डेस्प: यह इंडोआई गुलाब के नाम से जाना जाता है। इसको मुकलन के लिए जड़स्कंध के रूप में अथवा गुलकंद और गुलाब जल बनाने के लिए, उपयोग किया जाता है। दक्षिणी राज्यों और मध्य प्रदेश में इसकी खेती बड़े पैमाने पर की जाती है।

iii. रोजा सेन्टीफोलिया लिन: फ्रांस में इसकी खेती व्यापारिक तौर पर आवश्यक तेल और गुलाब जल के लिए की जाती है। बगीचों में अलंकारी गुलाबी फूलों के लिए इसकी खेती की जाती है।

iv. रोजा मोस्चाटा हुक: यह हिमालय क्षेत्र में वन्य रूप से उगता है। फूल एकल ओर सफेद होते हैं।

v. रोजा एल्बा: सफेद गुलाब जिसका बल्गेरिया में तेल निष्कर्षण के लिए उपयोग किया जाता है, भारत में व्यापारिक तौर पर नहीं उगाया जाता है।

vi. रोजा गेलिका (आर. रूबा): यह जाति भारत में प्रचलित नहीं है।

आलस्य मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है और उद्यम सबसे बड़ा मित्र, जिसके साथ रहने वाला कभी दुखी नहीं होता।

- भर्तृहरि

गेंदे : आजीविका के लिए एक व्यवसायिक पुष्पीय फसल

सपना पंवर, कॅंवर पाल सिंह, नमिता एवं रीता भाटिया डे

पुष्प विज्ञान एवं भूदृश्य संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

गेंदे भारत में उगाई जाने वाली एक महत्वपूर्ण वाणिज्यिक फसल है। यह एस्टेरेसी कुल से सबंधित है। जीनस टैगेटस में 33 जातियां शामिल हैं जिनमें से दो जातियां अर्थात टैगेटस इरेक्टा (अफ्रीकी गेंदे) एवं टैगेटस पैटुला (फ्रेंच गेंदे) को व्यावसायिक तौर पर खुले फूलों के उत्पादन के लिए प्रयोग में लाई जाती हैं। यह बहुत महत्वपूर्ण फसल है क्योंकि इसका उपयोग व्यापक रूप से धार्मिक और सामाजिक कार्यों में किया जाता है। इसका उपयोग वाणिज्यिक रूप से फार्मास्यूटिकल्स, फूड सप्लीमेंट्स, मुर्गी आहार, एडिटिव्स और कलरेंट्स के लिए किया जाता है। गेंदे की खेती व्यवसायिक रूप से केरोटीन वर्णनक प्राप्त करने के लिए भी की जाती है। इसके अतिरिक्त गेंदे को उद्यानों एवं गमलों के सौंदर्यीकरण के लिए भी उगाया जाता है। इसकी जाति टैगेटस माइनुटा आवश्यक तेल का समृद्ध स्त्रोत है जिसका प्रयोग औद्योगिकी क्षेत्र में विभिन्न उत्पाद बनाने हेतु किया जाता है। गेंदे में रोगाणुरोधी, सूत्रकृमिरोधी गुण भी पाए जाते हैं। इसके प्रमुख उत्पादक राज्य मध्य प्रदेश, गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, छत्तीसगढ़, ओडिशा आदि हैं। यदि गेंदे की खेती वैज्ञानिक तकनीक अपनाकर करें, तो इसकी फसल से उत्तम उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। इस लेख में गेंदे की उन्नत खेती कैसे की जाए इसकी विस्तृत जानकारी का उल्लेख किया गया है।

गेंदे के विभिन्न उपयोग

ताजे फूलों के रूप में : भारत में इसके फूल माला बनाने, पूजा करने तथा अन्य धार्मिक अनुष्ठानों में अत्याधिक रूप में उपयोग किए जाते हैं।

औद्योगिक उपयोग : गेंदे एक बहुआयामी पौधा है, शायद ही इसका कोई भाग हो जिसका उपयोग न किया जाता हो। प्राकृतिक एवं औषधीय उत्पाद क्षेत्र में इसका जबरदस्त

उपयोग हो रहा है। इस तरह हम ज्यादा उत्पादन होने के बाद भी उसको नष्ट होने से बचा सकते हैं और इसका उचित दाम मिल सकता है।

सुगंधित तेल का उत्पाद

गेंदे का तेल पीलापन लिए हुए नींबू जैसा सुगंधित तरल पदार्थ है जो कि खुला रखने पर सख्त हो जाता है। बढ़िया उत्कृष्ट किस्म का तेल निकालने के लिए टजेटस माइन्यूटा किस्म का उपयोग किया जाता है। इसका औसतन उत्पादन 50-60 कि.ग्रा./हेक्टेयर है। फ्रांस, कीनिया, आस्ट्रेलिया गेंदे के तेल के महत्वपूर्ण उत्पादक देश है। इसके तेल के मुख्य तत्व हैं- टेजेटोन, लिमोनिन, वेलेरिक एसिड, ओसमीन इत्यादि। तेल का उपयोग निम्नलिखित में किया जाता है।

1. इत्र उद्योग: उत्कृष्ट इत्र एवं सौंदर्य प्रसाधन बनाने के लिए टजेटस माइन्यूटा के तेल का प्रयोग किया जाता है। इसमें कीटोन की मात्रा अधिक होती है।

2. औषधी हेतु: गेंदे के पौधों का अत्यंत औषधीय गुण हैं। अल्सर, आंखों की बीमारी के लिए, खून साफ करने के लिए, कान इत्यादि के लिए इसका विभिन्न तरह से उपयोग किया जाता है।

3. सूत्रकृमि नाशक गुण: गेंदे में पाए जाने वाला थायोजिन सूत्रकृमि नाशक का मुख्य तत्व है। गेंदे ट्रेप (पाश) फसल के रूप में काम करती है और कृमियों की संख्या को नियंत्रण करती है।

4. कीट पतंगे भगाने के लिए: गेंदे के फूल और पत्तियों की तीव्र गंध से मक्खियां व मच्छर भाग जाते हैं। इसलिए इसका व्यापारिक स्तर पर उपयोग बहुत किया जाने लगा है।

कैरोटीनॉइड उत्पाद

इसके फूलों का उपयोग औद्योगिक स्तर पर कैरोटीनॉइड निकालने के लिए किया जाता है और यह गेंदे के फूलों की पंखुड़ियों में पाया जाता है। खाद्य एवं औषधीय क्षेत्र में इसकी मांग दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। भारत में केरल, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, इसके उत्पाद के अग्रणी राज्य हैं और इसका निर्यात मैक्सिको को भी किया जाता है। इसका उपयोग निम्नलिखित में किया जाता है।

कुक्कुट खाद्य में : अंडे के योक में पीलापन बढ़ाने के लिए जैन्थोफिल (कैरोटीन) का प्रयोग किया जाता है। इसके लिए गेंदे के पंखुडियां कुक्कुट खाद्य में मुख्य रूप से उपयोग की जाती हैं।

औषधीय प्रयोग : गेंदे के पौधे के हर भाग का कोई न कोई औषधीय उपयोग है। कटने पर यह कीड़े के डंक मारने पर गेंदे के पत्तों को पीसकर लगाने से राहत मिलती है। कैराटीन का प्रयोग आंख की बीमारी, कैंसर, फ्लू, चर्म रोग आदि के लिए भी किया जाता है।

हर्बल और पौष्टिक उत्पाद : सौंदर्य प्रसाधनों में आजकल प्राकृतिक चीजों का काफी महत्व है क्योंकि इसमें कोई भी तत्व नहीं होते हैं। पश्चिमी देशों में आजकल इसकी काफी मांग है।

प्राकृतिक रंगों के लिए : कृत्रिम रगों के दुष्प्रभाव को देखते हुए, आजकल प्राकृतिक खाद्य रंगों की ओर लोगों का झुकाव बहुत ही बढ़ गया है। गेंदे से निकाला गया ल्यूटिन खाद्य में प्रयोग किया जाता है।

गेंदे से निकाले प्राकृतिक रंग

जलवायु एवं भूमि संबंधी आवश्यकताएंः गेंदे के समान्यतः औसत जलवायु की आवश्यकता होती है। गेंदे विभिन्न ऋतुओं जैसेः वर्षा, सर्दी, गर्मी में उगाया जाता है। गेंदे को लगभग सभी प्रकार की भूमि में उगाया जा सकता है, किंतु दोमट, अच्छी जल धारण क्षमतायुक्त तथा जल निकास वाली भूमि जिसका पी एच मान 6.5 से 7.0 के बीच हो, उसे सबसे उपयुक्त एवं उत्तम माना जाता है। मिट्टी जितनी दानेदार और भुरभुरी हो उतना ही लाभदायक होती है।

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित गेंदे की उन्नत किस्में:-

पूसा बसंती गेंदा

यह अफ्रीकी गेंदे की किस्म है। इसके फूल मध्यम आकार एवं पीले रंग के होते है। यह बीज की बुवाई के 135-145 दिन बाद फूल देना आरंभ कर देते हैं। उत्तरी भारत के मैदानी क्षेत्रों में इस जाति के बुआई का समय

सितंबर-अक्टूबर एवं पुष्पन का मुख्य समय फरवरी-मार्च होता है। यह जाति बगीचों और गमलों में उगाने के लिए सर्वोत्तम है। इसका उत्पादन 20 से 25 टन/ हेक्टेयर ताजे फूल का होता है।

पूसा नारंगी गेंदा

यह अफ्रीकी गेंदे की किस्म है। यह घुमावदार एवं गहरे नारंगी रंग के होते हैं। उत्तरी भारत के मैदानी भागों में इस जाति की बुआई का समय सितंबर-अक्टूबर एवं पुष्पन का मुख्य समय फरवरी-मार्च होता है। इसकी औसत उपज 25-40 टन/हेक्टेयर ताजा फूल हैं।

पूसा बहार

यह अफ्रीकी गेंदे वर्ग की खुले परागण वाली किस्म है। इसके पौधे 75-85 सें.मी. उंचाई के होते हैं। इसके पुष्प सुगंधित, चपटे, आकर्षक व आकार में बड़े (8-9 सेंटी मीटर) एवं पीले रंग के होते हैं। यह प्रचुर मात्रा में फूल देने वाली जाति है। उत्तरी भारत के मैदानों में इस किस्म की बुआई का समय सितंबर-अक्टूबर एवं पुष्पन का मुख्य समय मध्य जनवरी से मार्च तक है। यह बागानों में बेडिंग के साथ-साथ अन्य फूलों की सजावट के लिए उपयुक्त है।

पूसा अर्पिता

यह फ्रांसीसी गेंदे की किस्म है। इसके फूल मध्यम आकार एवं हल्के नारंगी रंग के होते हैं। उत्तरी भारत के मैदानी भागों में इस जाति की बुआई का समय जुलाई-अगस्त एवं पुष्पन का मुख्य समय मध्य दिसंबर से मध्य फरवरी होता है। इसका उत्पादन 18 से 20 टन/ हेक्टेयर ताजा फूल का होता है।

पूसा दीप

यह फ्रांसीसी गेंदे वर्ग की शीघ्र फूल देने वाली किस्म है। इसके फूल सुगंधित, मध्यम आकार वाले एवं गहरे लाल रंग के होते हैं। यह प्रचुर मात्रा में फूल देने वाली किस्म है तथा प्रति हेक्टेयर खुले फूल की पैदावार 18 से 20 टन/हेक्टेयर तक होती है। उत्तरी भारत के मैदानी

क्षेत्रों में इस किस्म की बुआई का समय जुलाई-अगस्त एवं पुष्पन का मुख्य समय अक्टूबर-नवंबर होता है। त्योहारों के समय में पुष्पन के कारण यह किस्म खुले फूलों की खेती हेतु काफी उपयुक्त है क्योंकि इस समय बाजार में फूलों की ज्यादा मांग होने के कारण उत्पादकों को ज्यादा आमदनी होती है।

प्रवर्धन गेंदे का प्रवर्धन निम्नलिखित दो प्रकार से किया जा सकता हैः-

(अ) बीज/प्रारपंरिक विधि गेंदे के बीज फसल के अनुसार पूरे वर्ष बोए जा सकते हैं। नर्सरी उगाने के लिए प्रति हेक्टेयर 800-1000 ग्राम बीज की आवश्यकता होती है। व्यावसायिक स्तर पर गेंदे का प्रवर्धन बीज द्वारा ही किया जाता है सामान्यत: बीज द्वारा पौद तैयार करने की विधि निम्न प्रकार है:

नर्सरी बेड की तैयारी एवं बीज बोना

गेंदे की पौद तैयार करने के लिए सामान्यत: ऊंची जमीन का चुनाव करना चाहिए जहां पर पानी का जमाव न होता हो। नर्सरी बेड लगभग 1 मी. चौडी तथा जमीन की सतह से 15 से.मी. ऊंची बनाते हैं और लंबाई आवश्यकतानुसार रख सकते हैं। दो क्यारियों के बीच 30-40 से.मी. का अंतर होना चाहिए ताकि अंतसस्यन का कार्य आसानी से किया जा सके। नर्सरी की क्यांरी की मिट्टी अच्छी तरह भुरभुरी करके सड़ी हुई गोबर की खाद (10 किलोग्राम/वर्ग मीटर) की दर से मिला देते हैं। बीज बोने से पहले सभी क्यारियों को केप्टान/कर्बेन्डाजिम (2

ग्राम/लीटर) के घोल द्वारा सींच देना चाहिए जिससे नर्सरी में हानिकारक कवकों का प्रकोप कम हो जाता है एवं बीज के अंकुरण के बाद पौधों की मृत्यु की आशंका खत्म हो जाती है। नर्सरी में बीज से बीज की दूरी 1-2 से.मी. होनी चाहिए क्योंकि पास-पास में बीज की बुआई होने के कारण पौद कमजोर हो जाती है जिससे मुख्य खेत में उसकी बढ़वार तथा पुष्प उत्पादन में कमी आती है। बीज की बुआई के पश्चात मल्चिंग (पलवार) के रूप में सड़ी पत्ती या गोबर की खाद को बालू में मिलाकर बिछाना चाहिए। ऐसा करने से क्यारी में हर समय नमी बनी रहती है एवं बीज का अंकुरण भी अच्छा होता है। बीजाई के बाद क्यारियों को हजारा द्वारा सिंचना चाहिए तथा बीज को अंकुरण के बाद हल्का पानी लगाना चाहिए। नर्सरी में लगातार नमी बनाए रखने के लिए मौसम के अनुसार सिंचाई सुनिश्चित करें।

विभिन्न मौसमों में गेंदे की बुआई और रोपाई की समय सारणी

फसल	**बीज बुआई का समय**	**पौद रोपण का समय**
वर्षाकालीन फसल	मध्य जून से जुलाई प्रथम सप्ताह	जुलाई प्रथम सप्ताह से आखिरी सप्ताह तक।
शरदकालीन फसल	मध्य सितंबर से मध्य अक्टूबर	अक्टूबर प्रथम सप्ताह से नवंबर प्रथम सप्ताह तक।
ग्रीष्मकालीन फसल	मध्य जनवरी से फरवरी के अंतिम सप्ताह	फरवरी-मार्च।

(ब) **कायिक प्रवर्धन** कायिक प्रवर्धन के लिए कलम उपयुक्त रहती है। कलम की लंबाई 6-8 से.मी. होनी चाहिए। पौद से शीर्ष कलम लेने के पश्चात निचले हिस्से को 3-4 से.मी. तक पत्तियां को निकाल देना चाहिए। इसके बाद कलम को जड़ उत्प्रेरक हार्मोन (आई. बी. ए. 250 से 300 पी. पी. एम.) द्वारा उपचार करके उपलब्धता अनुसार मिट्टी या मिट्टी रहित मीडिया में लगाना चाहिए। नमी बनाए रखने के लिए सुबह-शाम हजारा की सहायता से पानी का छिड़काव करना चाहिए। शीर्ष कलम लगाने के 10-12 दिन बाद शीर्ष कलम से जड़ आना आरंभ हो जाता है। इस प्रकार कायिक प्रवर्धन विधि से 20-25 दिन में पौद रोपण हेतु तैयार हो जाती है।

खाद एवं उर्वरक: खाद एवं रसायनिक उर्वरक देने से गेंदे के पौधों की वृद्धि एवं विकास सही से होता है एवं पुष्पोत्पादन भी बढ़ जाता है। गोबर की सड़ी हुई खाद 20-25 टन/हेक्टेयर की दर से डालना चाहिए। इसके अतिरिक्त रसायनिक उर्वरकों के द्वारा 100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 80 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 80 कि.ग्रा. पोटाश/हेक्टेयर की दर से डालना चाहिए। नाइट्रोजन की मात्रा तीन बराबर भागों में बांटकर क्यारी के तैयारी के समय, रोपाई के 30 दिन बाद एवं रोपाई के 60 दिन बाद उपयुक्त उर्वरक को बराबर-बराबर भाग में देना चाहिए। फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा को क्यारियों की तैयारी के समय मिट्टी में मिला देना चाहिए।

शीर्षनोचन (पिंचिंग): पौद रोपण के एक महीने पश्चात शीर्ष कलिकाओं को दो पत्तियों सहित हाथ से तोड़ देने को 'शीर्षनोचन' कहते हैं। जिससे सहायक शाखाएं अधिक संख्या में निकलती है, जो कि पौधे का फैलाव बढ़ाने में सहायक होती हैं। प्रथम शीर्षनोचन रोपाई के एक माह पश्चात जब पौधों की लंबाई लगभग 15-20 से.मी. हो जाए तब करनी चाहिए। एक बार पुनः सहायक शाखाओं को ऊपर से दो पत्तियों सहित तोड़ देना चाहिए, इससे अत्याधिक शाखाएं निकलती हैं तथा पुष्पों की संख्या में काफी बढ़ोतरी होती है।

सिंचाई: गेंदे की खेती में पौद वृद्धि एवं विकास के लिए सिंचाई एक अति महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। मृदा में अच्छी नमी होने से पौधों का विकास एवं वृद्धि अच्छे से होती है एवं मृदा में उपस्थित रसायनिक तत्व को पौधों तक पहुंचाने में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। गर्मीयों के समय में 4-5 दिन के अंतराल पर एवं सर्दियों में 8-10 दिन अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

गुड़ाई एवं खरपतवार नियंत्रण: फसल को खरपतवार मुक्त रखने के लिए पौधों की रोपाई के लगभग एक माह बाद से ही क्यारी की गुड़ाई शुरू कर देनी चाहिए। ऐसा करने से मिट्टी भुरभुरी बनी रहती है जिससे जड़ों की अच्छी वृद्धि एवं विकास होता है। मिट्टी की गुड़ाई बहुत गहरी नहीं करनी चाहिए। मिट्टी की अधिक गहराई तक गुड़ाई करने से जड़ों की क्षति होने की संभावना अधिक बढ़ जाती है। खरपतवार जब कायिक अवस्था में रहें उसी समय जड़ सहित उखाड़कर बाहर कर देना चाहिए जिससे मुख्य फसल कमजोर न हो।

फूलों की तुड़ाई एवं उपज: फूलों की तुड़ाई का कार्य प्रातः काल या शाम के समय करना चाहिए। फूलों को पौधों से तब तोड़ते है जब पुष्प पूर्ण रूप से खिल जाए। फूलों को तोड़ने के पश्चात अधिक नमी उपस्थित होने की अवस्था में छायादार स्थान पर समरूप से फैला देना चाहिए तथा फूलों में नमी कम होने के पश्चात उन्हें हल्के टाट पर या बांस की टोकरियों में पैकिंग करके बाजार भेजा जाता है।

उपज: ताजे फूलों की उपज किस्मों, ऋतु और देख-रेख के ऊपर निर्भर करती है। यदि सही तरीके से फसल पर ध्यान देकर उन्नत वैज्ञानिक तरीके से खेती की जाए तो अफ्रीकी गेंदे से 200-250 क्विंटल/हेक्टेयर एवं फ्रेंच गेंदे से 180-200 क्विंटल/हेक्टेयर औसतन फूलों की उपज प्राप्त की जा सकती है।

कीट और उनका रोकथाम

लाल मकड़ी कीट यह गेंदे की पत्तियों का रस चूस लेता है। कीट द्वारा रस चूसने के कारण पत्तियां हरे रंग से भूरे में परिवर्तित हो जाती है और पौधों की वृद्धि एवं विकास रूक जाता है। अत्यधिक प्रकोप की दशा में पौधा बिल्कुल भी फूल उत्पादन नहीं कर पाता है। जो कलिया बनती है वह भी नहीं खिल पाती हैं। इसकी रोकथाम के लिए केलथेन (1 मि.ली./लीटर पानी में घोल) का छिड़काव करना चाहिए।

एफिड: एफिड पौधों का रस चूसने वाला कीट है जो पौधे के सबसे कोमल भागों मुख्यतः सिरा, पत्तियां एवं फूलों को क्षति पहुंचाते है। इसकी रोकथाम के लिए इमिडाक्लोरप्रिड (2 ग्राम/लीटर पानी में घोल बनाकर) का छिड़काव करना चाहिए।

कैटरपिलर: यह पत्तियों, टहनियों एवं कलियों को नुकसान पहुचाते हैं। इसके रोकथाम के लिए साइपरमेंथ्रिन (1 मि.ली./लीटर पानी में घोल बनाकर) का छिड़काव करना चाहिए।

थ्रिप्स: थ्रिप्स पौधों का रस चूसने वाला कीट है जो पौधों को क्षतिग्रस्त करता है जिनके कारण पौधा विकृत हो जाता है। इसके नियंत्रण के लिए पीला चिपचिपा जाला या एजाडिरेक्टीन (3 मि.ली./लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव) का करना चाहिए।

रोग एवं उनके रोकथाम

आर्द्रगलन: यह रोग मुख्यतः राइजोकटोनिया सोलेनाई, फाइटोप्थोरा जाति एवं पीथियम जाति इत्यादि कवकों द्वारा होता है। यह रोग आमतौर पर नर्सरी अवस्था के दौरान देखा जाता है। इस रोग में पौद का निचला भाग सड़ने के कारण पौद सूख जाती है। इसकी रोकथाम के लिए नर्सरी तैयार करते समय मिट्टी को फार्मएल्डिहाइड या कार्बेन्डाजिम (2 ग्राम/लीटर पानी का घोल बनाकर) का छिड़काव करना चाहिए।

पर्ण चित्ती एवं अंगमारी: यह रोग अल्टरनेरिया टेगेरिका कवक संपर्क में आने के कारण होता है। इस रोग से प्रभावित पौधों की पत्तियों पर भूरे रंग के धब्बे आरंभ होकर पूरी पत्तियों में फैल जाते हैं जिसके कारण धीरे-धीरे पौधों की पत्तियां खराब हो जाती है। इस रोग के रोकथाम के लिए डायथेन एम-45 का (0.2 प्रतिशत घोल बनाकर) पौधों में छिड़काव करना चाहिए।

चूर्णिल आसिता: गेंदे में यह रोग ओडियम जाति और लोविल्ला टाउरिका कवकों के संक्रमण होने के कारण होता है। इस रोग में पौधों की पत्तियों में सफेद चूर्ण की वृद्धि दिखाई देने लगती है जो कि कुछ समय बाद पूरी पत्तियों में फैल जाती है। इस रोग के कारण फूलों के आकार में वृद्धि नहीं हो पाती है। इस रोग की रोकथाम के लिए कैराथेन (1 मि.ली./लीटर पानी में घोलकर) का छिड़काव करना चाहिए।

सही स्थान पर बोया गया सुकर्म का बीज ही महान फल देता है।

- कथा सरित्सागर

शून्य लागत प्राकृतिक खेती- एक भ्रामक, अदृढ़ एवं अपरिपक्व विचार

डॉ. दिनेश कुमार

सस्य विज्ञान संभाग

भा.कृ.अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

डॉ. सुभाष पालेकर के अनुसार शून्य लागत प्राकृतिक खेती, जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, खेती का एक तरीका है जहां फसलों को उगाने और कटाई करने की लागत शून्य है। इसका मतलब है कि किसानों को फसलों के स्वस्थ विकास को सुनिश्चित करने के लिए उर्वरकों और कीटनाशकों की खरीद की आवश्यकता नहीं है। यह मूल रूप से, एक प्राकृतिक कृषि तकनीक है जो रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के बजाय जैविक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का उपयोग करती है। फसल सुरक्षा के लिए किसान केंचुओं, गोबर, मूत्र, पौधों, मानव मल और ऐसे जैविक उर्वरकों का उपयोग करते हैं। डॉ. पालेकर का मत है कि यह किसानों के निवेश को कम करता है और मिट्टी को क्षरण से भी बचाता है। यह एक सामाजिक और पर्यावरणीय कार्यक्रम दोनों के रूप में, इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि खेती - विशेष रूप से लघुधारक खेती - कृषि जैव विविधता और पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं को बढ़ाकर आर्थिक रूप से व्यवहार्य है। यह बाहरी आदानों (इनपुट्स) को खत्म करने और इन-सीटू (प्रक्षेत्र) पर उपलब्ध संसाधनों का उपयोग करके मिट्टी को फिर से जीवंत करने, साथ ही प्रक्षेत्र आय बढ़ाने, और विविध, बहुस्तरीय फसल प्रणालियों के माध्यम से पारिस्थितिकी तंत्र के स्वास्थ्य को बहाल करने के माध्यम से लागत को कम करता है।

मिट्टी की उर्वरता और पोषक तत्वों को पुनर्जीवित करने के लिए स्थानीय गायों से प्राप्त गोबर एक चमत्कारी इलाज साबित हुआ है। माना जाता है कि गाय के गोबर का एक ग्राम 300 से 500 करोड़ लाभदायक सूक्ष्मजीवों को धारण करता है। ये सूक्ष्मजीव मिट्टी पर सूखे बायोमास को विघटित करते हैं और इसे पौधों के लिए तैयार पोषक तत्वों में परिवर्तित करते हैं। वैश्विक उष्मन (ग्लोबल वार्मिंग) के कारण भारत के एक बड़े हिस्से में भू-जल में गिरावट आई है और जल उपलब्धता में निरंतर कमी आ रही है। भारत में सूखाग्रस्त क्षेत्र कथित तौर पर शून्य लागत प्राकृतिक खेती के साथ खेतों में पहले से ही आशाजनक परिवर्तन देख रहे हैं (पालेकर, 2018)। जीरो लागत प्राकृतिक खेती के लिए केवल 10 प्रतिशत पानी और 10 प्रतिशत बिजली की आवश्यकता होती है। शून्य लागत प्राकृतिक खेती जलवायु परिस्थितियों को विकसित करने के लिए अनुकूल और उत्पादित होने के लिए फसलों की क्षमता में सुधार कर सकता है (पालेकर, 2008)।

शून्य लागत प्राकृतिक खेती के चार स्तंभ

डॉ. सुभाष पालेकर के अनुसार शून्य लागत प्राकृतिक खेती के प्रमुख चार स्तंभ निम्नलिखित हैं:

1. जीवामृत

यह एक प्रकार का किण्वित सूक्ष्मजीव टीका (कल्चर) है। यह पोषक तत्व प्रदान करता है, लेकिन सबसे महत्वपूर्ण, एक उत्प्रेरक एजेंट के रूप में भी कार्य करता है जो मिट्टी में सूक्ष्मजीवों की गतिविधि को बढ़ावा देता है, साथ ही साथ केंचुआ गतिविधि को भी बढ़ाता है; 48 घंटे की किण्वन प्रक्रिया के दौरान, गोबर और मूत्र में मौजूद वायवीय और अवायवीय जीवाणु कार्बनिक पदार्थों (जैसे दाल का आटा) को कई गुना बढ़ा देते हैं। तैयारी के लिए मुट्ठी भर अविवेकी मिट्टी को भी जोड़ा जाता है, क्योंकि देशी प्रजातियों के रोगाणुओं और जीवों का टीकाकरण किया जाता है। जीवामृत कवक और जीवाणु-जनित पौधों की बीमारियों को रोकने में मदद करता है। डॉ. पालेकर का सुझाव है कि जीवनमृत का संक्रमण केवल आरंभ के 3 वर्षों के लिए ही आवश्यक है, जिसके बाद यहां प्रणाली आत्मनिर्भर हो जाती है। बनाने की विधि - एक बैरल में 200 लीटर पानी डालें; 10 किलोग्राम

ताजा स्थानीय गोबर और 5 से 10 लीटर वृद्ध गोमूत्र; 2 किलोग्राम गुड़ (एक स्थानीय प्रकार की ब्राउन शुगर), 2 किलोग्राम दाल के आटे और मुट्ठी भर मिट्टी। घोल को अच्छी तरह से फेंट लें और इसे छांव में 48 घंटे के लिए रख दें। अब जीवामृत उपयोग के लिए तैयार है। एक एकड़ भूमि के लिए 200 लीटर जीवामृत पर्याप्त रहता है।

2. बीजामृत

यह बीज, बीजू-पौधों अथवा अन्य किसी भी रोपण सामग्री के साथ उपयोग किया जाने वाला उपचार है। बीजामृत फसलों को मिट्टी अथवा बीज-जनित रोगों से बचाने में काफी प्रभावी है जो आमतौर पर मानसून की अवधि के बाद पौधों को प्रभावित करते हैं। यह स्थानीय गाय का गोबर, गोमूत्र, चूना, मिट्टी से बनाया जाता है। यह किसी भी फसल के बीज में मिलाया जा सकता है।

3. आच्छादन

पलवार (मल्च) मृदा की ऊपरी सतह की रक्षा करती है। यह मिट्टी में वातन और जल प्रतिधारण को बढ़ावा देता है। डॉ. पालेकर ने गहरी जुताई से बचने का भी सुझाव दिया। स्ट्रॉ मल्च (भूसा अथवा अवशेष पलवार): स्ट्रा सामग्री आमतौर पर पिछली फसलों के सूखे बायोमास अपशिष्ट को संदर्भित करती है, लेकिन जैसा कि डॉ. पालेकर का सुझाव है, यह किसी भी जीवित प्राणी (पौधों, जानवरों, आदि) की मृत सामग्री से बनाया जा सकता है। लाइव मल्च (सहजीवी अंतरवर्ती एवं मिश्रित फसलें): क्षेत्र, मिट्टी और फसलों के लिए सभी आवश्यक तत्वों की आपूर्ति करने के लिए दलहनी फसलों को गैर-दलहनी फसलों के साथ अंतरवर्ती फसल के रूप में उगाना चाहिए।

4. वापसा - नमी

डॉ. पालेकर इस विचार को चुनौती देते हैं कि पौधों की जड़ों को बहुत अधिक पानी की आवश्यकता होती है, इस प्रकार हरित क्रांति की खेती में सिंचाई पर निर्भरता का सामना करना पड़ता है। उनके अनुसार, जल वाष्प की पौधों को अच्छी वृद्धि के लिए आवश्यक रूप से आवश्यकता होती है। वापसा वह स्थिति है जहां मिट्टी में हवा के अणु और पानी के अणु दोनों मौजूद होते हैं, और यह दशा सिंचाई को कम करने में सहायक है। साथ ही डॉ. पालेकर का मत है कि केवल दोपहर में सिंचाई की जानी चाहिए।

मिथक एवं विरोधाभास

- शून्य लागत प्राकृतिक खेती के निष्ठावान समर्थक डॉ. सुभाष पालेकर ने उपरोक्त सभी स्तंभों के बारे में विस्तार से विचार प्रस्तुत किए हैं। उनके ये विचार आम जनता को उनके द्वारा दिए गए भाषणों, लेखों, इंटरनेट, गोष्ठियों, और पुस्तकों आदि से संज्ञान में आए हैं। आधुनिक विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में इनके अधिकतर विचार विरोधाभासी, अद्र्ध एवं अपरिपक्व हैं। कई बार तो उनके मत वैज्ञानिकों द्वारा जनित विभिन्न कृषि पद्धतियों एवं ज्ञान को अनावश्यक रूप से चुनौती देते हैं। उदाहरण के लिए डॉ. पालेकर ने कहा है कि हरित क्रांति ने किसानों को विनाश और आत्महत्या के लिए मजबूर किया था और हरित क्रांति ने किसानों पर कर्ज बढ़ा दिया। जबकि यह कहीं से भी सत्य प्रतीत नहीं होता है और इसके विपरीत हरित क्रांति ने तो देश को खाद्य सुरक्षा में आत्म-निर्भर बनाया है।
- डॉ. पालेकर का मानना है कि जैविक खेती परमाणु बम से भी ज्यादा खतरनाक है। इस तरह के विचार भी निराधार हैं। इस तरह के अनेक विचार उनके द्वारा प्रचारित एवं प्रसारित किए गए हैं। डॉ. पालेकर के इस तरह के विचार विडंबनाओं और मिथकों से भरे हुए हैं। वह एक उन्नीसवीं सदी के मिट्टी रसायन विज्ञान के अग्रदूत जस्टस वॉन लिबिग (1803-1873) को "मिस्टर लाइ बिग" कहते हैं; बायोडायनामिक खेती को "जैव-डायनामाइट खेती", हरित क्रांति को "आत्महत्या क्रांति" के रूप में संदर्भित करते हैं। उनका मत है कि ट्रैक्टर एक दानव है, जो आपके भविष्य को नष्ट कर देता है। यह ट्रैक्टर आपको दूध, गोबर या मूत्र नहीं देता है, लेकिन यह डीजल पीता है। इस तरह के दुष्प्रचार सर्वथा निंदनीय हैं।

- डॉ. पालेकर के मतानुसार भारत में कई गैर-सरकारी संस्थाओं द्वारा वर्मीकंपोस्ट उत्पादन के बारे में लगातार प्रचार किया जा रहा है जो विदेशी फंडिंग संस्थाओं द्वारा वित्त पोषित हैं। 2001 के बाद से, कुछ राज्य सरकार और उनके कृषि विभागों ने अनुदान देकर इस वर्मीकंपोस्ट प्रौद्योगिकी के बारे में प्रचार को बढ़ाना देना शुरू किया था। इन सभी गैर-सरकारी संस्थाओं और सरकारों ने एक केंचुआ किस्म, आइसेनिया फेटिडा का उपयोग आरंभ किया है, जो एक विदेशी किस्म है, जिसे पश्चिमी देशों से आयात किया जाता है। यह आइसेनिया फेटिडा किस्म एपिजेयिक है यानी सतह पर रहने वाली प्रजातियां, जो केवल मिट्टी पर उपलब्ध कार्बनिक पदार्थों पर रहती हैं, किसी भी तरह के वनस्पति शवों और जानवरों के उत्सर्जन के सूखे बायोमास हो सकती हैं। वे मिट्टी में नहीं डूबते। इसलिए वे गहरी मिट्टी को कास्टिंग में नहीं बदल सकते हैं, जो पौधों के विकास के लिए आवश्यक खनिजों का सबसे समृद्ध भंडार है। इस प्रकार के विचार पूर्णतः भ्रामक एवं अवैज्ञानिक हैं। डॉ. पालेकर जी का मत है कि स्थानीय केंचुए मिट्टी का दिल होते हैं, वे कास्टिंग पर या इस आइसेनिया फेटिडा की कास्टिंग पर फ़ीड नहीं कर सकते। ये विदेशी आइसेनिया फेटिडा मिट्टी के भौतिक और रासायनिक गुणों को बनाए नहीं रख सकते। डॉ. पालेकरजी के उपरोक्त विचार पूर्णतः भ्रामक एवं अवैज्ञानिक हैं। इनका कोई भी वैज्ञानिक आधार नहीं है।
- प्रमुख पत्रकारों में से एक, श्री विवियन फर्नांडीस ने हाल ही में डॉ. पालेकर के खेतों का भ्रमण किया और डॉ. पालेकर के प्रतिनिधि के साथ उनके खेत में और साथ ही डॉ. पालेकर के खेत के पास किसानों के साथ बातचीत की। लेख "क्या शून्य लागत प्राकृतिक खेती अच्छी है? एक रियलिटी चेक "15 जुलाई 2019 के 'क्विंट' संस्करण में दिखाई दिया। उपर्युक्त सभी लेख यह निष्कर्ष निकालते हैं कि शून्य लागत प्राकृतिक खेती के दावे संदिग्ध हैं और इसे वैज्ञानिक मान्यता की आवश्यकता है। इसलिए, इसके व्यापक प्रसार को अपनाने की सिफारिश करने के लिए समय से पहले पिछले 70 वर्षों में कृषि अनुसंधान एवं विकास के कठिन ज्ञान और लाभों का भारी नुकसान हो सकता है।

शून्य लागत प्राकृतिक खेती ने वास्तव में किसानों के साथ-साथ कुछ राज्य सरकारों और अब यहां तक कि संघीय सरकार को भी इसके वैज्ञानिक सत्यापन के बिना वित्त पोषण संस्थाओं के बीच रुचि पैदा की है। भा.कृ.अनु.प. के एक संस्थान, भारतीय कृषि प्रणाली अनुसंधान संस्थान, मोदी पुरम ने शून्य लागत प्राकृतिक खेती की वैज्ञानिक वैधता पर अनुसंधान कार्य आरंभ किया है। आरंभिक अनुसंधान परिणाम दर्शाते हैं कि शून्य लागत प्राकृतिक खेती को अपनाने से गेहूं की पैदावार में लगातार गिरावट आ रही है। प्रौद्योगिकी, वैज्ञानिक ज्ञान पर आधारित, विकास का चालक है और विज्ञान की भावना यह मांग करती है कि खेती की यह नई प्रणाली, जिसमें विशाल संसाधनों (खासकर धन) का निवेश किया जाना प्रस्तावित है, कि वैज्ञानिक रूप से जांच/मूल्यांकन किया जाए। इस अवधारणा के वैज्ञानिक औचित्य और खाद्य उत्पादन और प्राकृतिक संसाधनों पर इसके प्रभाव को समझने की नितांत आवश्यकता है।

सफलता की कहानी

डॉ. जे.पी.एस. डबास एवं विजयभान सिंह

कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानांतरण केंद्र,
भा.कृ.अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

श्री अभिषेक धामा गांव कुलकपुर, पोस्ट पल्ला, राज्य दिल्ली के निवासी हैं। जिनके पिताजी परंपरागत खेती किया करते थे। पिता के असामयिक निधन हो जाने के कारण घर का जरूरी खर्च चल पाना कठिन हो गया था। युवा प्रगतिशील सोच का अभिषेक धामा इंजीनियरिंग की स्नातक की पढ़ाई पूरी करने के पश्चात अपने पिताजी के जिम्मेदारियों का निर्वाह करते हुए खेती के साथ रिश्ता जोड़ लिया और खेती की तरफ तन-मन से जुड़ गया। धीरे-धीरे उसका रूझान खेती में बढ़ने लगा और अधिक आय प्राप्त करने के लिए तरह-तरह की सोच रखने लगा। कृषि को व्यवसाय के रूप में अपनाकर आर्थिक समृद्धि का सपना संजोकर आगे का सफर पूरा करना एक चुनौतीपूर्ण लक्ष्य था जो नौकरी से संभव नहीं था। परिवार में परंपरागत खेती से कुल आय ढाई से तीन लाख तक सीमित थी इसको अधिक करने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानांतरण केंद्र के वैज्ञानिकों के संपर्क से बायोगैस और जैविक खेती संबंधित विषयों पर परामर्श लेकर खेती करने का संकल्प लिया और अपनी ग्यारह हेक्टेयर भूमि में विविध प्रकार की फसलें जैसे बासमती चावल, गेहूं, सब्जियों और औषधीय फसलों की खेती करने लगा, विशेष रूप से सब्जी की खेती, उसके लिए नर्सरी स्वयं उगाना और सूक्ष्म सिंचाई के माध्यम से अपने खेत में स्वयं द्वारा विकसित जैव उर्वरक और कवकनाशी का उपयोग करते हुए जैविक खेती के लिए करने लगा।

अभिषेक धामा से बातचीत करने के दौरान वे बड़ी खुशी के साथ कहते हैं कि वर्टिकल खेती एवं बहुपरती खेती के अंतर्गत सब्जी जैसे ककडी, खीरा, टमाटर, शिमला मिर्च, घीया, तोरी, करेला इत्यादि उगाने वाला क्षेत्र में पहला व्यक्ति हूं। इसके साथ-साथ बताते हैं कि मैंने अभी 25 लाख का लाभ प्राप्त किया जिसे मचान खेती का ढांचा तैयार करने और अन्य खेती के कार्यो में ही खर्च किया। साथ ही साथ मूल्य वर्धित उत्पाद जैसे स्टीविया तरल ड्रॉप, सूखे पत्ते का पाउडर, स्टीविया चाय और काफी, कुकीज आदि को विकसित करने के लिए स्टीविया का प्रसंस्करण भी कर रहा हूं। श्री धामा पहले किसान है जिन्होंने राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में स्टीविया के साथ-साथ जर्मन कैमेमाइल, जिरोनियम और मुकुना प्रॉयूरीन्स की खेती शुरू की है। इन्होंने अपने खेत पर ही एक बड़ा बायोगैस संयंत्र स्थापित किया जिससे स्लरी को अपने खेत में जैविक खेती हेतु प्रयोग करते हैं, और इससे सब्जियां उगाते हैं। अपने खेत पर एक विपणन केंद्र भी बना रखा है जहां ताजी सब्जियों की ग्रेडिंग करके सुंदर पारदर्शी पैकिंग करके बिक्री का कार्य करते हैं। ये सब्जियां जैविक होने के कारण राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के नजदीक के व्यापारी उच्च कीमत पर अग्रिम बुकिंग कराते हैं और अपने-अपने वाहनों से खरीदकर ले जाते हैं, जो अपने ढंग से बेचते हैं। चर्चा के दौरान बड़ी प्रसन्नता जाहिर करते हुए अभिषेक धामा कहते हैं कि मेरी बेचने की समस्या नहीं रहती हैं और मुझे अन्य बाजारों की अपेक्षा सब्जियां अधिकतम कीमत पर मेरे खेत से ही बिक जाती हैं जो काफी मुनाफा देती है। आज मैं इतना व्यस्त होने के साथ-साथ बहुत खुश हूं कि लोग हमारी जैविक खेती और उन्नत सिंचाई प्रणाली द्वारा खेती के तरीकों को सीखने के लिए काफी किसानों के समूह आते हैं और हमसे बात करने के लिए देश के संचार माध्यम के प्रतिनिधि भी आते रहते हैं।

मुझे 2020 में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान से नवोन्मेषी किसान पुरस्कार भी मिला जो मेरे लिए बड़ा गौरव का विषय रहा। कृषि को व्यावसायिक आधार देने के पश्चात वार्षिक आय 25 से 30 लाख रूपए है जो नौकरी से संभव नहीं था। इसको विस्तृत रूप देने के लिए अन्य किसानों से जमीन ठेके पर लेकर वैज्ञानिक ढंग से उच्च गुणवत्ता युक्त कृषि उत्पाद पैदा करने और प्रसंस्कृत करके विपणन करने की सोच है जो मेरी सफलताओं के सपने को साकार कर सकती है।

जब तक आपके पास राष्ट्रभाषा नहीं, आपका कोई राष्ट्र नहीं।

- मुंशी प्रेमचंद

भारतीय भाषाएं नदियां हैं और हिंदी महानदी। हिंदी देश के सबसे बड़े हिस्से में बोली जाती है। हमें इसे राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करनी ही चाहिए। मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि हिंदी बिना हमारा काम चल नहीं सकता।

- रबिन्द्रनाथ टैगौर

राजभाषा खंड...

कविता

बरस रही है रिमझिम रिमझिम पुरवइया जलधार-
आओ पेड़ लगाएं, कर ले धरती का श्रृंगार।

धरती मां के कण-कण में, हर आंगन हरियाली हो
गांव-गाव और शहर-शहर में कोई न कोना खाली हो
हरियाली तो पर्यावरण में भरती नव संचार
आओ पेड़ लगाएं कर ले धरती का श्रृंगार।

हर घर में गांव नगर और बस्ती में बस यही पैगाम हो
हर पौधे पर भारत के, बच्चे-बच्चे का नाम हो
स्वर्ग बनाये धरती को हम वक्त की यही पुकार
आओ पेड़ लगाएं कर ले धरती का श्रृंगार।

वर्षा बादल नदियां झरने, पर्वत और समंदर जीवन का
है राज संतुलित,
पर्यावरण के अंदर सभी लगाएं वृक्ष धरा पर जग का हो
उपकार
आओ पेड़ लगाएं कर ले धरती का श्रृंगार।

(सुश्री नीलम)
सहा.प्रशा. अधिकारी, सुरक्षा अनुभाग, निदेशालय

जल

जल कहता है, मैं हूं जल, मुझे देखकर ही तू चल
मैं बहता रहता अविरल, पा लेता अपनी मंजिल
औरों को देखकर तू न चल, औरों को देख कर तू न
जल (ईर्ष्या)
मेरी तरह बन जा शीतल पार करेगा हर मुश्किल
मैं हूं सीधा और सरल, नमन करे मुझे दावानल
मेरा स्वरूप है इतना सरल, हर पथ मेरे लिए सरल
मेरे कहने पर तू चल, पाएगा तू मीठा फल
हर वस्तु मुझसे मिलकर, चुटकी में जाती है घुल
सर्दी गर्मी से मैं राहत देता, मेरे पास है प्यास का हल
मेरी तरह तू शीतल बन जा, हर मुश्किल जाए निकल
जल कहता है मैं हूं जल, मुझे देखकर ही तू चल ॥

रामकृष्ण यादव
पूर्व कृषि अधिकारी

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
राजभाषा प्रगति रिपोर्ट 2019-20

नित नए अनुसंधानों एवं प्रौद्योगिकियों के विकास का जनक यह भा.कृ.अनु.सं. प्रतिदिन प्रगति के नए आयाम छू रहा है। स्थापना के बाद से ही देश के नामी कृषि अनुसंधानों में भा.कृ.अनु.सं. का नाम अग्रणी रहा है। देश को खाद्यान्नों के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनाने वाली हरित क्रांति का जनक भी यही संस्थान रहा है। कृषि क्षेत्र के साथ राजभाषा के प्रचार-प्रसार हेतु किए गए प्रयासों की दृष्टि से भी संस्थान निरंतर ही प्रगतिशील है। उपलब्धियों की दृष्टि से वर्ष 2019-20 संस्थान के लिए गौरवपूर्ण रहा। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की तरफ से बड़े कार्यालय वर्ग में राजर्षि टंडन का प्रथम पुरस्कार से तथा **नराकास (उत्तरी दिल्ली) की तरफ से बड़े कार्यालय वर्ग में** तृतीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया। संस्थान में राजभाषा की प्रगति हेतु किये जा रहे अन्य प्रयास व उपलब्धियों का वर्णन निम्नवत है-

- संस्थान में राजभाषा विभाग के नियमानुसार प्रत्येक तिमाही में कार्यशालाओं का आयोजन किया जाता है। इस वर्ष से एक नवीन पहल के तौर पर यह निर्णय लिया गया कि हिंदी कार्यशालाओं का आयोजन सभी संभागों में बारी-बारी से जाकर किया जाएगा ताकि संस्थान के सभी अधिकारियों/कर्मचारियों को प्रशिक्षित किया जाना सुनिश्चित किया जा सके। इसके अंतर्गत इस वर्ष सबसे पहले कृषि अभियांत्रिकी संभाग में हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया जिससे संभाग के समस्त अधिकारी/कर्मचारी लाभान्वित हुए।
- संस्थान में राजभाषा के प्रगामी प्रयोग की स्थिति की मॉनीटरिंग के लिए गठित राजभाषा निरीक्षण समिति ने संभागों/निदेशक कार्यालय के अनुभागों का निरीक्षण किया तथा संबंधित निरीक्षित संभाग/अनुभाग को निरीक्षण रिपोर्ट भेजी गईं। इसके अलावा कुछ संभागों के औचक निरीक्षण भी किए गए। निरीक्षण के उपरांत संबंधित संभागों/अनुभागों/क्षेत्रीय केंद्रों पर हिंदी की वास्तविक प्रगति को वांछित गति प्राप्त हुई।
- संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन को वांछित गति प्रदान करने और अधिकारियों/कर्मचारियों में हिंदी में कार्य करने के प्रति जागरुकता का सृजन करने के लिए हिंदी चेतना मास के दौरान कुल दस प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया जिनमें प्रमुख थीं: वाद-विवाद, निबंध लेखन, काव्य-पाठ, टिप्पण एवं मसौदा लेखन, कंप्यूटर पर हिंदी टंकण, आशु-भाषण, प्रश्न-मंच, अनुवाद तथा श्रुतलेख। उक्त प्रतियोगिताओं में सभी वर्गों के अधिकारियों/कर्मचारियों ने बढ़-चढ़कर कर भाग लिया। इसके अतिरिक्त कुशल सहायी कर्मचारियों तथा दैनिक वेतनभोगी कर्मचारियों के लिए अलग से सामान्य ज्ञान-प्रतियोगिता भी आयोजित की गई।
- प्रत्येक वर्ष की भांति संस्थान के मेला ग्राउंड में 'कृषि उन्नति मेला' आयोजित किया गया। इस अवसर पर मुख्य पंडाल के सभी चित्रों के शीर्षक, ग्राफ, हिस्टोग्राम आदि हिंदी में प्रदर्शित किए गए। मल्टी मीडिया के माध्यम से कृषि संबंधी जानकारी आकर्षक ढंग से प्रस्तुत की गई तथा किसानों, छात्रों व अन्य आगंतुकों को कृषि साहित्य हिंदी में उपलब्ध कराया गया।
- संस्थान को मानद विश्वविद्यालय का दर्जा प्राप्त है। यहां एम.एससी. और पीएच.डी. की उपाधियां प्रदान की जाती हैं। संस्थान के सभी पीएच.डी. छात्रों को अपनी थीसिस का सारांश हिंदी में प्रस्तुत करना अनिवार्य है। संस्थान द्वारा आयोजित की जाने वाली पीएच. डी. प्रवेश परीक्षा

में अभ्यर्थियों को द्विभाषी माध्यम उपलब्ध कराया जा रहा है। इसी प्रकार संस्थान द्वारा बड़ी संख्या में किसानों, प्रसार कार्यकर्ताओं व उद्यमियों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। इन सभी प्रशिक्षण कार्यक्रमों में प्रतिभागियों को पाठ्य सामग्री हिंदी में उपलब्ध कराई जाती है तथा प्रशिक्षण का माध्यम भी हिंदी ही होता है।

- संस्थान का प्रकाशन कार्य सुचारू रूप से चल रहा है। संस्थान की वार्षिक रिपोर्ट हिंदी में भी प्रकाशित की जा रही है। संस्थान द्वारा पूसा सुरभि (वार्षिक), पूसा समाचार (तिमाही), प्रसार दूत (द्विमासिक) तथा सामयिकी (मासिक) जैसे नियमित प्रकाशनों के अलावा अनेक तदर्थ प्रकाशन, पैम्फेलेट तथा प्रसार बुलेटिन जारी किए जाते हैं।
- हिंदी बुलेटिन प्रकाशित करने के लिए संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) की अध्यक्षता में हिंदी प्रकाशन समिति गठित है जो प्रकाशन इकाई द्वारा हिंदी में तकनीकी बुलेटिन प्रकाशित करने के लिए विषयों का सुझाव देने, इन्हें तैयार करने के लिए वैज्ञानिकों की पहचान करने, वैज्ञानिकों द्वारा तैयार की गई पांडुलिपियों में शामिल किए जाने वाले पहलुओं पर सुझाव देने के अलावा उनका पुनरीक्षण भी करती है।
- संस्थान में हिंदी में पुस्तक लेखन को बढ़ावा देने के लिए सर्वश्रेष्ठ पुस्तक लेखन के लिए 'डॉ. रामनाथ सिंह पुरस्कार' द्विवार्षिक प्रदान किया जाता है। इस पुरस्कार योजना में 10,000/- रुपए नकद प्रदान किए जाते हैं। इसी प्रकार विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में हिंदी में वैज्ञानिक लेख लिखने पर एक पुरस्कार योजना भी चल रही है जिसमें प्रथम 7000/-, द्वितीय 5000/- तथा तृतीय 3000/- रुपये नकद पुरस्कार स्वरूप दिए जाते हैं। साथ ही हिंदी में व्याख्यान को बढ़ावा देने हेतु संस्थान के प्रवक्ताओं द्वारा हिंदी में सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक/तकनीकी व्याख्यान देने के लिए पूसा विशिष्ट हिंदी प्रवक्ता पुरस्कार के नाम से एक नकद पुरस्कार योजना चलाई जा रही है। इस योजना में प्रत्येक वर्ष 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार प्रदान किया जाता है। इसके साथ ही हिंदी में प्रशासनिक कार्य को बढ़ावा देने के लिए राजभाषा विभाग की नकद पुरस्कार योजना के तहत कुल दस कर्मचारियों को पुरस्कार प्रदान किए जाने का प्रावधान है जिसमें 5000/-रु. के दो प्रथम, 3000/-रु. के तीन द्वितीय तथा 2000/-रु. के पांच तृतीय पुरस्कार दिए जाते हैं।
- संस्थान के वैज्ञानिकों को हिंदी में शोध पत्र तैयार करने और उनका पॉवर प्वाइंट के माध्यम से प्रस्तुतीकरण के लिए प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से एक प्रतियोगिता/संगोष्ठी का आयोजन किया जाता है, जिसमें संस्थान के वैज्ञानिक निर्धारित विषय पर अपने शोध-पत्र का पावर प्वाइंट प्रस्तुतीकरण करते हैं। इस प्रतियोगिता में 10,000 रु., 7000 रु., 5000 रु. व 3,000, रु. 3000 रु. के दो कुल पांच नकद पुरस्कार प्रदान किए जाते है। इस वर्ष 'शून्य लागत प्राकृतिक खेती' विषय पर पावर प्वाइंट प्रस्तुतीकरण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया था।
- संस्थान द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'पूसा सुरभि' की मांग देश के किसान व आमजन के बीच बेहद बढ़ी है इसका उदाहरण समय-समय पर उनसे मिलने वाला फीडबैक और उनके द्वारा पत्रिका की मांग किया जाना है। पूसा सुरभि पत्रिका को उत्कृष्ट कृषि पत्रिका के लिए भा.कृ.अनु.प. द्वारा अनेक बार गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार मिल चुका है। साथ ही नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उत्तरी दिल्ली) द्वारा भी इसको सम्मानित किया गया है। पत्रिका को राजभाषा विभाग के निर्देशानुसार यूनिकोड में प्रकाशित किया जा रहा है।
- संस्थान की वेबसाइट पर सभी संभागों से संबंधित तकनीकी शब्दावली उपलब्ध करा दी गई है।
- संस्थान में हिंदी पुस्तकों की खरीद के लिए एक समिति बनाई गई है, जो हिंदी पुस्तकालय के लिए पुस्तकें खरीदने की सिफारिश करती है।

पुस्तकालय में प्रत्येक वर्ष राजभाषा विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्य के अनुसार पुस्तकें खरीदने का प्रयास किया जा रहा है। संस्थान के हिंदी पुस्तकालय में उपलब्ध सभी प्रकाशनों की सूची संस्थान की वेबसाइट पर उपलब्ध कराई गई है।

- राजभाषा विभाग, भारत सरकार के आदेशानुसार आशुलिपिकों तथा कनिष्ठ लिपिकों को क्रमश: हिंदी आशुलिपि व हिंदी टंकण का प्रशिक्षण प्राप्त करना अनिवार्य है। इसी क्रम में राजभाषा विभाग द्वारा चलाये जा रहे हिंदी आशुलिपि प्रशिक्षण में संस्थान के तीन नवनियुक्त आशुलिपिकों को हिंदी आशुलिपि प्रशिक्षण के लिए नामित किया गया है। इसी अनिवार्यता को ध्यान में रखते हुए संस्थान स्तर पर भी हिंदी टंकण प्रशिक्षण केंद्र स्थापित है, जिसमें संस्थान में नव-नियुक्त सहायकों तथा कनिष्ठ लिपिकों को हिंदी टंकण का प्रशिक्षण दिया जाता है। इसके अलावा प्रशिक्षित कार्मिकों के लिए समय-समय पर पुनश्चर्या प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन भी किया जाता है।
- संस्थान के जिन अधिकारियों और कर्मचारियों को हिंदी में प्रवीणता प्राप्त है उन्हें निदेशक महोदय द्वारा राजभाषा नियम 8(4) के तहत अपना शत-प्रतिशत प्रशासनिक काम हिंदी में करने के लिए प्रतिवर्ष व्यक्तिश: आदेश जारी किए जा रहे हैं। इसके अलावा संस्थान के सभी संभागों/अनुभागों को अपना शत-प्रतिशत सरकारी काम हिंदी में करने के लिए विनिर्दिष्ट किया गया है। इसके परिणामस्वरुप रिपोर्टाधीन वर्ष में संस्थान में राजभाषा के प्रयोग में उल्लेखनीय प्रगति हुई है।
- संस्थान को प्राप्त होने वाले सभी हिंदी पत्रों के उत्तर अनिवार्यत: हिंदी में दिए जा रहे हैं, 'क' और 'ख' क्षेत्रों में स्थित सरकारी कार्यालयों के साथ अब लगभग 90 प्रतिशत से अधिक पत्र-व्यवहार हिंदी में किया जा रहा है। इन दोनों क्षेत्रों में स्थित कार्यालयों से प्राप्त अधिकांश अंग्रेजी पत्रों के उत्तर भी हिंदी में दिए जा रहे हैं। मूल पत्राचार अधिकाधिक हिंदी में करने को बढ़ावा देने के लिए संस्थान के सभी संभागों व केंद्रों के बीच हिंदी व्यवहार प्रतियोगिता चलाई जा रही है, जिसमें वर्षभर सबसे अधिक पत्राचार हिंदी में करने वाले संभाग/केंद्र को पुरस्कार स्वरुप प्रशस्ति पत्र व शील्ड प्रदान की जाती है।
- संस्थान में फाइलों पर हिंदी में टिप्पणियां लिखने में भी बहुत प्रगति हुई है, सेवा-पुस्तिकाओं व सेवा संबंधी अन्य अभिलेखों में अब लगभग सभी प्रविष्टियां हिंदी में की जा रही हैं और राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) का कड़ाई से अनुपालन किया जा रहा है। संस्थान में हिंदी को दैनिक प्रशासनिक कार्यों में बढ़ावा देने के उद्देश्य से फाइल कवर पर ही हिंदी-अंग्रेजी की प्रासंगिक टिप्पणियां प्रकाशित की गई हैं।
- संस्थान के अधिकारियों तथा कर्मचारियों के हिंदी शब्द ज्ञान को बढ़ाने के उद्देश्य से निदेशक कार्यालय व एनेक्सी भवन के प्रवेश द्वारों पर डिजिटल बोर्ड स्थापित किए गए हैं। जिसमें प्रतिदिन हिंदी का एक शब्द उसके अंग्रेजी समानार्थ व एक सुविचार के साथ प्रदर्शित होता है। इसके अतिरिक्त संस्थान के सभी संभागों/केंद्रों/इकाइयों के प्रवेश द्वारों पर लगे सूचना पट्टों पर 'आज का शब्द' शीर्षक के अंतर्गत भी हिंदी का एक शब्द उसके अंग्रेजी समानार्थ के साथ लिखा जाता है, ताकि आते-जाते कर्मचारियों की नज़र इन पट्टों पर पड़े और उनके शब्द ज्ञान में वृद्धि हो सके।
- राजभाषा विभाग के आदेशानुसार संस्थान के सभी कंप्यूटरों में हिंदी में यूनिकोड में काम करने की सुविधा उपलब्ध कराई गई है।
- संस्थान के सभी संभागों/क्षेत्रीय केंद्रों में राजभाषा कार्यान्वयन उप-समिति गठित है, जिनकी नियमित रूप से बैठकें आयोजित की जा रही हैं। संस्थान के हिंदी अनुभाग द्वारा इसकी निगरानी की जाती है।
- संस्थान, राजभाषा विभाग द्वारा गठित की गई नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उत्तरी

दिल्ली) का भी सदस्य है। उक्त समिति की बैठकों में नगर में स्थित केंद्रीय सरकार के सदस्य कार्यालयों/उपक्रमों आदि में राजभाषा हिंदी में निष्पादित कामकाज/गतिविधियों की समीक्षा की जाती है। राजभाषा विभाग के आदेशानुसार समिति की बैठकों में संस्थान से निदेशक और संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) द्वारा सक्रिय रूप से भाग लिया जाता है।

- संभागों/अनुभागों/क्षेत्रीय केंद्रों में हिंदी की प्रगति को वांछित गति प्रदान करने, राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक में लिए गए निर्णयों को क्रियान्वित करने तथा संभाग एवं हिंदी अनुभाग के बीच संपर्क-सूत्र के रूप में कार्य करने के उद्देश्य से प्रत्येक संभाग/केंद्र में राजभाषा नोडल अधिकारी नामित किए गए हैं। इसके तहत सर्वश्रेष्ठ राजभाषा नोडल अधिकारी पुरस्कार योजना भी आरंभ की गई है जिसके अंतर्गत 5000/-रु. का नकद पुरस्कार प्रदान किया जाता है।
- संस्थान के अनेक अधिकारी व कर्मचारी देश की विभिन्न हिंदी संस्थाओं व भा.कृ.अनु.प. के कई संस्थानों द्वारा आयोजित हिंदी वैज्ञानिक संगोष्ठियों, कार्यशालाओं, सम्मेलनों आदि में भाग लेते हैं।
- उपर्युक्त सभी कार्य संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की देखरेख में किए जाते हैं, जो प्रत्येक तीन माह में बैठक आयोजित करके राजभाषा कार्यान्वयन में हुई प्रगति की समीक्षा करती है और हिंदी के उत्तरोतर कार्यान्वयन के लिए निर्णय लेती है। इन बैठकों में प्रत्येक संभाग/इकाई द्वारा हिंदी की प्रगति के संबंध में किए गए अभिनव प्रयोग की रिपोर्ट प्रस्तुत की जाती है।

हिंदी कार्यशालाओं का आयोजन (अक्तूबर से दिसंबर, 2019 तिमाही)

राजभाषा विभाग, भारत सरकार द्वारा राजभाषा कार्यान्वयन संबंधी कार्यक्रम में निर्धारित लक्ष्यों एवं संसदीय राजभाषा समिति को प्रदत्त आश्वासनों की प्रतिपूर्ति हेतु संस्थान के मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान संभाग में कार्यरत सभी वैज्ञानिक प्रशासनिक वर्ग के तकनीकी/अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए दिनांक 16 दिसंबर, 2019 को संभाग के अध्यक्ष डॉ. बी.एस द्विवेदी की अध्यक्षता में व संस्थान के हिंदी अनुभाग के सभी अधिकारियों/कर्मचारियों की उपस्थिति में एक दिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया गया। प्रारंभ में संभाग के अध्यक्ष द्वारा सभी उपस्थित जनों का स्वागत किया गया तत्पश्चात श्री केशव देव, उप निदेशक (रा.भा.) ने अतिथि वक्ता का संक्षिप्त परिचय व कार्यशाला की महत्वता के बारे में जानकारी दी। इस कार्यशाला का विषय ,"कार्यालयीन कार्यों में राजभाषा हिंदी के अनुप्रयोग" रखा गया था। कार्याशाला में व्याख्यान देने के लिए श्री सुरेन्द्र उनियाल, पूर्व उप निदेशक (रा.भा.), भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद को आमंत्रित किया गया था। जिन्होंने उक्त विषय से संबंधित जानकारी बहुत ही सरल और सहज भाषा में पी.पी.टी. के माध्यम से प्रदान की। कार्यशाला में संभाग के प्रशासनिक/वैज्ञानिक और तकनीकी वर्ग के अधिकारियों/कर्मचारियों ने भाग लिया।

उक्त कार्यशाला का उद्देश्य संभाग में कार्यरत सभी वैज्ञानिक/प्रशासनिक/तकनीकी वर्ग के अधिकारियों/कर्मचारियों में राजभाषा हिंदी के प्रयोग के दौरान आने वाली कठिनाइयों को दूर करने का प्रयास करना था। प्रतिभागियों ने कार्यशाला के लिए अपनी-अपनी प्रतिपुष्टियां भी दी। अंत में संभाग के राजभाषा नोडल अधिकारी डॉ. मोहम्मद अलीमुद्दीन खान, प्रधान वैज्ञानिक ने सभी संबंधितों के प्रति धन्यवाद ज्ञापित किया।

हिंदी कार्यशाला (जनवरी से मार्च 2020 की तिमाही)

पांच पूर्ण कार्यदिवसीय हिंदी टंकण प्रशिक्षण कार्यक्रम सह कार्यशाला का आयोजन:

संस्थान में दिनांक 02 मार्च से 06 मार्च 2020 तक एक पांच पूर्ण कार्यदिवसीय हिंदी टंकण प्रशिक्षण कार्यक्रम सह कार्यशाला का आयोजन किया गया। जिसमें संस्थान के सभी नवनियुक्त अवर क्षेणी लिपिकों को नामित किया गया था। इस प्रशिक्षण की कक्षाएं संस्थान के पुस्तकालय

संभाग के कंप्यूटर लैब में आयोजित की गई थी। प्रशिक्षण में सभी प्रतिभागियों को यूनिकोड में हिंदी टंकण प्रशिक्षण की जानकारी दी गई। यह प्रशिक्षण पूर्ण रूप से अभ्यास आधारित था, जिसमें सभी प्रतिभागियों को हिंदी टंकण संबंधी नियमों की जानकारी देने के साथ ही कंप्यूटर पर अभ्यास भी करवाया गया तथा अभ्यास के लिए सहायक पुस्तिकाएं भी प्रदान की गई। प्रशिक्षण हेतु राजभाषा विभाग, हिंदी शिक्षण योजना से श्रीमती आशा बजाज, सहायक निदेशक (टंकण) को आमंत्रित किया गया था जिन्होंने बड़े ही रुचि पूर्ण ढंग से यह प्रशिक्षण संपन्न करवाया। प्रशिक्षण के अंत में सभी प्रतिभागियों से राजभाषा विभाग के हिंदी प्रशिक्षण योजना के तहत टंकण परीक्षा हेतु फार्म भी भरवाए गए।

केंद्र सरकार के कार्यालयों पर लागु राजभाषा संबंधित नियम:

दिनांक 08 नवंबर, 2019 को आयोजित कार्यशाला में डॉ सुनील कुमार शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक और नामित नोडल अधिकारी (राजभाषा) ने 'केंद्र सरकार के कार्यालयों पर लागू राजभाषा सम्बंधित नियमों' पर व्यख्यान दिया। यह प्रस्तुतीकरण उप निदेशक (राजभाषा), भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा प्राप्त प्रेजेंटेशन के आधार पर तैयार किया गया था। सभी सात अधिकारियों और आठ कर्मचारियों ने उत्साह से भाग लिया। कार्यक्रम का संचालन डॉ राज वर्मा, प्रधान वैज्ञानिक द्वारा किया गया।

टमाटर के विषाणु रोगों के प्रबंधन पर राष्ट्र भाषा में संवाद

दिनांक 11 फ़रवरी, 2020 को एक हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया था। इस अवसर पर डॉ राज वर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, पुणे ने 'टमाटर के विषाणु रोगों के प्रबंधन' पर व्यख्यान दिया। कार्यशाला में सात अधिकारियों और 10 कर्मचारियों ने उत्साह से भाग लिया। डॉ के. चन्द्रशेखर, प्रधान वैज्ञानिक, ने धन्यवाद प्रस्ताव प्रस्तुत किया।

कार्यशाला के दृश्य

कार्यशाला के दृश्य

राजभाषा कार्यान्वयन उप-समिति की नियमित बैठकें।

केंद्र पर भाषा कार्यान्वयन उप-समिति की तिमाही बैठकों के आयोजन नियमित रूप से किया गया। इन बैठकों की रिपोर्ट को समय से मुख्यालय भेजा गया।

हिंदी संगोष्ठी

संस्थान के कृषि भौतिकी संभाग द्वारा दिनांक 6 मार्च 2020 को एक हिंदी संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इसमें डॉ. देवेंद्र चौबे, लेखक और शिक्षाविद, आचार्य, हिंदी भारतीय भाषाओं का केंद्र जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय का व्याख्यान हुआ। उन्होंने देश में हिंदी की स्थिति तथा उसके प्रयोग के महत्व पर प्रकाश डाला। संगोष्ठी में संस्थान के सभी अधिकारियों/कर्मचारियों के अलावा संस्थान के अन्य संभागों के लोगों ने भी भाग लिया।

संस्थान के बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग द्वारा आयोजित हिंदी चेतना मास।

बीज विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी संभाग के द्वारा हिंदी चेतना मास को मनाने के क्रम में हिंदी निबंध लेखन प्रतियोगिता का सफलतापूर्वक आयोजन 2019 में किया गया। सभी सफल प्रतिभागियों को नकद पुरस्कार के साथ साथ प्रशस्ति पत्र प्रदान किया गया। इस प्रतियोगिता में दो वर्ग बनाये गए थे, हिंदी एवं हिंदीतर वर्ग और दोनों वर्गों में बढ़ चढ़ कर विद्यार्थियों ने भाग लिया।

अध्यक्ष डॉ देवन्द्र कुमार यादव के द्वारा संबोधन

पुरस्कार वितरण समारोह का दृश्य

पुरस्कार व सम्मान

हिंदी चेतना मास 01 सितंबर से 30 सितंबर, 2019 के दौरान आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं में पुरस्कृत प्रतियोगी

क्र.स.	प्रतियोगिता में, विजयी प्रतिभागी का नाम व पदनाम	परिणाम	पुरस्कार राशि (रू.)
(1)	**काव्य पाठ प्रतियोगिता (02.09.2019)**		
1.	डॉ गिरिजेश सिंह महरा, वैज्ञानिक, कृषि प्रसार	प्रथम	2500/-
2.	सुश्री नीलम सहा.प्रशा.अधि., सुरक्षा अनुभाग, निदेशालय	द्वितीय	2000/-
3.	सुश्री सफलता रावत, अ.श्रे. लिपिक, का.-III अनुभाग, निदेशालय	तृतीय	1500/-
4.	सुश्री गीता सिंह, प्र.वै. सूक्ष्म जीव विज्ञान संभाग	प्रोत्साहन	600/-
5.	सुश्री नम्रता रावत, अवर श्रेणी लिपिक, स्ना. विद्यालय-II, निदेशालय	प्रोत्साहन	600/-
(2)	**टिप्पण एवं मसौदा लेखन (04.09.2019)**		
1.	श्री नरेश चंद्र बौड़ाई, सहायक स्नातकोत्तर विद्यालय-I	प्रथम	2500/-
2.	श्री अजय कुमार टंडन, स.वित्त एवं लेखा अधि. लेखा अनुभाग, निदेशालय	द्वितीय	2000/-
3.	श्री बलदेव राज, स.प्र.अ. का.III, निदेशालय	तृतीय	1500/-
4.	श्री अश्वनी कुमार, सहायक, का.- III, निदेशालय	प्रोत्साहन	600/-
5.	श्री रोहित यादव, सहायक सर्तकता अनुभाग, निदेशालय	प्रोत्साहन	600/-
(3)	**निबंध प्रतियोगिता (06.09.2019)**		
1.	डॉ. अल्का जोशी, वैज्ञानिक, खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग	प्रथम	2500/-
2.	सुश्री संतोष गौतम, स.प्र.अ. प्राप्ति एवं निर्गम अनुभाग, निदेशालय	द्वितीय	2000/-
3.	श्री कुमार नंद लाल, तकनीशियन, खा.वि.एवं फ.प्रौ. संभाग	तृतीय	1500/-
4.	डॉ. इंदु चोपड़ा, वैज्ञानिक, कृषि रसायन संभाग	प्रोत्साहन	600/-
5.	सुश्री गीता सिंह, प्र.वै., सूक्ष्म जीव विज्ञान संभाग	प्रोत्साहन	600/-

(4)	**आशुभाषण प्रतियोगिता (11.09.2019)**		
1.	श्री किशन सिंह, स.मु.त. अधि. कैटेट	प्रथम	2500/-
2.	सुश्री संतोष गौतम, स.प्र.अ. प्राप्ति एवं निर्गम अनुभाग, निदेशालय	द्वितीय	2000/-
3.	सुश्री नम्रता रावत, अवर श्रेणी लिपिक, स्ना. विद्यालय-II, निदेशालय	तृतीय	1500/-
4.	श्री आनंद विजय दुबे, व.त.अ. कैटेट	प्रोत्साहन	600/-
5.	डॉ. गिरिजेश सिंह महरा, वैज्ञानिक, कृषि प्रसार संभाग	प्रोत्साहन	600/-
(5)	**अनुवाद प्रतियोगिता (16.09.2019)**		
1.	श्री शशिकान्त सिन्हा, सहायक, जल प्रौ. केंद्र	प्रथम	2500/-
2.	डॉ. हरीश कुमार, स.मु.त. अधिकारी, एटिक	द्वितीय	2000/-
3.	डॉ. अतुल कुमार, प्रधान वैज्ञानिक, बी.वि. एवं प्रौ. संभाग	तृतीय	1500/-
4.	श्री विरम सिंह, सहायक, सं.कृ.प्रौ.केंद्र	प्रोत्साहन	600/-
5.	डॉ. वीरेन्द्र कुमार, व.त.अधिकारी, जल प्रौद्योगिकी केंद्र	प्रोत्साहन	600/-
(6)	**प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता (18.09.2019)**		
1.	श्री सुरेश चंद, व.त.अ. मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन वि. संभाग	प्रथम	2500/-
2.	डॉ. अतुल कुमार, प्रधान वैज्ञानिक, बी.वि. एवं प्रौ. संभाग	द्वितीय	2000/-
3.	डॉ. मनोज श्रीवास्तव, प्रधान वैज्ञानिक, सेस्करा संभाग	तृतीय	1500/-
4.	श्री हिमांशु शर्मा, सहायक, कीट विज्ञान संभाग	प्रोत्साहन	600/-
5.(i)	डॉ. हरीश कुमार, स.मु.त. अधिकारी, एटिक	प्रोत्साहन	300/
(ii)	श्री नरेश चंद्र बौड़ाई, सहायक स्नातकोत्तर विद्यालय-I	प्रोत्साहन	300/
(7)	**श्रुतलेख प्रतियोगिता (20.09.2019)**		
1.	श्री शशिकान्त सिन्हा, सहायक, जल प्रौ. केंद्र	प्रथम	2500/-
2.	सुश्री शिवानी चौधरी, सहायक, कार्मिक-5, निदेशालय	द्वितीय	2000/-
3.	डॉ. इंदु चोपड़ा, वैज्ञानिक, कृषि रसायन संभाग	तृतीय	1500/-
4.	सुश्री नैन्सी गुप्ता, अ.श्रे.लि., पादव कार्यिकी संभाग	प्रोत्साहन	600/-
5.	श्री संदीप कुमार, त.अधिकारी, बीज उत्पादन इकाई	प्रोत्साहन	600/-

(8)	**सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता (24.09.2019)**		
1.	श्री विनोद कुमार, कु.स.क. सं.नि.प्रशा. का व्यक्तिगत अनुभाग, निदेशालय	प्रथम	2500/-
2.	श्री राम बिलास साह, कु.स.कर्मचारी कृषि अभियांत्रिकी, संभाग	द्वितीय	2000/-
3.	श्री रोहित कुमार, कु.स. कर्म. विधि अनुभाग, निदेशालय	तृतीय	1500/-
4.	श्री विक्रम सिंह, कु.स. कर्मचारी, स्ना.विद्यालय स्कूल-II, निदेशालय	प्रोत्साहन	600/-
5.	श्री शत्रुघ्न सिंह, दैनिक वेतन भोगी, फोसू	प्रोत्साहन	600/-
(9)	**पावर प्वाइंट प्रतियोगिता (27.09.2019)**		
1.	डॉ. दिनेश कुमार, प्रधान वैज्ञा., सस्य विज्ञान संभाग	प्रथम	10000/-
2.	डॉ. दिनेश कुमार शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, सेस्करा संभाग	द्वितीय	7000/-
3.	डॉ. गिरिजेश सिंह महरा, वैज्ञानिक, कृषि प्रसार संभाग	तृतीय	5000/-
4.	डॉ. इंदु चोपड़ा, वैज्ञानिक, कृषि रसायन संभाग	चतुर्थ	3000/-
5.	श्री गोरधन गेना, तक. सहा., मृदा वि.एवं कृषि रसायन संभाग	पंचम	3000/-
(10)	**हिंदी टंकण प्रतियोगिता (30.09.2019)**		
1.	श्री चंदेश्वर कापर, सहायक, भंण्डार अनुभाग, निदेशालय	प्रथम	2500/-
2.	सुश्री मधुबाला, वरिष्ठ लिपिक, स्नातकोत्तर विद्यालय	द्वितीय	2000/-
3.	श्री आनंद विजय दुबे, व.त.अ. कैटेट	तृतीय	1500/-
4.	सुश्री विनीता, सहायक, पुस्तकालय सेवाए	प्रोत्साहन	600/-
5.	श्री रणवीर सिंह, व.त.अधिकारी, फोसू	प्रोत्साहन	600/-
(11)	**वाद-विवाद प्रतियोगिता (16.10.2019)**		
1.	सुश्री शिवानी चौधरी, सहायक, कार्मिक-5, निदेशालय	प्रथम	2500/-
2.	डॉ. अर्चना सिंह, प्रधान वैज्ञा., जैव रसायन संभाग	द्वितीय	2000/-
3.	सुश्री प्राची त्यागी, तकनीकी अधिकारी, जैव रसायन संभाग	तृतीय	1500/-
4.	डॉ. ओम प्रकाश, प्रधान वैज्ञा., कृषि प्रसार संभाग	प्रोत्साहन	600/-
5.	डॉ. दिनेश कुमार शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, सेस्करा संभाग	प्रोत्साहन	600/-

प्रो. एम एस स्वामीनाथन पुस्तकालय
Prof. M S SWAMINATHAN LIBRARY